18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उत्तर भारत में मराठा प्रभाव

(ऊपरी गंगा – यमुना दोआब के विशेष सन्दर्भ में)

चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

की

पी–एच0 डी0 उपाधि हेतु

प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

निर्देशक :

डॉ0 विघ्नेश कुमार

M.A., M.Phil. (Gold Medalist)
Ph.D. RES (Ex)

रीडर, इतिहास विभाग

मेरठ कॉलिज, मेरठ

शोधार्थी :

राजेन्द्र कुमार गुप्ता

M.A. (History), LL.B.

CERTIFICATE

This is to certify that this thesis entitled " 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उत्तर भारत में मराठा प्रभाव (ऊपरी गंगा–यमुना दोआब के विशेष सन्दर्भ में)" which is being submitted to C.C.S. University, Meerut by Rajendra Kumar Gupta for the degree of Doctor of Philosophy in the discipline of History is a bonafide research scholar. The research work carried out by him under my supervision and guidance and that the matter embodied in this thesis has not been submitted for the award of any degree, diploma , fellowship or membership etc. at any other university or institute. He has put up required attendance as per university rules.

Dr. Vighnesh Kumar
(Supervisor)

Date : 28.4.08

Place : Meerut

प्राक्कथन

ऐतिहासिक उथल–पुथल और राजनीतिक विक्षोभों के कारण 18वीं शताब्दी का आधुनिक भारतीय इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान है। ऐसा होना नितान्त स्वाभाविक है क्योंकि महान मुगल साम्राज्य के तीव्र विघटन से राजनीतिक प्रभाव क्षेत्र में जो शून्य उत्पन्न हुए उन्हें भरने के लिए स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर नये राजनीतिक घटक तीव्रता के साथ अस्तित्व में आये । इन घटकों के तीव्र आवेगों को पतनशील मुगल साम्राज्य सहन न कर सका और अन्ततः भारत का राजनीतिक परिदृश्य लगातार अस्थिरता की अवस्था में पहुँचता रहा।

औरंगज़ेब की मृत्यु के उपरान्त उत्तर मुगल शासकों का युग प्रारम्भ हुआ। इनमें राजनीतिक सूझ–बूझ एवं चारित्रिक दृढ़ता आदि उन गुणों का अभाव था जो किसी सुदृढ़ साम्राज्य के संचालन के लिये आवश्यक होते हैं। यद्यपि इनमें से कई ने कुछ अवसरों पर दृढ़ता का भी प्रर्दशन किया किन्तु वह कभी भी प्रर्याप्त नहीं कही जा सकती। फलतः भारतीय राजनीतिक क्षितिज पर तेजी से पेशवाओं के नेतृत्व में मराठा साम्राज्य का उदय हुआ। उत्तर भारत में क्रमशः पंजाब, भरतपुर के आस–पास का क्षेत्र और बुन्देलखण्ड इसी राजनीतिक शून्यता को भरने के लिये अस्तित्व में आये किन्तु ये उस महत्व के स्थान को प्राप्त नहीं कर सके जिसे मराठा–शक्ति ने पूर्णतया प्राप्त करलिया था।

मराठे एकमात्र नवोदित शक्ति थे जिनका स्वरूप अखिल भारतीय स्तर का था। उनका प्रभाव पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण सभी दिशाओ में व्याप्त

था। बंगाल से लेकर सिन्ध और अफगानिस्तान की सीमा तक मराठा–अश्व–सेना गतिशील थी। उत्तर में हिमालय की तराई से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक उन्हें राजनीतिक सत्ता में संवैधानिक भागीदारी प्राप्त थी।

पेशवा बाजीराव ने हिन्दु पद पादशाही के घोषित लक्ष्य को बड़ी प्रभावशीलता के साथ बढ़ाया। उसकी असामयिक मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र बालाजी बाजीराव ने इस प्रभाव में बढ़ोतरी की किन्तु अपने पिता की नीतियों से उसका अल्प विचलन समझा जा सकता है। इसी विचलन के कारण 1761 ई0 में पानीपत के तृतीय युद्ध में मराठों की निर्णायक घोर पराजय हुई। जिससे उत्तर भारत में मराठों की राजनीतिक प्रतिष्ठा का समूल अन्त हो गया था।

पेशवा बालाजी बाजीराव की 1761 में असामयिक मृत्यु के उपरान्त उसके मझले पुत्र माधवराव के नेतृत्व में मराठा–शक्ति अपने प्रभाव की पुनःस्थापना के लिए प्रयासरत रही और मराठे इस प्रयास में सफल भी हुए। जिन महान सेनापतियों के नेतृत्व में उन्हें यह सफलता मिली उनमें महादजी सिंधिया का नाम अग्रगण्य है। पेशवा माधवराव के असामयिक निधन के पश्चात् मराठा सरदारों क्रमशः महादजी सिंधिया, मल्हार राव होल्कर, अहिल्याबाई होल्कर तथा नाना फड़नवीस आदि योग्य नेताओं के कारण उत्तर भारत में मराठा प्रभाव अपने चरम उत्कर्ष तक पहुँचा। किन्तु अपनी एकजुटता के अभाव और पारस्परिक ईर्ष्या के प्रभाववश अन्ततः मराठा सरदार एक दूसरे से अलग–थलग पड़ गये। उक्त सेनापतियों और अधिकारियों के निधन के उपरान्त उनका पारस्परिक बिखराव छिपा न रह सका और अंग्रजों ने एक–एक करके उन्हें अपने प्रभाव में लेलिया।

इस प्रकार ऊपरी गंगा–यमुना दोआब, जो सिंधिया परिवार के नियन्त्रण में था, ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकार में चलागया। सत्ता का यह स्थानान्तरण 31 दिसम्बर, 1803 ई0 को ईस्ट इण्डिया कम्पनी और दौलतराव सिंधिया के मध्य हुई **सुरजी अंजन गाँव सन्धि** में मान्य एक धारा के अनुसार सम्पन्न हुआ।

इतिहासकारों ने उत्तर भारत में मराठा प्रभाव और इसकी स्थापना में उत्तरदायी कारकों को अभी तक न्यायसंगत स्थान प्रदान नहीं किया है जबकि ऊपरी गंगा–यमुना दोआब वह क्षेत्र है जो उत्तर मुगल काल में विशेष राजनीतिक विक्षोभों को उत्पन्न करने और उन्हें प्रभावी बनाने में अग्रगन्य रहा। इससे मुगल साम्राज्य की राजधानी दिल्ली सर्वाधिक प्रभावित होती रही। नादिरशाह और अहमदशाह अब्दाली के दिल्ली अभियानों में इसी क्षेत्र की विशेष भूमिका थी। अतः यह वही क्षेत्र है जिसने आक्रान्ताओं के रोष को बार–बार झेला। अतः ऊपरी गंगा–यमुना दोआब की रातनीतिक महत्ता तब और भी अधिक बढ़जाती है जब हम 18वीं शताब्दी के प्रसंग में इसका वस्तुपरक विश्लेषण करते हैं। 18वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध वास्तव में विस्मयकारी संघर्षों का कालखण्ड रहा था जिसने ऊपरी गंगा–यमुना दोआब के क्षेत्र को अत्याधिक तीव्रता के साथ प्रभावित किया। प्रस्तुत अध्ययन उसी के प्रभाव को रेखांकित करने का एक प्रयास है।

प्रस्तावित शोधप्रबन्ध का प्रस्तुतिकरण मेरे लिए असम्भव ही रहता यदि गुरुवर डॉ0 विघ्नेश कुमार त्यागी, रीडर इतिहास विभाग ,मेरठ कॉलिज, मेरठ का आशीर्वाद न मिला होता। उन्हीं के सुनियोजित मार्ग–दर्शन का परिणाम है कि

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध लिपिबद्ध होकर साकार होरहा है। अतः कृतज्ञता का प्रथम श्रद्धा सुमन उन्हीं के समक्ष अर्पित करते हुए मेरा मन प्रफुल्लित होरहा है।

प्रथम अध्याय में शोध प्रबन्ध की **भूमिका** है। इसमें ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र का भौगोलिक व ऐतिहासिक परिचय दियागया है।

द्वितीय अध्याय का शीर्षक **1748 में उत्तर भारत का राजनीतिक परिदृश्य और मराठे** है। इसके अन्तर्गत 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के प्रारम्भ में ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र की तत्कालीन राजनीतिक स्थिति और उसमें मराठों के प्रभाव का विश्लेषण कियागया है।

तृतीय अध्याय **उत्तर भारत में मराठा अभियान (1748–1760)** है इसके अन्तर्गत सन् 1748 से लेकर सन् 1760 के मध्य ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में मराठों द्वारा अपनी पैठ बनाने हेतु कियेगये सैनिक अभियानों का वर्णन और विश्लेषण कियागया है।

चतुर्थ अध्याय **ऊपरी दोआब की रणनीतिक महत्ता एवं पानीपत के तृतीय युद्ध में उत्तर भारत में मराठा प्रभाव का समूल अन्त** के अन्तर्गत मराठों द्वारा लड़े गये युद्ध का वस्तुपरक विश्लेषण कियागया है।

पंचम अध्याय का शीर्षक **उत्तर भारत में मराठा प्रभाव की पुनर्स्थापना : पेशवामाधव कालीन प्रयत्न एवं परिणाम(1761–72)** है। इसमें 14 जनवरी, 1761 को पानीपत के तृतीय युद्ध में अफगानों के हाथों मराठों की हार के पश्चात् पेशवा माधवराव द्वारा मराठा शक्ति को ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में

पुनः स्थापित करने के लिए कियेगये प्रयासों और इसके फलस्वरूप प्राप्त सफलता का विवेचन कियागया है।

षष्ठ अध्याय **उत्तर भारत में मराठा शक्ति का उतार–चढ़ाव एवं सैन्य सर्वोच्चता (1772–1784)** में ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में मराठों द्वारा पुनः सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने विषयक सामग्री का विश्लेषण कियागया है।

सप्तम् अध्याय **ऊपरी गंगा–यमुना दोआब में मराठा प्रशासन के स्मारक (1784–1800)** में मराठों द्वारा शक्ति सम्पन्न होने के पश्चात् ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में अनेक स्मारकों का निर्माण एवं जीर्ण–शीर्ण पड़े मन्दिरों की मरम्मत तथा मराठों के प्रशासन का वर्णन कियागया है।

अष्टम् व अन्तिम अध्याय में **निष्कर्ष** है। इसमें प्रथम अध्याय से लेकर सप्तम् अध्याय तक विवेचित साक्ष्यों का वस्तुपरक ढंग से वैज्ञानिक विश्लेषण कियागया है, ताकि जो भी निष्कर्ष प्राप्त हों, वे किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह से मुक्त रहें।

मुझे परम् श्रद्धेय **डॉ0 ए0 के0 मित्तल**, पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग, मेरठ कॉलिज मेरठ, **डॉ0 सुमंगल प्रकाश**, अध्यक्ष, इतिहास विभाग, मेरठ कॉलिज, मेरठ, **डॉ0 के0 डी0 शर्मा**, पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग, **प्रो0 गीता श्रीवास्तव**, पूर्व अध्यक्षा, इतिहास विभाग, चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, एवं **प्रो0 आर0 ऐस0 अग्रवाल**, अध्यक्ष, इतिहास विभाग, चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ का आशीर्वाद तथा मार्गदर्शन प्राप्त रहा है, जिसके लिए मैं उनके प्रति श्रद्धावनत हूँ।

मैं रासना डिग्री कॉलिज के अंशकालिक प्रवक्ता **डॉ0 मुदित कुमार** का हृदय से आभारी एवं ऋणी हूँ जिन के कठिन परिश्रम एवं सहयोग से मैं यह कार्य करपाया हूँ।

मैं **डा0 चन्द्रशेखर भारद्वाज**, प्रवक्ता, इतिहास विभाग, के0 वी0 पी0 जी0 कॉलिज, माछरा, मेरठ तथा **श्री निस्पन्द शर्मा** का हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने मुझे समय–समय पर अपने उपयोगी सुझाव प्रदान करके मेरी सहायता की।

मै कृतघ्नता का दोषी होऊँगा यदि मैं मेरठ कॉलेज, मेरठ के रसायन विभाग के सेवानिवृत रीडर **डॉ0 जगदीश प्रसाद**, Ph.D., D.Sc.(रसायन),साहित्य–महोपाध्याय (हिन्दी), D.Litt.(संस्कृत) के अमूल्य सुझावों के लिए कृतज्ञता व्यक्त न करूँ।

मैं उन सभी ग्रामीणजनों का आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर साक्षात्कारों में सम्बंधित जानकारी देकर मेरा ज्ञान बढ़ाया। साथ ही राष्ट्रीय अभीलेखागार, नई दिल्ली, राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली, चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ तथा मेरठ कॉलिज मेरठ के पुस्तकालय–अध्यक्ष व कर्मचारियों के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ।

प्रस्तुतकर्ता

(राजेन्द्र कुमार गुप्ता)

विषय सूची

अध्याय–1

भूमिका

अध्याय–1

भूमिका

आधुनिक भारत के इतिहास में 18वीं शताब्दी का स्वयं में एक विशिष्ट स्थान है। यह शताब्दी भारत में राजनीतिक उथल–पुथल के अलावा तेजी से बदलते राजनीतिक परिदृश्य के कारण भी रुचिकर है। यह कम महत्वपूर्ण नहीं है कि इसी शती में पश्चिमी जगत की श्वेत जातियों ने भारत भूमि पर पारस्परिक राजनीतिक और व्यापारिक प्रतिद्वन्द्विता के लिए जोर आजमाइश की। कर्नाटक युद्धों में आंग्ल–फ्रान्सीसी व्यापारिक व राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता की बहुत ही स्पष्ट झलक देखने को मिलती है। कालान्तर में बड़ी तेजी से अंग्रेजों ने फ्रांसीसियों को व्यापारिक और राजनीतिक मोर्चों पर पीछे धकेलदिया और इस प्रकार भारत के विदेश व्यापार पर अपना वर्चस्व स्थापित करने में महान सफलता अर्जित की।

ऐसा नहीं है कि फ्रांसीसियों को परास्त करने भर से अंग्रेजों को व्यापारिक हितों के लिए राजनीतिक प्रतिद्वन्दिता से अवकाश मिलगया हो। अंग्रेजों की धन लिप्सा ने उन्हें राज्य लिप्सा में भी संलग्न करदिया। सन् 1757 का **प्लासी–युद्ध** और उसके पश्चात् सन् 1764 में हुआ **बक्सर–युद्ध** उस श्रृंखला की प्रथम कड़ियाँ थीं। आगे चल कर ईस्ट इण्डिया कम्पनी को मराठों, मैसूर, निजाम–हैदराबाद आदि के साथ संघर्षरत रहनापड़ा। भारतीय शक्तियो में मराठे ही सर्वाधिक सामर्थ्यवान थे। अतः अंग्रेजों ने सदैव यह प्रयत्नकिया कि वे शेष दोनों

भारतीय शक्तियों को मराठों से मिलजाने से रोके रखें। समस्त आंग्ल कूटनीति कालखण्ड विशेष इसी केन्द्रीय प्रवृत्ति का द्योतक है।

विश्व के इतिहास में भारत का नाम एक ऐसे देश के रूप में गिना जाता है जिसकी सभ्यता और संस्कृति पुरातन काल से ही पर्याप्त समृद्ध रही है। भारतीय संस्कृति, सभ्यता और इतिहास के क्षेत्र में जिस भूखण्ड ने अनवरत रूप से अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहकिया है, निःसंदेह वह क्षेत्र उत्तर भारत का भू–भाग; है इसमें भी गंगा–यमुना का ऊपरी दोआब क्षेत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब की भौगोलिक सीमाओं में नवगठित उत्तराखण्ड प्रदेश के हरिद्वार जिले से लेकर उत्तर प्रदेश के क्रमशः सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बागपत, गाजियाबाद, गौतमबुद्धनगर, (नोएडा), बुलन्दशहर, अलीगढ़ नामक जिले आते हैं।(चित्र 1)। साथ ही मध्य गंगा यमुना दोआब क्षेत्र के क्रमशः हाथरस, मथुरा एवं आगरा आदि जिले के ऊपरी गंगा–यमुना दोआब के क्षेत्र से सटे हुए जिले मानेजाते हैं।

भौगोलिक रूप से ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र भारतवर्ष के उत्तर में स्थित है। इस क्षेत्र की पूर्व दिशा में उत्तर प्रदेश राज्य के बिजनौर, ज्योतिबा–फुले नगर (अमरोहा) और मुरादाबाद जिले, पश्चिम में हरियाणा प्रान्त, उत्तर में उत्तराखण्ड प्रदेश के देहरादून, टिहरी–गढ़वाल, पौड़ी–गढ़वाल जिलों के भू–भाग तथा दक्षिण दिशा में हाथरस, आगरा, मथुरा आदि जिले हैं। इस क्षेत्र की भूमि समतल है तथा इस क्षेत्र का ढलान उत्तर से दक्षिण की ओर है। इस क्षेत्र में कहीं

कहीं पर पहाड़ीनुमा मिटट्री के टीले हैं।

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र के पूर्व की ओर गंगा नदी तथा पश्चिम दिशा में यमुना नदी बहती है। गंगा और यमुना नदी के बीच का स्थान होने के कारण ही उक्त क्षेत्र को गंगा–यमुना दोआब का नाम दियागया है। **गंगा–यमुना नदियों** के अतिरिक्त इस क्षेत्र में **सोलानी नदी**, **हिंडन नदी**, **कृष्णा नदी**, **काली नदी**, **नीम नदी** आदि सहायक नदियाँ भी है। इनके अतिरिक्त इस दोआब क्षेत्र में अनेक बरसाती नाले भी हैं। नहरों में **ऊपरी गंग नहर**, **मध्य गंग–नहर** और **यमुना–नहर** भी हैं। उक्त सभी नहरों से इस क्षेत्र की पर्याप्त भूमि की सिंचाई कीजाती है। इन नदियों एवं नहरों के अतिरिक्त इस दोआब क्षेत्र में अनेक स्थायी एवं अस्थायी झीलें भी हैं। स्थायी झीलों में **खरोली**, **हसनपुर** और **मसूरी** की झीलें प्रमुख हैं।

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र की भूमि मुख्य रूप से चिकनी और बालू रेत मिश्रणवाली भूमि है। नदियों के खादर क्षेत्र में कल्लर, रेह या ऊसर भूमि भी है जो पहले बेकार अर्थात् अनुर्वर थी, किन्तु आजकल कृषि विज्ञान की प्रगति के कारण उक्त भूमि का उपयोग खेती के लिये कियाजारहा है जो बड़ी लाभप्रद सिद्ध होरही है।

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब की प्रमुख ऋतुएँ

1. **ग्रीष्म ऋतु** – ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में मार्च से जून तक ग्रीष्म ऋतु रहती है। इस समय तेज गर्मी पड़ती है और जून माह में अधिकतम तापमान

45–47^{0} से0 तक पहुँचजाता है। इस मौसम में गर्म हवाओं की आंधियाँ (लू) भी चलती हैं। तेज गर्मी के कारण इस मौसम में स्थायी वनस्पति बहुत कम होती है। केवल वृक्ष और झाड़ियाँ ही दिखाईदेती हैं।

2. **वर्षा ऋतु** – इस क्षेत्र में जुलाई से अक्टूबर तक वर्षा ऋतु रहती है। इस ऋतु में भी गर्मी पड़ती है। इस क्षेत्र में औसतन वार्षिक वर्षा करीब 750 मि0मी0 होती है जिसका लगभग 80 प्रतिशत भाग इन्हीं महीनों में होता है। पौधों के उगने और बढोत्तरी के लिए इस मौसम में सबसे उपयुक्त वातावरण बनारहता है।

3. **शरद ऋतु** – यहाँ कार्तिक से माघ (नवम्बर से फरवरी) तक शरद ऋतु रहती है। इस ऋतु में ठंड पड़ती है और कभी–कभी तापमान बर्फ के जमाव बिन्दु तक गिरजाता है। इस ऋतु में कभी–कभी घना कोहरा पड़ता है और हल्की वर्षा भी होजाती है। ठंडे वातावरण में पायेजानेवाले पौधे इस मौसम में उगते हैं।

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में स्थायी तथा अस्थायी दोनों प्रकार की वनस्पतियाँ पायीजाती हैं। बड़े तथा छोटे वृक्ष और झाड़ियाँ पायीजाती हैं। साधारणतः **वृक्षों** में आम, जामुन, अमरूद आदि फलदार वृक्षों के अलावा बबूल, सफेद एवं काली सिरिस, नीम, ढाक, सफेद बबूला, लसोड़ा, बरना, शीशम, बिस्तेंदू, देशी पपड़ी, पपड़ी, आल, काबुली कीकर, कुचना, दूधी, तार चरबी आदि पायेजाते हैं। **झाड़ियों** में साधारणतः बाँसा, हींस, कैर और झाड़बेरी पायीजाती हैं। झाऊ,

नदियों के किनारे बहुतायत में मिलता है। घास में दूब, दाब, सिरहु, बंसी, मूस, काँस, बनचरी, सींक आदि पायीजाती हैं।

अस्थायी वनस्पति में चिरचिटा, बरना, गसिया घास, पुनरबा, कसौंदी, पनवर, चकसु, चिलमिल, हुलहुल, कनकव्वा, गुलाठी, मोथा, कुन्दरा, दूधी, गुम्मा, कुलफा, बनतुलसा, सांथी, कासनी, नीलम, बुचबुचा, जंगली प्याजी, हिरन खुरी, चटरा–मटरा, गोबी, चंदोसी, खटमीठा, जंगली पालक, मुछमुछिया आदि प्रमुख हैं।

दलदली भूमि और **जल में पायेजानेवाले पौधों** में समुद्र सोख, नाली का साग, कमल, सिंघाड़ा आते हैं।

खाद्य उत्पादन में भी ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र का प्रदेश में प्रमुख स्थान है। उपजाऊ भूमि होने के कारण इसमें अधिकतर गन्ना, गेहूँ , धान , तिलहन व दलहन की फसलें उगायीजाती हैं। ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र की दो प्रमुख फसलें **रबी** और **खरीफ** हैं। रबी की फसल अक्टूबर में बोईजाती है और वह अप्रैल तक तैयार होजाती है। **रबी** की फसल में मुख्यतः गेहूँ, जौ, जई, चना, मटर, मसूर सरसों, तरा, अलसी, मूँगफली, हल्दी, तम्बाकू, मेथी, अदरक, धनिया, जीरा, सौंफ, अजवायन हैं। **खरीफ** की फसल वर्षा ऋतु में बोईजाती है और सर्दियों में काटीजाती है। इसमें धान, मक्का, बाजरा, ज्वार, ग्वार, अरहर, सेम, मोठ मूंग, उड़द, फराशबीन, बांकला, लोभिया, सन, कपास, पटसन, तिल आदि मुख्य फसलें हैं। गन्ना जनवरी से अप्रैल तक बोयाजाता है और अक्टूबर से फरवरी तक तैयारहोता है।

सब्जियों में भिंडी, टिंडा, कद्दू, लौकी, काली तोरी, घिया तौरी, करेला, चीडा, परवल, खरबूजा, कचरा, ककडी, तरबूज आदि ग्रीष्म ऋतु में और प्याज, लहसुन, चुकन्दर, फूलगोभी, बन्दगोभी, गांठगोभी, शलजम, बथुवा, गाजर, रतालु, सलाद, टमाटर मूली, आलू, पालक आदि सब्जियाँ सर्द ऋतु में पैदा की जाती हैं। अन्य ऋतुओं में जिमीकन्द, मिर्च, अरबी, सकरकन्द, बैंगन आदि उगायी जाती हैं।

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में अनेक अन्य **फलदार वृक्ष** उगाये जाते हैं। इनमें चीकू, बेल, शरीफा, कटहल, खड़ल, कमरख, पपीता, नारंगी, नींबू, चकोतरा, खटट्ा, आंवला, लौकाट, कैथ, अंजीर, फालसा, लीची, आम, खिरनी, शहतूत, केला, आड़ू , अलूचा, अनार, अमरूद, नाशपाती, जामुन और बेर प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त इस क्षेत्र में अंगूर, रसभरी और स्ट्राबरी भी पैदा की जाती हैं।

प्राचीन काल में ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र के अन्तर्गत कुरु प्रदेश अथवा कुरु जनपद का काफी भू–भाग आता था। कुरु जनपद की भूमि गंगा और यमुना की घाटियों के ऊपरी भाग में थी। इसकी राजधानी मेरठ के निकट गंगा के तटवर्ती **आसंदीवत** अथवा **हस्तिनापुर** थी। कालान्तर में पश्चिमी कुरु या कुरु जंगल की दूसरी राजधानी यमुना के तटवर्ती **इन्द्रप्रस्थ** होगयी थी। दिल्ली नगर इन्द्रप्रस्थ के भू–भाग पर ही अवस्थित है।

पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के द्वारा कुरु प्रदेश के विभिन्न स्थलों पर जो उत्खनन कार्य हुआ है, उसमें बहुत कुछ ऐसी सामग्री प्राप्त हुई हैं, जिन्होंने

इसका सम्बन्ध सिन्धु घाटी अथवा हड़प्पा सभ्यता से जोड़ दिया है। पुरातत्वविद् बी0बी0 लाल का कथन है कि इस क्षेत्र में सभ्यता के इतिहास का प्रारम्भ आर्यों के आगमन और वैदिक संस्कृति के उदय से भी बहुत अधिक पहले हुआ था। हस्तिनापुर में **उल्टा खेड़ा** अथवा **विदुर का टीला** के पुरातत्व सम्बन्धी उत्खननों से प्राचीन काल के ऐसे कतिपय अवशेष प्रकाश में आये हैं, जिन्हें विगत चार वर्षों में इस प्रदेश में एक सांस्कृतिक काल परम्परा का प्रमाण मानागया है।[1] इसी प्रकार स्थानीय लोगों में **परशुराम का खेड़ा** अथवा **भीम का टीला** नाम से प्रसिद्ध टीले के उत्खननों एवं अनुसंधानों से प्राचीन काल के ऐसे अवशेष प्राप्त हुए हैं, जिन्हें सिन्धु–घाटी की सभ्यता के हड़प्पावाले पक्ष से सम्बन्धित मानाजाता है और जो इस क्षेत्र में इस सभ्यता का एक पड़ाव रहने के सम्बन्ध में इस टीले की ओर संकेत करते हैं।

सिन्धु घाटी की सभ्यता लगभग 13 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल वाले विस्तृत भू–भाग में विद्यमान रही, जो पश्चिम में **सुत्कागेनडोर** से लेकर पूर्व में **आलमगीरपुर (मेरठ)** तक 1600 किलोमीटर लम्बे व उत्तर में **माँडा** से लेकर दक्षिण में **दयामाबाद** तक 1100 किलोमीटर चौड़े भू–भाग में फैलीहुई थी। इसका प्रारम्भिक चरण लगभग 3500 ईसा पूर्व तथा अन्तिम चरण 1750 ईसा पूर्व निर्धारित

---

1. बी0बी0लाल''**एक्सकेवेशन्स ऐट हस्तिनापुर ऐण्ड अदर एक्सप्लोरेशन्स इन दी अपर–गंगा ऐण्ड सतलज बेसिन 1950–52**'',ऐन्शिएण्ट इण्डिया, (भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण का बुलेटिन) संख्या 10–11, पृ0 8–9 (1954–55)

कियागया है। इस सभ्यता का पूर्वी स्थल आलमगीरपुर मेरठ मण्डल मुख्यालय से लगभग 25 किलोमीटर पश्चिम में स्थित है। इसी कड़ी में मण्डल के बागपत जिले की बड़ौत तहसील मुख्यालय से 6 किलोमीटर पश्चिम में **सिनौली सादिकपुर** गाँव में हड़प्पा सभ्यता के पुरावशेष मिले हैं।[2]

सिनौली गाँव में हड़प्पा सभ्यता के पुरावशेष ढूँढ निकालने का श्रेय **डॉ0 विघ्नेश त्यागी** (सचिव, हस्तिनापुर शोध संस्थान, मेरठ एवं रीडर, इतिहास विभाग, मेरठ कॉलेज, मेरठ) को जाता है। वर्ष 2004 में एक्सकेवेशन के समय उन्हें सिनौली में मृदभांड मिले। डॉ0 विघ्नेश त्यागी ने इन्हें हड़प्पाकालीन बताया। समाचारपत्रों में भी इसे प्रमुखता के साथ छापागया। इससे सिनौली गाँव राष्ट्रीय स्तर पर अचानक प्रकाश में आगया। 2005 तक उनके नेतृत्व में मेरठ कॉलेज, मेरठ के छात्रों की टीम सिनौली गयी और खुदाई कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। मेरठ कॉलेज, मेरठ का शोध छात्र होने के नाते मुझे भी टीम का सदस्य बनकर सिनौली जाने का सौभाग्य प्राप्तहुआ। शोधग्रन्थ के लिखे जाने तक भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण को सिनौली से नरकंकाल, मृदभांड, कंकालों के हाथो में तांबे के कड़े, तांबे की तलवार, माइक्रो बीड्स (सैलखडी से हाथों से बने गेहूँ के आकार के अत्यन्त परिष्कृत) आदि प्राप्तहोचुके हैं।

आलमगीरपुर व सिनौली ग्रामों से सिन्धु सभ्यता के अवशेषों की

---

2. सिनौली में उत्खनन, एक विश्लेषण, डॉ0 विघ्नेश कुमार का लेख , मुख पृष्ठ, दैनिक जागरण, मेरठ, 25 सितम्बर, 2005।

खोज ने ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र के इतिहास को आज से 4000 साल पीछे तक पहुँचादिया है। इस क्षेत्र का महत्व तब और भी अधिक बढ़जाता है जब हम पाते हैं कि गंगा–यमुना के बीच स्थित यह क्षेत्र हड़प्पा काल से लेकर आज तक इतिहास के प्रत्येक कालखण्ड में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका सतत रूप से निभाता चलाआरहा है।[3]

भारतीय इतिहास के स्रोतों को जानने में प्राचीन बौद्ध साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। कुछ प्रमुख बौद्ध ग्रन्थों में भगवान बुद्ध के विषय में यह विवरण मिलता है कि बुद्ध ने हस्तिनापुर में पदार्पणकिया था। बुद्ध के काल में इस क्षेत्र का एक प्रमुख स्थान मेरठ शहर भी था इसके स्वरूप के विषय में साहित्यिक स्रोत हमारी कोई सहायता नहीं करते तथापि पुरा सामग्री मेरठ और उसके आस–पास के क्षेत्र में मानव बस्ती होना सिद्ध करती है। मेरठ के कोतवाली व जामा मस्जिद के निकटवर्ती भू–भाग पर इमारतें बनजाने से वहाँ पुरातात्त्विक उत्खनन सम्भव नहीं है अन्यथा मेरठ की तत्कालीन स्थिति पर व्यापक प्रकाश पड़ सकता था। बुलन्दशहर जिले के **बुधौ** नामक ग्राम के विषय में यह अनुश्रुति चली आरही है कि भगवान बुद्ध ने वहाँ विश्राम किया था। जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान् महावीर के हस्तिनापुर आगमन के उल्लेख मिलते हैं।[4]

फूहरर महोदय का मत है कि मेरठ महाभारत काल में भी हस्तिनापुर

---

3. डॉ0 विघ्नेश कुमार (सं0) : **मेरठ के पाँच हजार वर्ष**, हस्तिनापुर रिसर्च इंस्टीट्यूट, मेरठ,1996, पृ0 4।
4. जगदीश चन्द जैन : **भारत के प्राचीन** तीर्थ ,पृ0 5 ।

महानगर के अन्तर्गत एक उपनगर था।[5] ईसा पूर्व चौथी शताब्दी के मध्य में, सम्भवतया नन्द सम्राट महापद्म के काल में, हस्तिनापुर के कुरु वंश को पराजित कर कुरु राज्य को नन्द साम्राज्य में मिलालियागया था।[6] हस्तिनापुर से मिलने वाली नन्दवंश की आहत मुद्राएँ भी इसी तथ्य की पुष्टिकरती हैं। नन्द वंश की समाप्ति पर मेरठ का भू–भाग **चन्द्रगुप्त मौर्य** के अधीन होगया। चन्द्रगुप्त मौर्य की मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र बिन्दुसार सम्राट बना। बिन्दुसार के शासनकाल में हस्तिनापुर में भीषण अग्निकाण्ड हुआ[7] जिससे यह समूचा नगर जलकर राख होगया।[8] अग्नि द्वारा इस प्रकार नष्ट हो जानेपर ही सम्भवतः शासकीय दृष्टि से हस्तिनापुर की जगह **मेरठ** को स्थान मिला।[9] बिन्दुसार की मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र अशोक महान सिंहासन पर बैठा। अशोक के राज्यकाल में मेरठ का महत्व कई गुना बढ़ाहुआ लगता है। इसका शासनकाल लगभग ईसा पूर्व 373 से 236 ईसा पूर्व तक रहा। अशोक ने अपने राज्य–आरोहण के 26वें वर्ष में मेरठ में अपना स्तम्भलेख स्थापित कराया।[10] मेरठ के नगरीय क्षेत्र से मौर्यकालीन पकीहुई ईंटे मिली हैं।[11] यहाँ के विभिन्न स्थलों से नन्द वंश तथा

---

5. फूहरर : **दि मान्युमेन्टल एन्टीक्वीटीज़ ऐण्ड इन्सक्रिप्शन्स इन दि नॉर्थ वेस्टर्न प्रोविंसिज ऑफ़ आगरा ऐण्ड अवध** , इलाहाबाद (1891) पृ0 10 ।
6. **दि हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ़ दि इण्डियन पीपुल**, जिल्द II, पृ0 32–33 ।
   ए कम्प्रिहैन्सिव हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया जिल्द , II, पृ0 5, 131–132 ।
   राय चौधरी : **पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया** , छठा संस्करण, पृ0 12, 13 ।
7. बी0बी0लाल, पूर्वोक्त, 17,22 ।
8. वही।
9. **दि हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ़ इण्डियन** पीपुल, पूर्वोक्त, पृ0 71, 72, 78 ।
10. डी0सी0 सरकार : **इन्सक्रिप्शन्स** ऑफ़ अशोक, दिल्ली, 1957, पृ0 20,67–78 ।
11. विघ्नेश कुमार : पूर्वोक्त पृ0 6 ।

मौर्य वंश की आहत मुद्राएँ भी प्राप्तहुई हैं।

लगभग 180 ई0 पू0 में मौर्य वंश के अन्तिम सम्राट बृहद्रथ को उसके सेनापति पुष्यमित्र ने उस समय मारडाला, जब वह सेना का निरीक्षण कर रहा था। उसने मगध में जिस राजवंश की नींव डाली, इतिहास में उसे **शुंगवंश** के नाम से जानाजाता है। मेरठ के आस–पास के इलाके में शुंगकालीन पुरावशेष समय–समय पर मिलतेरहे हैं।

प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व के मध्य में मेरठ का क्षेत्र एक युद्धप्रिय जाति के अधीन था।[12] यह जाति **यौधेय** नाम से प्रसिद्ध थी। हस्तिनापुर के उत्खनन से यौधेयों की 6 मुद्राएँ मिली हैं।[13] मुद्राओं पर वृषभ व हाथी की आकृतियाँ बनी हैं।[14] यौधेयों की प्रारम्भिक मुद्राएँ यही मानीजाती हैं।[15] इनका काल ईसवी सन् से बिल्कुल थोड़ा पूर्व या पश्चात् रखा जा सकता है।[16] इस समय इनका राज्य मेरठ से लेकर पूर्वी पंजाब तक विस्तृत था।[17] कालान्तर में यौधेयों को कुषाणों की शक्ति के आगे झुकनापड़ा।[18] कनिष्क के राज्यकाल में यौधेय पूर्ण रूप से कुषाणों के अधीन होगये।[19] हस्तिनापुर से कुषाण राजा वासुदेव द्वितीय की दस

---

12. बी0बी0 लाल : पूर्वोक्त, पृ0 101 ।
13. वही।
14. वही।
15. मेरठ डिस्ट्रिक्ट, **डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर** ऑफ़ इण्डिया , पृ0 29 ।
16. वही।
17. **उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर** , मेरठ, 1965, पृ0 29 ।
18. **दि हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ़ इण्डियन** पीपुल, जिल्द, II, पृ0 165–166 ।
    ए कम्प्रीहैन्सिव हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया , जिल्द, II, पृ0 255 ।
19. वही।

ताम्र मुद्राएँ प्राप्तहुई हैं।[20] जो इस क्षेत्र पर कुषाणों के आधिपत्य की सूचक हैं।ऐसा लगता है कि वासुदेव द्वितीय के राज्य में यौधेय कुषाणों के अधीन थे। यद्यपि कुषाण वंश के शक्तिशाली राजाओं के सामने यौधेय अपनी स्वतंत्र सत्ता नहीं रख सके, किन्तु तीसरी शताब्दी में उन्होंने कुषाणों की अधीनता अस्वीकार करदी। इस युद्ध प्रिय जाति ने तृतीय शताब्दी में मेरठ से लेकर पूर्वी पंजाब तक का भूभाग कुषाणों से मुक्त करालिया[21] और पुनः इस पर अपना शासन स्थापित किया। इस क्षेत्र में मिलनेवाले यौधेयों के सिक्के इसी तथ्य का साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। **गिरनार अभिलेख** से पताचलता है कि यौधेयों से उसका युद्ध हुआ था।[22] लगभग चौथी शताब्दी तक यौधेयों ने इस क्षेत्र पर अपना वर्चस्व बनायेरखा। प्रतापी गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त ने अपने विजय अभियानों से साम्राज्य को विस्तृतकिया। समुद्रगुप्त की **प्रयाग प्रशस्ति** में हरिषेण ने यौधेयों की गणना पश्चिमी सीमान्त प्रदेश की जातियों में की है। यह निम्न प्रकार है[23] :

मालव, आर्जुनायन, यौधेय, माद्रक आभीर, प्रार्जुन, सनकानिक, काक तथा खरपारिक आदि।

इन सब राजाओं ने समुद्रगुप्त की अधीनता स्वीकार की। यौधेयों को

---

20. बी0बी0 लाल : पूर्वोक्त, पृ0–8,9 ।
21. **दि हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ़ दि** इण्डियन पीपुल, पृ0 166, 168 तथा ए कम्पलीट हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जिल्द II .
22. एपि0 इण्डि0, जिल्द, III, पृ0 44–77, 249, 255 ।
23. **प्रयाग स्तम्भ लेख** ।

अधीनस्थ बनाकर समुद्रगुप्त ने इस क्षेत्र को गुप्त साम्राज्य का अंग बनालिया। पुरावशेष भी इसी तथ्य की पुष्टि करते हैं। यहाँ विभिन्न स्थलों से गुप्तकालीन मुद्राएँ व मण्मूर्तियाँ मिली हैं। उस काल में प्रयाग से लेकर हरिद्वार तक गंगा–यमुना के बीच का प्रदेश **अन्तर्वेदी विषय** कहलाता था। स्कन्दगुप्त ने 466 ई0 में सर्वनाग नामक नाग सरदार को **अन्तर्वेदी विषय** का गवर्नर (विषयपति) नियुक्तकिया था।[24] मेरठ मण्डल के बुलन्दशहर जिले के ग्राम इन्दौर से प्राप्त **ताम्रपत्र** से इनकी पुष्टि होती है जिस पर तैल व्यवसायियों की श्रेणी का वर्णन भी उत्कीर्ण है।

गुप्त सम्राट स्कन्दगुप्त के राज्यकाल में ही हूणों ने भारत पर आक्रमण करना प्रारम्भ करदिया था किन्तु लगभग 475 ई0 में जब हूण राज्य के सिंहासन पर **तोरमाण** आसीनहुआ तो हूणों का प्रभाव क्रमशः बढ़नेलगा। तोरमाण के शासनकाल में मेरठ उसकी राज्य सीमाओं के अन्तर्गत था। एक बार मेरठ से तोरमाण की मुद्राएँ मिली थीं।[25]

तोरमाण की मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र **मिहिरकुल** हूण साम्राज्य का अधिपति बना। मिहिरकुल के काल में भी यह क्षेत्र हूणों के अधीन रहा। एक बार मेरठ में शेरगढ़ी के समीप तोरमाण का सिक्का भी मिला था।[26]

---

24. **इन्दौर ताम्रपत्र** ।
25. विघ्नेश कुमार एवं दीपक सिंघल : मेरठ मण्डल का **स्वर्णिम** अतीत, हस्तिनापुर शोध संस्थान, मेरठ, 2002।
26. वही।

छठी शताब्दी के प्रथमार्द्ध में इस क्षेत्र का भू–भाग कन्नौज के **मौखरी–वंश** के शासन में चलागया।[27] इस समय वे गुप्तों के सामन्त थे। किन्तु जैसे ही परवर्ती गुप्तों की शक्ति का ह्रास हुआ, मौखरियों ने अपनी स्वतंत्रता घोषित करदी। इस प्रकार छठी शताब्दी में यह क्षेत्र स्वतंत्र शासक के अधीन रहा।[28]

606 ई0 में हर्ष का राज्यारोहण कठिन परिस्थितियों में हुआ। उसके बड़े भाई **राज्यवर्धन** की शशांक द्वारा हत्या करदीगयी[29] और उसकी बहिन राज्यश्री अपने पति ग्रहवर्मा की हत्या के पश्चात् आत्मदाह करने के लिए जंगलों में चली गयी थी।[30] हर्ष ने शशांक पर आक्रमण करने का भार सेनापति **भण्डी** को दिया और स्वयं राज्यश्री को ढूँढने के लिए चलपड़ा। विन्ध्याचल में पहुँच कर हर्ष ने राज्यश्री को जलती चिताग्नि में कूदने से बचालिया और उसे अपने साथ लिवालाया।

ह्वेनसांग ने लिखा है कि कन्नौज के राजनीतिज्ञों ने अपने नेता भण्डी की सलाह पर हर्ष से कन्नौज का राज्यभार स्वीकार करने के लिए निवेदन किया किन्तु हर्ष अपनी बहिन राज्यश्री के अधिकार की उपेक्षा नहीं करना चाहता था। अधिक आग्रह और परिस्थिति की गम्भीरता को देखते हुए हर्ष ने

---

27. वही।
28. वही।
29. बाणभट्ट : **हर्षचरित**– "यदि......निगौडां गां न करोपि.........।"
30. देव दवभूवं गते......... देवी राज्यश्री............. वार्तामश्रृणवम् – बाणभट्टहर्षचरितम्।

अवलोक्रितेश्वर बोधिसत्व से संकेत मांगा। बोधिसत्व ने उसे राज्यभार ग्रहण करने की सलाह देतेहुए कहा कि वह कदापि **महाराज** की उपाधि धारण न करे। अतः हर्ष ने **कुमार** की उपाधि धारण करके कन्नौज का शासन संभाला।[31]

कन्नौज का शासन संभालते ही यह क्षेत्र भी हर्ष के शासन के अन्तर्गत आगया क्योंकि यहाँ पर पहले से ही मौखरी वंश का राज्य था।

648 ई0 में सम्राट हर्ष की मृत्यु के उपरान्त यशोवर्मन नामक कन्नौज नरेश ने अपनी शक्ति द्वारा उत्तरी भारत में राजनीतिक स्थिरता उत्पन्न की। उसके राज्य में यह क्षेत्र सम्मिलित था। आठवीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल में यह क्षेत्र यशोवर्मन के अधीन रहा। उसने अपने जीवनपर्यन्त यह क्षेत्र कन्नौज राज्य में मिलायेरखा किन्तु उसके उत्तराधिकारी अयोग्य सिद्ध हुए। वे यशोवर्मन के राज्य की रक्षा न कर सके।[32]

दिल्ली में लगभग आठवीं शताब्दी के मध्य में एक नए वंश का उदय हुआ। यह **तोमर** (राजपूत) वंश था। अबिहरन तोमर इस वंश का शक्तिशाली राजा हुआ।[33] इसने बरन (बुलन्दशहर) की स्थापना की।[34] किंवदन्ती इसे बरनावा का संस्थापक भी मानती है।[35] सम्भव है इसने बरनावे को पुनः बसाया हो। पूठ के निकट भदसाना नामक स्थान भी इसी वंश के दसवें राजा **भदपाल** द्वारा

---

31. देखें बाणभट्ट कृत हर्षचरित।
32. विघ्नेश कुमार (सं0) : **मेरठ के पाँच हजार वर्ष** , हस्तिनापुर शोध संस्थान, मेरठ,1996 पृ0 67–69 ।
33. वही।
34. वही।
35. वही।

बसाया हुआ माना जाता है।[36]

यशोवर्मन के उत्तराधिकारियों के पतन के उपरान्त कन्नौज **आयुध वंश** के अधीन रहा।[37] इस वंश के तीन राजा हुए जिनके नाम क्रमशः **व्रजायुध**, **इन्द्रायुध** और **चक्रायुध** थे।[38] कन्नौज पर इनका शासन लगभग 770 ई0 से लेकर त्रिराज्य संघर्ष में विजयी प्रतिहार राजा **नागभट्ट द्वितीय** के कन्नौज पर अधिकार होने तक रहा। इस अवधि में इस क्षेत्र का भू–भाग आयुध वंश के अधीन रहा।

त्रिराज्य संघर्ष में रत तीन प्रमुख शक्तियों प्रतिहार, पाल और राष्ट्रकूट में से **प्रतिहार** राजा **नागभट्ट द्वितीय** ने कन्नौज पर आक्रमण करदिया और चक्रायुध को परास्त करके कन्नौज को अपनी राजधानी बनाया।[39] इस प्रकार नवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशक में कन्नौज के साथ ही इस क्षेत्र पर भी प्रतिहार वंश का शासन स्थापित हो गया।[40]

नागभट्ट की मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र **रामभद्र** 833 ई0 में सिंहासनारूढ़ हुआ। इसका शासन केवल 3 वर्ष रहा। तत्पश्चात् इसका पुत्र **महिरभोज** राजा बना। इसकी **आदिवाराह** प्रकार की मुद्राएँ इस क्षेत्र में विभिन्न स्थानों से मिली हैं।[41] इस प्रकार की मुद्राएँ भोज की प्रारम्भिक मुद्राएँ मानीजाती

---

36. वही।
37. वही।
38. वही।
39. वही।
40. विघ्नेश कुमार एवं दीपक सिंघल : वही।
41. वही ।

हैं। भोज का राज्यकाल 836 ई0 से 889 ई0 तक रहा। **आदिवाराह** मुद्राओं से यह पता चलता है कि यह क्षेत्र उसके शासन में प्रारम्भिक काल से ही उसके अधीन था। यह सर्व विदित है कि रामभद्र के शासन में प्रतिहार–राज्य का कोई विस्तार नहीं हुआ। अतः यही न्यायसंगत है कि इस क्षेत्र पर भोज के तीन वर्ष पूर्व उसके पितामह का अधिकार था। अन्य साक्ष्य भी इसी तथ्य की पुष्टि करते हैं।

आज से लगभग चार दशक पहले अनायास ही मेरठ कॉलिज के प्रोफेसर वी0 आर0 चटर्जी और डॉ0 देवेन्द्र कौशिक ने मेरठ जिले के ग्राम फलावदा के एक टीले में प्रतिहार काल के एक मन्दिर में ध्वंसावशेषों की खोज की और उन्होंने यहाँ से तीन उत्कीर्णित प्रस्तर खण्ड प्राप्त किये।[42] मिहिरभोज की मृत्यु 889 ई0 के पश्चात् **महेन्द्रपाल, महेन्द्रपाल द्वितीय, देवपाल, विनायकपाल द्वितीय** एवं **विजयपाल** राजसिंहासन पर बैठे, किन्तु प्रतिहार शक्ति दिनों–दिन क्षीण होती जारही थी और अनेक सामन्त स्वतंत्र होगये। अब तक दिल्ली का तोमर वंश प्रतिहारों का सामन्त था किन्तु वह भी स्वतंत्र हो गया।[43] वह वंश दिल्ली के आस–पास के इलाके पर प्रतिहारों के सामन्तों के रूप में राज्य कर रहा था। दिल्ली पर तोमर वंश का लगभग स्वतंत्र राज्य अधिक न चल सका। शाकुम्भरी के चौहान वंश ने तोमर सरदार **सालवान** को हरादिया।[44] यह घटना 10वीं शताब्दी

---

42. प्रो0 वी0 आर0 चटर्जी उस समय मेरठ कॉलेज, मेरठ के इतिहास विभाग के अध्यक्ष थे।
43. विघ्नेश कुमार एवं दीपक सिंघल : वही।
44. वही।

के तृतीय चतुर्थांश में घटितहुई।

तोमर–चौहान संघर्ष का लाभ लेते हुए एक **डोर** या **भारवंशी** सरदार हरदत्त ने **मेरठ**, **कौल** और **बरन** पर अधिकार करलिया और इस प्रकार मेरठ से लेकर अलीगढ़ तक का भू–भाग उसके अधिकार में चलागया।[45] हरदत्त ने 983 ई0 में हापुड़ की स्थापना की जो उसी के नाम पर **हरपुर** कहलाया।[46] कालान्तर में उच्चारण दोष के आधार पर यह **हापुड़** कहा जाने लगा।[47] डोर राजा हरदत्त ने अपनी दूरदर्शिता का परिचय देते हुए मेरठ में एक अति सुदृढ़ किले का निर्माण करवाया।

दिल्ली पर अधिकार को लेकर तोमर–चौहान संघर्ष का निर्णायक मोड़ तब आया, जब **बिजौला अभिलेख** के अनुसार अजमेर और शाकुम्भरी के शासक **विग्रहराज चतुर्थ** (बीसलदेव) ने दिल्ली से तोमर वंश को उखाड़ फेंका।[48] इस बारहवीं शताब्दी के मध्य में दिल्ली पर चौहानवंश का शासन स्थापित होगया। दिल्ली पर अधिकार के साथ ही यह क्षेत्र भी उन्हीं के प्रभाव में चला गया। पृथ्वीराज के राज्यकाल में डोर राजाओं का प्रभाव क्षीणहुआ लगता है। पृथ्वीराज के सेनापति **गोविन्द गहलौत** ने डोर राज्य के दक्षिणी भाग पर

---

45. वही।
46. फूहरर : पूर्वोक्त, पृ0 10। एटकिन्सन :स्टेटिकल डिस्क्रिटिव ऐण्ड हिस्टोरिकल ऐकाउण्ट ऑफ़ दि नार्थ **वैस्टर्न प्राविंस ऑफ़ इण्डिया**, जिल्द III, पृ0 384 ।
47. वही।
48. **दि हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ़ इण्डियन** पीपुल, जिल्द IV, पृ0 111 ।

अपना अधिकार करलिया[49] और मेरठ के दक्षिणी स्थान **देहरा** में अपना प्रधान कार्यालय बनाया।[50] वर्तमान में देहरा गाजियाबाद जिले के अर्न्तगत आता है। कहाजाता है कि स्वयं पृथ्वीराज ने मेरठ मण्डल के दक्षिणी भाग **लोनी** में एक किले का निर्माण कराया था।[51] मेरठ पर डोर राजाओं का शासन सन् 1192 में मुहम्मद गोरी के हाथों तराइन के द्वितीय युद्ध में पृथ्वीराज के पराजित होने के कुछ माह बाद तक रहा। तराइन युद्ध के कुछ महीने पश्चात् मुहम्मद गोरी के प्रधान सेनापति गुलाम कुतुबउद्दीन ऐबक ने मेरठ पर आक्रमण करदिया और किले पर घेरा डालदिया।[52] इस विषय में हसन निज़ामी लिखता है –''.... और जब वह (कुतुबउद्दीन ऐबक) मीरात (मेरठ) पहुँचा.... देश भर के आश्रित सरदारों द्वारा भेजीगयी सेना उसके साथ सम्मिलित होगयी।[53] मेरठ के किले की रक्षा के लिए राजपूत सरदारों ने बड़ी बहादुरी से कुतुबउद्दीन का सामना किया।[54] किन्तु राजपूतों के प्रयास सफल न हो सके और मेरठ का इलाका तुर्कों के अधिकार में चलागया।[55] मेरठ की **जामा मस्जिद** आज भी कुतुबउद्दीन ऐबक के नाम से सम्बद्ध है जिसका विवरण **फूहरर** महोदय ने भी अपनी पुस्तक में दिया है।[56]

---

49. एटकिन्सन : पूर्वोक्त, पृ0 258–259, 265 ।
50. पूर्वोक्त, पृ0 258।
51. पूर्वोक्तः पृ0 400। फूहररः पूर्वोक्त पृ0 10 ।
52. वही।
53. इलियट एण्ड डाउसन : **दि हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया ऐज़ टोल्ड बाई इट्स ऑन हिस्टोरियन्स**, जिल्द II, पृ0 219 ।
54. मेरठ, **उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर**, 1965, पृ0 33 ।
55. **दि कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया** : पूर्वोक्त, पृ0–40–41 ।
56. फूहरर : पूर्वोक्त, पृ0 11 ।

सन् 1255 ई0 में मेरठ की जागीर **मलिक किशलीउलग खान** को प्राप्त हुई।[57] उसने विशेष रूप से अपना ध्येय मानतेहुए मेरठ के प्रमुख हिन्दू सरदारों का दमन किया। 13 जुलाई, 1259 ई0 को मेरठ में ही उसकी मृत्यु हो गयी। सन् 1283 ई0 में **गियासुद्दीन बलबन** ने गढ़मुक्तेश्वर में एक मस्जिद तामीर करायी जो **दरगाह शरीफ़** के नाम से जानी जाती है।[58] हस्तिनापुर के निकट खुदाई करने से बलबन का एक सिक्का भी प्राप्त हुआ है। अलाउददीन खिलजी के समय में यहाँ की जनता को आर्थिक दुर्दशा के दिन देखने पड़े, क्योंकि अपने सैनिक अभियानों के लिए खिलजी ने यहाँ की जनता से बहुत बड़े और भारी कर वसूलकिये थे। लेकिन मुहम्मद तुग़लक जो सन् 1325 ई0 में दिल्ली के तख्त पर बैठा, अलाउददीन से भी चार कदम आगे निकला। कर वसूलने में उसने जिस क्रूरता का सहारा लिया उसके कारण इस क्षेत्र के किसानों को अपनी खड़ी फसल को आग लगाकर तथा घर–बार छोड़कर भागजाने के लिए विवश होनापड़ा।[59] इतिहासकार **बरनी** के अनुसार, इन भारी करों ने यहाँ की जनता की कमर तोड़दी और उसे आर्थिक रूप से बर्बाद करदिया।[60] सन् 1364 ई0 में **फ़ीरोज़शाह तुगलक** शिकार खेलता हुआ मेरठ आया। उसने मेरठ शहर में एक भव्य स्तम्भ देखा। वास्तव में यह सम्राट अशोक का स्तम्भ था। सम्राट अशोक के स्तम्भ की ओर

---

57. पूर्वोक्त : पृ0 52 ।
58. फूहरर : पूर्वोक्त, पृ0 9 ।
59. इलियट एण्ड डाउसन : पूर्वोक्त, पृष्ठ 238 ।
60. ईश्वरी प्रसाद : **हिस्ट्री ऑफ़ मिडिवल इण्डिया** , पृ0 348 ।

उसका आकर्षण अत्यधिक बढ़गया और उसने उस स्तम्भ को दिल्ली लेजाने का आदेश देदिया। दिल्ली में वर्तमान कोटला ग्राउण्ड में इसे पुनः स्थापित कराया।[61] सन् 1390 ई0 में मेरठ के किले का उपयोग जेल के रूप में भी कियागया था जबकि फ़ीरोज़शाह तुग़लक ने अबूबकर को मेरठ में कैद करके रखा था जिसकी बाद में मेरठ के किले में ही मृत्यु हो गयी थी।[62] सन् 1398 ई0 में मेरठ को तैमूर के भंयकर आक्रमण का सामना करना पड़ा।[63] सन् 1414 ई0 से लेकर 1451 ई0 तक सैयद शासकों के काल में सारा दोआब और मेरठ मण्डल अस्थिरता की स्थिति में रहा।[64] सैयदों के काल के अन्तिम दिनों में मेरठ पर **दरिया खाँ लोदी** का शासन था।

लोदी शासकों के काल में यह क्षेत्र शान्तिपूर्ण स्थिति में रहा। किन्तु सन् 1526 ई0 में पानीपत के युद्ध के पश्चात् यह क्षेत्र बाबर के आधिपत्य में आ गया। सन् 1540 ई0 में कन्नौज के युद्ध में **शेरशाह सूरी** ने हुमायूँ को पराजित करके दिल्ली पर अपना अधिकार जमालिया।[65] इस प्रकार यह क्षेत्र स्वतः ही शेरशाह के आधिपत्य में आगया। सन् 1555–56 ई0 में जब हुमायूँ पुनः भारत लौटा और उसने पुनः दिल्ली को जीतलिया तब एक बार फिर यह क्षेत्र उसके अधिकार में आगया। इस बार हुमायूँ ने **अलीकुली खाँ** को मेरठ का गवर्नर

---

61. शम्से सिराज अफ़ीफ़ : **तारीख–ए–फ़ीरोज़शाही** , पृ0 126 ।
62. याहिया बिन अहमद सरहिन्दी : **तारीख–ए–मुबारकशाही** , रिजवी अनुवाद, भाग ब, पृ0 212 ।
63. ईश्वरी प्रसादः पूर्वोक्त, पृ0 348 ।
64. वही।
65. पूर्वोक्त, पृ0 38 ।

नियुक्त किया था।[66] मुग़ल सम्राट अकबर के शासनकाल में लगभग यह क्षेत्र दिल्ली सूबे का ही एक भाग बनादियागया था।[67] कहा जाता है कि **जलालाबाद** का नामकरण अकबर के नाम **जलालुद्दीन मुहम्मद** पर ही कियागया था।[68] अकबर के शासनकाल में मेरठ में ताँबे के सिक्कों की एक टकसाल भी स्थापित कीगयी। यहाँ की जनता का विश्वास है कि यह टकसाल वर्तमान पटेलनगर स्थित हिन्दी भवन के निकट रही होगी, क्योंकि वहाँ टकसाली वस्तुएँ समय-समय पर मिलती रही हैं। जहाँगीर के शासनकाल में जलालाबाद का प्रशासन इज़्ज़तख़ान के हाथों में था।[69] शाहजहाँ के शासनकाल में मेरठ उसके दरबारियों का प्रिय शिकारगाह था। ऐसे उल्लेख मिलते हैं कि वे लोग शिकार के लिए गंगा–खादर में आते थे। गंगा–खादर से आशय हस्तिनापुर के गंगा–खादर से है। **औरंगज़ेब** के समय में इस क्षेत्र के कई स्थानों का नामकरण उसके नाम पर कियागया। **औरंगशाहपुर**, **औरंगनगर**, **आलमगीरपुर** आदि सभी नाम उसी के नाम पर रखेगये हैं।[70] औरंगज़ेब के पश्चात् फ़रुखसियर के काल तक इस क्षेत्र में कोई महत्वपूर्ण घटना नहीं हुई।

फ़रुखासियर को गद्दी दिलाने में सैयद भाइयों **हुसैन अली** और **अब्दुल्ला**, जो मेरठ जिले के वर्तमान में मुजफ्फरनगर जिले के जानसठ कस्बे के

---

66. अबुल फ़जल : **दि अकबरनामा** , पृ0 322 ।
67. बदाँयूनी : **मुन्तख़ाब–उत–तवारीख़** , पृ0 26 ।
68. **तुजुक–ए– जहाँगीरी** , पृ0 88 ।
69. **गज़ेटियर ऑफ़ इण्डिया** , मेरठ, पृ0 40 ।
70. पूर्वोक्त, पृ0 41 ।

निवासी थे, ने पर्याप्त सहयोगदिया था। फलतः कृतज्ञता स्वरूप फ़रुखसियर ने इन दोनों भाइयों को मेरठ के उत्तरी भाग में जागीरें बख्शी थीं।[71]

सन् 1740 ई0 में मुहम्मदशाह के वजीर **गाज़ीउद्दीन** ने **गाजियाबाद** की स्थापना की, जो उस समय **गाज़ीउद्दीननगर** के नाम से जाना जाता था।[72] मुगलों के कमजोर पड़जाने पर यह क्षेत्र मराठों, रुहेलों, सिक्खों और भरतपुर के जाटों व गूजरों के आक्रमणों का अखाड़ा बनगया। सन् 1748 ई0 में मुहम्मदशाह के बाद अहमदशाह दिल्ली के तख्त पर बैठा। इसी बीच अहमदशाह अब्दाली ने पंजाब और दिल्ली की ओर आक्रमण आरम्भ करदिया। इसी बीच अहमदशाह अब्दाली ने भारत पर आक्रमण करने शुरू करदिये। अपने चौथे आक्रमण के समय अब्दाली ने मुगल बादशाह को मजबूर करदिया कि वह नजीब खाँ रुहेला को अपना मीरबख्शी बनाये और मेरठ को उसी के अधिकार में देदे।[73] सन् 1757 ई0 में नजीब खाँ का टकराव मराठों के साथ हुआ। इस युद्ध में नजीब खाँ पराजित हुआ। विजेता मराठा नायक मल्हारराव होल्कर ने बागपत और बड़ौत से क्रमशः 20,000 और 17,000 रुपये का दण्ड वसूलकिया।[74] लेकिन उसके पीठ फेरते ही नजीब खाँ ने पुनः इन सभी स्थलों को अपने अधिकार में लेलिया। सन् 1759 ई0 में एक बार फिर मराठों ने दत्ताजी सिंधिया के नेतृत्व में लोनी और उसके

---

71. वही।
72. वही।
73. जदुनाथ सरकार : **फॉल ऑफ़ दि मुग़ल एम्पायर** , जिल्द– II पृ0 99–110 ।
74. **गज़ेटियर ऑफ़ इण्डिया** : मेरठ, पृ0 43 ।

आस–पास के भागों में आक्रमण किया। किले पर कब्जा करने के प्रयत्न के दौरान मराठा सेना की रसद समाप्त होगयी। इनमें से लगभग 10,000 सैनिको ने तब गाजियाबाद की ओर कूच करदिया। वहाँ के स्थानीय निवासियों द्वारा प्रतिरोध कियेजाने पर ये लोग डासना की ओर मुड़गये और वहाँ लूटपाट की।

20 अक्टूबर, सन् 1760 ई0 को मराठा सरदार **गोविन्द पन्त** पर अहमदशाह अब्दाली की सेनाओं ने अचानक आक्रमण करदिया और मेरठ में भारी लूटपाट की।[75] सन् 1760 ई0 के अन्त में अहमदशाह अब्दाली ने बागपत के पास से यमुना पार करके पानीपत की ओर कूचकिया जहाँ मराठों से उसका भयंकरयुद्ध हुआ और जिसमें मराठों की पराजय हुई।[76] इस प्रकार इस क्षेत्र का बहुत बड़ा भाग **नजीबुद्दौला** के अधीन हो गया।[77] **सूरजमल** जाट के पास भी मेरठ मण्डल के कुछ भाग थे लेकिन दिसम्बर, 1763 ई0 में रुहेलों ने अचानक आक्रमण करके हिण्डन नदी के किनारे उसकी हत्या कर दी ।[78] इस घटना के साथ ही जाटों और रुहेलों में दुश्मनी प्रारम्भ हो गई जिसमें जाटों को पराजयवश मेरठ छोड़कर भागना पड़ा।[79] फिर भी लगभग एक दशक तक मेरठ पर सिक्खों और जाटों के आक्रमणों का दबाव बना रहा और उनकी लूटपाट का दौर चलतारहा। सर जदुनाथ सरकार का कथन है कि "अक्टूबर, 1765 ई0 के अंत में सिक्खों का

---

75. के0 आर0 कानूनगो : **हिस्ट्री ऑफ़ जाट्स** , पृ0 118 ।
76. **गज़ेटियर ऑफ़ इण्डिया** , पूर्वोक्त, पृ0 43 ।
77. वही।
78. वही।
79. जदुनाथ सरकार : पूर्वोक्त, पृ0 211 ।

जत्था जहाँ एक ओर सहारनपुर की तरफ आक्रमण करनेगया, वहीं लगभग 25,000 घुड़सवारों का दूसरा जत्था जस्सा सिंह, तारा सिंह और शाम सिंह के नेतृत्व में नजीब खाँ के इलाके पर भी आक्रमण करने गया था। वहाँ से धन वसूल करके वह खरखौदा की ओर बढ़गया। सन् 1766 ई0 में सिक्ख आक्रमणकारी दोआब में पुनः आये। उन्होंने मसूरी और कुताना तक आक्रमण किया। जाटों ने भी सिक्खों का साथदिया और नजीब खाँ को करारी हार का मुँह देखनापड़ा। गाजियाबाद और डासना के परगने जाट नेता जवाहर सिंह ने इमादुल मुल्क को सौंप दिये।'' [80]

पानीपत के युद्ध में भयंकर पराजय के लगभग एक दशक बाद मराठे फिर से शक्तिशाली होगये और उन्होंने भारतवर्ष में पुनः अपना प्रभाव बढ़ाना प्रारम्भ करदिया। इसी बीच नजीबुद्दौला की मृत्यु हो गयी।[81] इस समय मराठों ने मुगल सम्राट **शाहआलम** को अंग्रेजों के प्रभाव से निकालकर उसे दिल्ली के तख्त की पुनः प्राप्ति करने में सहायता दी। साथ ही शाहआलम और महादजी सिंधिया के बीच एक सन्धि हुई जिसके अन्तर्गत मेरठ मण्डल में 15 लाख रुपये के वार्षिक लगानवाला भाग मराठों को देने का वादा कियागया था।[82] किन्तु कुछ समय पश्चात् ही नजफखान और शुजाउद्दौला ने अंग्रेजों की मदद से मराठों को मेरठ

---

80. **गज़टियर ऑफ़ इण्डिया** : पूर्वोक्त, पृ0 43 ।
81. वही।
82. ऐच0 जी0 कीन : **सिंधिया अदरवाइज़** माधोजी पटेल , पृ0 87 ।

से खदेड़दिया।[83] सन् 1774 ई0 में मेरठ पर नजफखान का अधिकार हो गया।[84] दिसम्बर सन् 1783 में सिक्खों ने एक बार फिर से मेरठ पर आक्रमण किया। इस बार इनकी संख्या 30–35 हजार के लगभग थी। जाब्ता खाँ ने इस बार सिक्खों का मुकाबलाकिया लेकिन उसकी पराजय हुई। सिक्ख मेरठ की ओर बढआये। यहाँ उनको जैनुल आबिदीन की भी मदद मिली। मेरठ में शहजादा सुलेमान शिकोह, नजफखान आदि ने सिक्खों को करारी मातदी। वे मेरठ में सूरजकुण्ड नामक स्थान पर रुके थे। यहीं उन्होंने फिर से मेरठ की जागीर जाब्ता खाँ को प्रदान करदी।[85] कुछ समय पश्चात् दिल्ली में पुनः राजनीतिक अराजकता फैली। शाह आलम निर्णय नहीं करपारहा था कि इस समय वह अंग्रेजों की सहायता ले या महादजी सिन्धिया की। अन्त में उसने महादजी सिन्धिया की सहायता लेने का निश्चय किया। उसने सिंधिया से एक गुप्त समझौता किया और सन् 1784 ई0 में सिंधिया उसका मीरबख्शी और रीजेण्ट बन गया। उसे दोआब का गवर्नर भी बनायागया था। मेरठ मण्ड़ल भी इसमें सम्मिलित था।[86] किन्तु जाब्ता खाँ का पुत्र गुलाम कादिर मीरबख्शी बनने का स्वप्न देखरहा था और उसने दोआब पर आक्रमण करदिया। उसने अपनी सेनाओं के साथ बागपत की ओर कूचकिया और फिर सरधना की ओर बढगया जहाँ उसका शाही सेना और मराठों से सामनाहुआ।

---

83. ए0 ऐल0 श्रीवास्तव : **शुजाउद्दौला** , जिल्द द्वितीय, पृ0 265–66 ।
84. **गज़ेटियर ऑफ़ इण्ड़िया** : पूर्वोक्त, पृ0 43 ।
85. वही।
86. **गज़ेटियर ऑफ़ इण्ड़िया** : पूर्वोक्त, पृ0 43 ।

इस समय सिंधिया दक्षिण भारत गयाहुआ था, गुलाम कादिर उसकी अनुपस्थिति का लाभ उठाना चाहता था। शाही सेनाएँ पराजित हुईं। अब, गुलाम कादिर 2000 रुहेलों के साथ दिल्ली की ओर बढ़गया। सम्राट को मजबूर होकर गुलाम कादिर को अपना मीरबख्शी स्वीकार करनापड़ा।[87] अलीगढ़ से सहारनपुर तक की जागीर उसे प्रदान की गयी। इस तरह कुछ समय के लिए दिल्ली अफगानों के प्रभाव में आगयी। महादजी सिंधिया भी इस समय तक पर्याप्त शक्तिशाली होगया था, उसने भी अब दिल्ली की ओर कूचकिया। उसके कूच का समाचार पाकर गुलाम कादिर भागकर अलीगढ़ पहुँचा लेकिन मराठों ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। वह मराठों से बचने के लिये इधर–उधर भागतारहा और अन्त में मेरठ के किले में आकर मराठों ने घेरा डालदिया। कादिर यहाँ से भागकर बामनौली गाँव में जाछिपा। मराठों ने बामनौली गाँव का भी घेरा डालदिया और उसे गिरफ्तार करलिया। मराठों ने गुलाम कादिर की आँखें निकालकर सम्राट के पास भेजदीं। इस प्रकार एक बार फिर सन् 1789 ई0 में मेरठ पर सिंधिया का अधिकार हो गया। माधवराव सिंधिया की पुत्री बालाबाई को भी 39 गाँवो की एक जागीर मेरठ में प्रदान की गयी थी। ये गाँव **मेरठ, जलालाबाद** और **सरधना** परगनों के अन्तर्गत आते थे।[88] 30 दिसम्बर, सन् 1803 ई0 को **सुरजीअंजन गाँव की सन्धि** के अर्न्तगत दौलतराव सिंधिया ने मेरठ जिला ईस्ट इण्डिया कम्पनी को

---

87. पूर्वोक्त पृ0 47 ।
88. वही।

सौंप दिया।[89] इस समय सरधना मेरठ के अन्तर्गत न होकर एक स्वतंत्र इकाई था[90] जिस पर बेगम समरु का शासन था। बेगम समरु, वाल्टर रीनार्ड समरु की भारतीय पत्नी थी, जिसे मुग़ल सम्राट ने रीनार्ड की मृत्यु के उपरान्त उसकी जागीर की स्वामिनी बनादिया था। सहारनपुर बावनी में बावन परगनों का प्रशासन तन्त्र संचालितहोता था। लसबाड़ी युद्ध के एक मास उपरान्त 30 दिसम्बर 1803 को सिंधिया और कम्पनी के बीच **सुरजीअंजन गाँव की सन्धि** हुई जिसके अनुसार गंगा और यमुना के बीच स्थित समस्त मराठा भू–भाग कम्पनी के अधिकार में चलेगये। यह नवीन भू–भाग तीन भागों में विभाजित करके इटावा, मुरादाबाद और अलीगढ़ के साथ सम्बद्ध कर दियागया। मिस्टर लेसेस्टर, कलेक्टर मुरादाबाद, ने ऊपरी दोआब का कार्यभार संभाला, जिसमें मेरठ मण्डल का अधिकांश भू–भाग सम्मिलित था। 1818 ई0 तक यह भू–भाग सहारनपुर जिले के अन्तर्गत रहा, 1818 ई0 में ही मण्डल का मेरठ जिला अस्तित्व में आया। 1824 में मेरठ जिले के काफी बड़े हिस्से को अलग करके बुलन्दशहर नामक नया जिला बनायागया।[91] 4 नवम्बर, 1976 को मेरठ जिले की गाजियाबाद तहसील सहित कुछ अन्य भाग को मिलाकर गाजियाबाद नया जिला बनायागया, तत्पश्चात् पुनः 18 जुलाई, 1997 को इसके काफी बड़े हिस्से को अलग करके बागपत को नया जिला बनायागया।

---

89. मुग़ल सम्राट ने 1778 ई0 में सरधना की जागीर वाल्टर रिनार्ड समरु को बख्श दी थी।
90. G.S. Sardesai : **New History of the Marathas**. 3 Vol., Bombay, 1957.
91. E.T.Atkinson : op. cit.

आधुनिक विश्व के इतिहास में महान मुग़ल साम्राज्य के पतन का अध्ययन स्वयं में महत्वपूर्ण है। 18वीं शताब्दी के प्रथम दशक में औरंगजेब की मृत्यु (वर्ष 1707 ई0) को मध्यकालीन भारतीय इतिहास का समापन बिन्दु मानाजाता है। इसके बाद प्रवृत्तियों में तीव्र परिवर्तन परिलक्षित हुए, जिनके आधार पर बाद के कालखण्ड के इतिहास को **आधुनिक भारतीय इतिहास** का नाम दियागया। औरंगजेब के पूर्वजों ने कई अर्थों में महान मानेजानेवाले साम्राज्य को स्थापित करने एवं उसे बनाएरखने में दीर्घकालिक सफलताएँ अर्जित की थीं। स्वयं उसने भी लम्बे समय तक एक सुदीर्घ साम्राज्य को कायम रखा, यद्यपि उसके अन्तिम वर्ष अनवरत् संघर्षों तथा क्षेत्रीय स्तर के विद्रोहों का दमन करने में व्यतीतहुए। अनेक इतिहासकार मुग़ल साम्राज्य के पतन के लिए औरंगजेब को उत्तरदायी ठहराते हैं। उसकी कटट्रतापूर्ण धार्मिक नीति विद्वानों में वाद–विवाद का एक स्थाई बिन्दु रहा है।

17वीं शताब्दी के अन्तिम दशकों में मराठों की ओर से तीव्र एवं प्रभावकारी मुगल विरोध का जो सिलसिला आरम्भ हुआ, उसे मुग़ल साम्राज्य अन्ततः झेल न सका। तत्पश्चात् क्रमशः पंजाब, बुन्देलखण्ड और आगरा के निकटवर्ती इलाकों में भी संगठित मुग़ल विरोध का क्रम दिखायीपड़ा। प्रारम्भ में ये स्थानीय स्तर के विरोध थे, किन्तु शीघ्र ही वे क्षेत्रीय स्तर के सबल प्रतिरोध में परिणत होगये। इनके नायकों में महाराष्ट्र में **शिवाजी**, पंजाब में **गुरु गोविन्द सिंह**, बुन्देलखण्ड़ में **छत्रसाल** एवं ब्रज में **गोकला जाट** के नाम महत्वपूर्ण हैं।

अपने जीवनकाल में मुगल सम्राट औरंगजेब इनके प्रभाव को नष्ट करने में सफल न हो सका।

औरंगजेब कालीन इन मुगल विरोधी क्षेत्रीय शक्तियों में मराठे सर्वाधिक उल्लेखनीय हैं। मराठों की सफलता उनकी उत्कृष्ट सैन्य क्षमता पर निर्भर थी जिसे शिवाजी की मृत्यु के पश्चात् उनका उत्तराधिकारी सम्भाजी यथायोग्य रीति से स्थिर न रख सका, किन्तु कालान्तर में पेशवाओं ने उसे चिरस्थायी बनाने का प्रयत्न जारीरखा।[92] अन्ततः पेशवाओं के नेतृत्व में मराठों ने दक्षिण भारत में अपना प्रभुत्व स्थापित करने में सफलता प्राप्त की और तेजी से उन्होंने उत्तर भारत की राजनीति में प्रवेशकिया। इन कालखण्डों में राजपूत राजाओं ने मुगलों के प्रति प्रायः उदासीनता बनायेरखी। यह ऐसा कालखण्ड था जबकि तेजी से अपना प्रभाव बढ़ानेवाली शक्तियाँ तत्कालीन राजनीतिक घटनाक्रम को प्रभावित कररही थीं। उत्तर भारत में अपने प्रभाव में अभिवृद्धि करने हेतु मराठों के लिए यह आवश्यक था कि राजस्थान के राजपूत राज्यों एवं नवोदित भरतपुर के उदीयमान जाट राज्य से वे तदानुकूल सम्बन्ध स्थापित करते। इस क्रम में मराठों को इन क्षेत्रीय शक्तियों के साथ सहयोग एवं प्रतिरोध की नीतियाँ स्वीकार करनीपड़ीं । इन क्षेत्रीय शक्तियों के अतिरिक्त मराठों के लिये दिल्ली दरबार की दलगत राजनीति में कुछ प्रभावपूर्ण मनसबदारों का समर्थन प्राप्त करना

---

92. देंखें H.N.Sinha कृत **Rise of the Peshwas.**

अति आवश्यक था। ऐसा करके ही वे उत्तर भारत की राजनीति में अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति कर सकते थे। शिवाजी के समय से ही मराठों ने **हिन्दू पद पादशाही** और **हिन्दवी राज्य** की परिकल्पनाकी थी। इस ध्येय को प्राप्त करने के लिए उन्होंने यथासम्भव प्रयासकिया। 18वीं शताब्दी के दूसरे दशक से इसमें उन्हें पुनः सफलता मिलती– हुई दिखायीपड़ी। यद्यपि ताराबाई और शाहूजी के मध्य एकता स्थापित नहीं की जा सकी तथापि पेशवा बालाजी विश्वनाथ ने बड़ी दूरदर्शिता का परिचय देतेहुए सैयद बन्धुओं के सहयोग से शाहू की शक्ति को सुदृढ़ता प्रदान की।[93] 1720 में उसके उत्तराधिकारी पेशवा बाजीराव ने वास्तविक अर्थों में मराठा प्रभुत्व की स्थापना में आश्चर्यजनक सफलता अर्जित की। 1737 में पेशवा बाजीराव मात्र 500 घुड़सवारों (कुछ विद्वान यह संख्या 1500 बताते हैं) के साथ दिल्ली पर चढ़आया और पर्याप्त समय तक दिल्ली की एक सराय में ठहरा, किन्तु भयभीत मुगल योद्धाओं ने बाजीराव को न छेड़ने में ही अपनी भलाई समझी। मुगलों को केवल अपनी शक्ति का अनुभव कराकर बाजीराव दिल्ली को विना क्षति पहुँचाये वापस लौटगया।[94] जितने समय तक बाजीराव दिल्ली में रहा, मुगल दरबारियों में भय व्याप्त रहा। सम्राट स्वयं इतना भयभीत होगया था कि वह दिल्ली से किसी सुरक्षित स्थान पर भागजाने को उद्यत था। ऊपरी गंगा–यमुना दोआब में वर्तमान गाजियाबाद की स्थापना के पीछे कुछ विद्वान बाजीराव के

---

93. Ibid .
94. Ibid .

दिल्ली धावे को ही उत्तरदायी बताते हैं। इनका कहना है कि **गाजिउद्दीन** ने दिल्ली के निकट शत्रु द्वारा तत्काल न पहुँचने की सम्भावनावाले स्थान का चयन करने का निश्चयकिया। वह ऐसे स्थान की खोज में था जहाँ भेजकर वह महत्वपूर्ण एवं प्रिय व्यक्तियों के जीवन को सुरक्षित कर सके और स्वयं दिल्ली में रहतेहुए भी अल्प समय में उनकी कुशलता जान सके। अभी वह ऐसे स्थल की तलाश में ही था कि एक और विपत्ति ने दिल्ली को जकड़लिया। 1739 में **नादिरशाह** ने दिल्ली की ओर कूचकिया। नादिरशाह फारस का एक आक्रान्ता था जिसने सेना संगठित करके भारत में पतनशील मुगल साम्राज्य पर आक्रमण किया।[95] वह विना किसी रोक–टोक के करनाल तक चढ़आया। करनाल के समीप सम्राट मुहम्मदशाह की उससे मुठभेड़ हुई और सरलतापूर्वक उसने सम्राट को पराजित करदिया। मुगल सेना भागखड़ीहुई। वह दिल्ली की ओर चला, जहाँ पहुँचकर उसने सम्राट के साथ अत्यन्त अपमानजनक व्यवहार किया। बाजार में नागरिकों से उसके कुछ सैनिकों का झगड़ा हुआ, जिस पर क्रुद्ध होकर उसने दिल्ली के निवासियों का कत्लेआम करने की आज्ञा देदी।[96] निर्दयतापूर्वक कई घंटों तक निरपराध स्त्री–पुरुषों, बच्चों एवं बूढ़ो की जघन्य हत्याएँ की गईं।[97] कहते हैं कि जब

---

95. देखें- Satish Chandra: **Parties and Politics at the Mughal Court**, 1707-40, Aligarh, 1959, 3rd edition, Delhi 1982;
Also, Satish Chandra : **The Eighteenth Century in India** : Its Economy and the Role of the Marathas, the Jats, the Sikhs and the Afghans, Calcutta, 1986
96. देखें– Zahir Uddin Malik : **The Regin of Muhammad Shah**,1719--1748 ,Bombay, 1977
97. Jadunath Sarkar:**Fall of the Mughal Empire**, Vol. 1 (1739-1754), 4th edition, Orient Longman, New Delhi, 1991. pp.2-3

कत्लेआम से दिल्ली सूनी हो गई, तब सम्राट ने नादिरशाह के समक्ष गुहार की, कि " हुजूर यदि अब भी आप कत्लेआम जारीरखना चाहते हैं तो पहले मुर्दों को जिलाइये।"[98] अर्थात् तब मारे जाने के लिए कोई व्यक्ति जिन्दा नहीं बचा था। कहते हैं कि यह सुनकर सम्राट की विनती पर उसने अपनी तलवार म्यान में रख ली और कत्लेआम बन्द होगया। ऐसा सोचना अर्थपूर्ण है कि वजीर गाजिउद्दीन के लिए यह हादसा निश्चय ही दिल दहलानेवाला सिद्धहुआहोगा। भविष्य में मराठों के दिल्ली पर धावों से महत्वपूर्ण एवं प्रिय व्यक्तियों के जीवन की सुरक्षा हेतु उसके द्वारा उपर्युक्त नगर स्थापित करने की आवश्यकता नादिरशाह के कत्लेआम ने पूर्णतः उचित सिद्ध करदी।[99] तत्पश्चात् उसके उत्तराधिकारी बालाजी विश्वनाथ ने पूर्ववर्ती पेशवाओं की नीति को जारीरखा, यद्यपि इसमें कई बिन्दुओं पर आंशिक अथवा पर्याप्त विचलन का समावेश था।[100] 1761 में घटित पानीपत के तृतीय युद्ध की घटना उत्तर भारत में मराठों के लिए मरणान्तक थी। किन्तु इसके बाद पेशवा माधवराव के नेतृत्व में मराठों ने अल्पकाल में ही अपनी खोई हुई सैन्य प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त करलिया। उसके बाद यद्यपि अल्पव्यस्क नारायण राव पेशवा बना, किन्तु उसकी शीघ्र ही हत्या करदीगई। मराठों में रघुनाथराव को लेकर आन्तरिक कलह

---

98. इस सम्बंध में विघ्नेश कुमार का कथन है कि दो महत्वपूर्ण महानुभावों के साक्षात्कारों से प्राप्त जानकारी के आधार पर लेखक इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि सम्राट को नादिरशाह के समक्ष जाकर यह कहने के लिए प्रेरित करनेवाला सम्राज्ञी का कृपापात्र ख्वाजा बसन्त अली खान था, जो बाद में अजराड़ा का नवाब बना। हापुड़, गढ़मुक्तेश्वर तथा सरावा के परगने नवाब अजराड़ा के ही अधीन थे।(देखें निम्नोक्त)

99. देखें – विघ्नेश कुमार ; **गाजियाबाद के चार हजार वर्ष**, हस्तिनापुर शोध संस्थान , मेरठ , 2006, पृ0 3।

100. हिन्दु पद पादशाही की पूर्ववर्ती नीति पूर्णतः अविचल नहीं रह सकी ।

का उदय हुआ, किन्तु फिर भी नाना फड़नवीस एवं सिंधिया व होल्कर आदि योग्य मराठा सेनापतियों ने इस विवाद को सफलतापूर्वक निपटाया। प्रथम आंग्ल–मराठा युद्ध के दौरान सम्पन्न हुई **बड़गाँव सन्धि** ईस्ट–इण्डिया कम्पनी के विरुद्ध मराठों की सैन्य क्षमता को प्रतिष्ठित करनेवाली सिद्ध हुई। इससे उत्तर भारत में मराठों को आशातीत सफलता मिली। मुगल सम्राट शाहआलम को, जो इलाहाबाद के किले में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के पेंशन भोगी के रूप में रह रहा था, मराठा सेनापति महादजी सिंधिया अपने संरक्षण में दिल्ली लाने में सफल रहा।[101] शाहआलम की वास्तविक ताजपोशी के लिए मराठा प्रभुत्व उत्तरदायी मानाजाता है।

इस घटना से उत्तर भारतीय राजनीति में मराठे सर्वोच्च स्थिति में पहुँचगये। यह प्रभाव मराठों के लिए सकारात्मक था किन्तु इसका नकारात्मक पहलू यह रहा कि एक ओर तो सिंधिया पर आर्थिक दायित्वों का भार बढ़गया, वहीं दूसरी ओर मुगल दरबारियों में प्रतिक्रियास्वरूप मराठा विरोधी अभियान तीव्र होउठा। गुलाम कादिर का मीरबख्शी बनजाना और तदुपरान्त मुगल सम्राट और उसके परिजनों तथा सेवक–सेविकाओं का अपमान एवं उनके साथ हुए क्रूर दुर्व्यवहार के पीछे इसी मराठा विरोधी अभियान को देखा जा सकता है, जिसकी अन्तिम परिणति बादशाह को अंधा करके अपदस्थ करने में हुई।[102]

महादजी सिंधिया ने गुलाम कादिर को शीघ्र ही इसका दण्ड दिया

---

101. सम्राट 1772 ई0 के जनवरी मास के पहले सप्ताह में दिल्ली आगया था ।
102. जदुनाथ सरकार : **फॉल ऑफ़ दि मुगल एम्पायर**, जिल्द III पृ0 270 ।

और मुग़ल सम्राट की प्रतिष्ठा को पुनर्स्थापित किया। यद्यपि मराठा सरदारों में भी सदैव मतैक्य नहीं रहा, किन्तु फिर भी, वे सम्मिलित रूप से अपनी सर्वोच्चता को सिद्ध करतेरहे। 18वीं शताब्दी के समापन तक सिंधिया, होल्कर एवं फड़नवीस जैसे सभी योग्य मराठा व्यक्तित्त्व कालकवलित होगये, किन्तु उससे पहले कई दशकों तक इन्होंने अपनी महत्ता बनायेरखी थी। उन्होंने भारतीय राजनीति में विदेशी हस्तक्षेप अर्थात् अफग़ान प्रभाव को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहा किया। इन मराठों ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के प्रभाव को भी सीमित रखा, यद्यपि उनके उत्तराधिकारी परवर्ती काल में अपने पूर्वजों जितनी सफलता प्राप्त न कर सके। फलतः 19वीं शताब्दी के प्रथम दशक में ही **सुरजीअन्जनगाँव की सन्धि** में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने उत्तरी भारत का काफी बड़ा हिस्सा मराठों से प्राप्त कर लिया।[103]

तथ्यतः, 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध का काल उत्तर भारत में मराठों के चरम उत्कर्ष का काल रहा। इस कालखण्ड में दिल्ली के निकट होने के कारण तथा पंजाब की सीमाओं से लगी सीमाएँ होने के कारण ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र राजनीतिक रूप से मराठों के अनेक अभियानों का साक्षी रहा। पानीपत के तृतीय युद्ध में उनकी मरणान्तक पराजय का एक कारण उनके द्वारा उस क्षेत्र की उपेक्षा भी थी। वे यहाँ से रसद अथवा अन्य कोई सहयोग प्राप्त न कर सके।

---

103. यह संधि 31 दिसम्बर, 1803 को सम्पन्न हुई ।

सामरिक दृष्टि से गंगा–यमुना दोआब के ऊपरी भाग की भौगोलिक स्थिति अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। यहाँ से साम्राज्य की राजधानी दिल्ली पर प्रभावी नियन्त्रण रखा जा सकता था तथा पंजाब एवं रुहेलों पर भी कार्यवाही करने में सुगमता हो सकती थी। अतः मराठों ने इस क्षेत्र की बहुविध महत्ता को भली–भाँति समझकर यथासम्भव इसे अपने नियंत्रण में रखने का अनवरत प्रयास किया। फलतः 18वीं शताब्दी की समाप्ति तक यह क्षेत्र उनके प्रभावी नियन्त्रण में रहा।[104]

---

104. विघ्नेश कुमार : **गाजियाबाद के चार हजार वर्ष** , 2006, पृ0 230।

अध्याय–2

1748 में उत्तर भारत का राजनीतिक परिदृश्य और मराठे

अध्याय–2

1748 में उत्तर भारत का राजनीतिक परिदृश्य और मराठे

सन् 1748 ई0 कालीन भारतीय राजनीतिक परिदृश्य को सम्यक प्रकार से समझने के लिए उसके पूर्व मुग़ल साम्राज्य की राजधानी दिल्ली में प्रभावी मुग़ल दरबारी दलबन्दी की आन्तरिक स्थिति का संज्ञान लियाजाना आवश्यक होगा। मुग़ल दरबार में मुख्यतः **चार आन्तरिक दल** विद्यमान थे, इन्हें क्रमशः **तूरानी दल**, **ईरानी दल**, **अफगानी दल** एवं **हिन्दुस्तानी दल** के नाम से जानाजाता है। ऐसा नहीं है कि महान मुगल शासकों के शासनकाल में ये दल संगठित न थे। बल्कि वास्तविकता यह है कि जहाँगीर से लेकर औरंगजेब तक उत्तराधिकार युद्धों में इन दलबंदियों का प्रयोग विभिन्न शहजादों द्वारा लगातार कियागया था।[1] किन्तु अन्तर यह था कि महान मुगल कालीन उत्तराधिकार युद्धों में ये दलबन्दियां और इनसे सम्बद्ध मनसबदार, शहजादों द्वारा इस्तेमाल कियेजाते थे[2] और विजयोपरान्त सम्राट बनने पर इन सब मनसबदारों को इनका उचित पारितोषिक एवं बड़े मनसब आदि मिल जायाकरते थे। किन्तु उल्लेखनीय तथ्य है कि इस पारितोषिक का मिलना या न मिलना अथवा किस सीमा तक मिलना आदि

विस्तृत जानकारी के लिए देखें —
1. Satish Chandra : op. cit.
2. Ibid .

अध्याय–2

1748 में उत्तर भारत का राजनीतिक परिदृश्य और मराठे

अध्याय–2

1748 में उत्तर भारत का राजनीतिक परिदृश्य और मराठे

सन् 1748 ई0 कालीन भारतीय राजनीतिक परिदृश्य को सम्यक प्रकार से समझने के लिए उसके पूर्व मुग़ल साम्राज्य की राजधानी दिल्ली में प्रभावी मुग़ल दरबारी दलबन्दी की आन्तरिक स्थिति का संज्ञान लियाजाना आवश्यक होगा। मुग़ल दरबार में मुख्यतः **चार आन्तरिक दल** विद्यमान थे, इन्हें क्रमशः **तूरानी दल**, **ईरानी दल**, **अफगानी दल** एवं **हिन्दुस्तानी दल** के नाम से जानाजाता है। ऐसा नहीं है कि महान मुगल शासकों के शासनकाल में ये दल संगठित न थे। बल्कि वास्तविकता यह है कि जहाँगीर से लेकर औरंगजेब तक उत्तराधिकार युद्धों में इन दलबंदियों का प्रयोग विभिन्न शहजादों द्वारा लगातार कियागया था।[1] किन्तु अन्तर यह था कि महान मुगल कालीन उत्तराधिकार युद्धों में ये दलबन्दियां और इनसे सम्बद्ध मनसबदार, शहजादों द्वारा इस्तेमाल कियेजाते थे[2] और विजयोपरान्त सम्राट बनने पर इन सब मनसबदारों को इनका उचित पारितोषिक एवं बड़े मनसब आदि मिल जायाकरते थे। किन्तु उल्लेखनीय तथ्य है कि इस पारितोषिक का मिलना या न मिलना अथवा किस सीमा तक मिलना आदि

विस्तृत जानकारी के लिए देखें —
1. Satish Chandra : op. cit.
2. Ibid .

विषय सम्राट स्वयं निर्धारित करते थे। किन्तु उत्तर मुगलकाल में यह स्थिति लगभग बिल्कुल उलटगई।[3] इन उत्तराधिकार युद्धों में मनसबदार अपनी इच्छानुसार गुट बनाकर अलग–अलग शहजादों का पक्ष लेते थे । विजयी शहजादे के सम्राट बनने पर मनसबदार अपनी शर्तों पर मनचाहे मनसब लेनेलगे और लाभ उठानेलगे थे। इस क्रम में सैयद बन्धु सर्वोत्तम उदाहरण के रूप में देखे जा सकते हैं।[4]

बाबर, हुमायूँ, अकबर, जहांगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब–इन छह बादशाहों के उत्तरोत्तर शासन काल में अफगानिस्तान से लेकर देश के पूर्वी हिस्से तक (अटक से कटक तक) तथा हिमालय से लेकर सुदूर दक्षिणी भारत (कश्मीर से कन्याकुमारी) तक मुगलों की विजय पताका फहरायी। किन्तु परवर्ती या बाद के मुगल काल में इस साम्राज्य का बड़ी तेजी से पतन हुआ। वस्तुतः इसके पतन में औरंगजेब की कटट्रतापूर्ण धार्मिक नीति विशेष रूप से उत्तरदायी रही।[5] यद्यपि कुछ इतिहासकार मुगलों के पतन के लिए कतिपय दूसरे कारणों को उत्तरदायी ठहराते हैं। मेरठ के प्रतिष्ठित कानूनगोयान परिवार के सदस्य तथा मध्यकालीन भारत के इतिहासकार प्रो0 सतीश चन्द्र का मत है कि मुगल साम्राज्य के पतन का मूल कारण मनसबदारी व जागीर व्यवस्था थी।[6] प्रतिष्ठित इतिहासकार

---

3. Ibid
4 . Ibid .
5. Jadunath Sarkar : **History of Auranzeb**, Vol.3, Calcutta, 1916.
6. Satish Chandra: **Parties and Politics at the Mughal Court**, 1707-1740, Aligarh,1959.

प्रो0 इरफ़ान हबीब का भी मानना है कि जागीरों के हस्तान्तरण ने शोषण को तीव्र किया जिसके कारण बड़े–बड़े जमींदार और किसान विद्रोह करनेलगे। फलतः अपनी ही विशिष्ट व्यवस्था से मुगल साम्राज्य का पतनहुआ।[7] औरंगजेब के बाद उसका 63 वर्षीय पुत्र **मुअज्जम**, **बहादुरशाह** नाम से गददी पर बैठा। राजौरी (कश्मीर) की राजकन्या नवाब बाई से उत्पन्न औरंगजेब का यह दूसरा पुत्र था।

पहला पुत्र **मुहम्मद सुल्तान** था जो 39 वर्ष की आयु में 14 दिसम्बर, 1676 को मरगया था। मुअज्जम को औरंगजेब के जीवनकाल में ही **शाहआलम** की उपाधि मिलगयी थी। शहजादा अकबर पहले से ही 1677 में विद्रोही होगया था जो ईरान में निर्वासित जीवन काटने के लिए चलागया था। यह प्रधान महिषि दिलरास बानू बेगम से उत्पन्न था। जाजू के युद्ध में जून, 1707 ई0 में शहजादा आजम भी मुअज्जम से हारगया और मारागया। जनवरी, 1709 में शहजादा कामबख्श भी युद्ध में मारागया। इन परिस्थितियों से होकर **मुअज्जम** सम्राट बना। **यह सम्राट शाहे बेखबर** के नाम से जाना गया।[8] उसके पिता औरंगजेब की कार्य–प्रणाली के अभ्यस्त रहचुके पुराने मनसबदारों ने उसे **शाहे बेखबर** की संज्ञा दी। इसने हिन्दुओं के प्रति औरंगजेब की कट्टरतापूर्ण नीति का परित्याग किया, यद्यपि उनसे लियाजानेवाला **जजिया** कर पूर्ववत् बनारहा। इसके शासन काल में ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र के निवासियों पर धार्मिक दबाव एवं बलात् धर्म

---

7. Irfan Habib : **Agrarian System of Mughal India,** Bombay, 1963.
8. सिडनी ओवन : वही ।

परिवर्तन की गति में कमीआयी। फरवरी, 1712 में इसकी मृत्यु होगयी। इसके विषय में सर सिडनी ओवन ने लिखा है [9] :

"यह अन्तिम मुगल सम्राट था जिसके विषय में कुछ अच्छे शब्द कहे जा सकते हैं, इसके पश्चात् मुगल साम्राज्य का द्रुत गति से पतन मुगल सम्राटों की राजनीतिक तुच्छता एवं शक्तिहीनता का स्पष्ट संकेत था।"

सम्राट के पुत्रों में गददी के लिए संघर्ष हुआ जिसके चलते एक महीने तक बहादुरशाह के शव को दफनाया नहीं जा सका।[10] फलतः तीन शहजादे लड़ाई में मारेगये और तब 51 वर्षीय **जहाँदारशाह** मार्च, 1712 में ईरानी गुट के सरदार जुल्फिकार की सहायता से सम्राट बना। सम्राट ने जुल्फिकार को वजीर बनाया। जहाँदारशाह का राज्यकाल यद्यपि केवल 11 महीने तक रहा, किन्तु इस सम्राट को हिन्दुओं के प्रति उदारतापूर्ण नीति पुनः लागू करने का श्रेय जाता है।[11] सम्राट ने हिन्दुओं पर लगनेवाले अमानवीय **जजिया कर** को समाप्त करदिया। स्वाभाविक है कि ऊपरी गंगा--यमुना दोआब क्षेत्र की जनता ने भी इससे राहत की साँस ली होगी।

जहाँदारशाह को अत्यधिक इन्द्रिय लोलुप बतायागया है। सम्राट मुहम्मदशाह तो इस सीमा तक इन्द्रिय लोलुप, और स्त्रैण था कि लोग उसे

---

9. वही ।
10. वही ।
11. समकालीन लेखक सम्राट पर लालकुँवर के प्रभाव को इसके लिए उत्तरदायी ठहराते हैं।

रंगीला कहने लगे थे। उसके पुत्र और उत्तराधिकारी सम्राट अहमदशाह का हरम एक वर्ग कोस के क्षेत्रफल में बतायाजाता है। ऐसी स्थिति में जहाँदारशाह की तुलना करने पर हम उसे बेहतर स्थिति में ही पाते हैं। यद्यपि वह विलासमय जीवन का प्रेमी हो चुका था तथापि सम्बन्ध केवल एक नृत्यांगना तक ही सीमित था। वास्तविकता है कि जहाँदारशाह लाल कुंवर नामक नृत्यांगना के प्रभाव में था। लाल कुँवर या लाल कुँवरि को वस्त्राभूषणों के अतिरिक्त एक करोड़ रुपये सालाना भत्ता मिलता था। सम्राट ने उसके सगे–सम्बन्धियों को राज्य में ऊँचे–ऊँचे पद भी देरखे थे। वास्तविकता यह है कि वह जागीरदारों की बढ़ती शक्ति को नियंत्रित भी करना चाहता था। अतः औरंगजेब के समय से चले आरहे कट्टरपंथी मनसबदारों ने इसके विरुद्ध षड्यन्त्र रचना शुरूकिया। उन्होंने वजीर के विरुद्ध सम्राट के कान भरने शुरू करदिये। सम्राट उनकी चाल न समझ सका। उसने जुल्फिकार जैसे योग्य वजीर को हटादिया। साम्राज्य की ओर से सम्राट की लापरवाही बढ़ी। उसके भतीजे **फरुखसियर** ने उसे मरवाकर दिल्ली की गद्दी प्राप्त की। इस कार्य में मुजफ्फरनगर जिले के दो सैयद भाइयों ने उसका सहयोग किया था। अतः कृतज्ञतापूर्वक उसने बड़े भाई **अब्दुल्ला खां** को अपना **वजीर** नियुक्त किया तथा छोटे भाई **हुसैन अली** को **मीरबख्शी** बनाया। इस प्रकार साम्राज्य के सबसे ऊँचे ओहदे सैयद भाइयों को मिलगए। इन दोनों भाइयो का ऊपरी दोआब से निकट का सम्बन्ध था। सम्राट ने इस क्षेत्र में इन्हें काफी जागीरें प्रदान कीं। वस्तुतः ये निकटस्थ जानसठ कस्बे के रहनेवाले थे। सैयद बन्धुओं ने

जो नीतियाँ अपनायीं, वे साम्राज्य के हित में थीं। किन्तु शीघ्र ही दरबार की दलबन्दी ने उनके विरुद्ध एक शक्तिशाली गठजोड़ तैयार करदिया जिसमें नस्ल व मजहबी फिरके ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इतिहासकार प्रो0 सतीश चन्द्र ने इस गठजोड़ को सूक्ष्म रूप से समझ कर लिखा है कि :

" Slogans of race and religion were raised by individual nobles only to suit their convenience and that the actual groupings cut across ethenic and religious divisions."[12]

विलियम इर्विन लिखते हैं : "मुगल दरबार अनेक दलों का जमघट था, जिसमें **तूरानी**, **ईरानी**, **अफगानी** एवं **हिन्दुस्तानी** दल महत्वपूर्ण थे। इन दलों का नेतृत्व अमीर मनसबदारों द्वारा कियाजाता था।"

सैयद बन्धु शिया थे और हिन्दुस्तानी दल के नेता थे। आन्तरिक रूप से सम्राट भी इनके विरोधी गठजोड़ में सम्मिलित होगया। वह भी इनसे छुटकारापाना चाहता था। अतः उसने एक कूटनीतिक चालचली। हुसैन अली को दक्कन की सूबेदारी प्रदान करके सम्राट ने उसे दक्षिण भेजदिया। उसे मराठों के विरुद्ध अभियान भी करना था। दूसरी ओर गुजरात के सूबेदार को सम्राट ने प्रेरितकिया कि वह हुसैन अली खां को मारडाले। हुसैन अली भी कम कूटनीतिज्ञ न था, उसने परिस्थिति भाँप ली। 1717 में दरबारी दलबन्दी तूरानी, ईरानी एवं

---

12. Satish Chandra : **Parties and Politics at the Mughal Court .** (1707-40), pp. 257-58 .

अफगानी दलों से तंग आकर अब्दुल्ला खाँ छोटे भाई हुसैन अली को शीघ्र दिल्ली वापिस बुलवाना चाहता था। हुसैन अली ने मराठों से युद्ध करने के बजाय सन्धि करना उचित समझा। छत्रपति शाहू भी सन्धि के लिये तैयार था।[13] सन्धि की शर्तें तय हुईं और मसविदा सम्राट की आज्ञा प्राप्त करने के लिये दिल्ली भेज दियागया। सन्धि में यह शर्त भी शामिल थी कि मराठे 15000 सैनिक सम्राट की सेवा में देंगे।

इस परिस्थिति में पेशवा बालाजी विश्वनाथ ने 11000 मराठा सैनिक लेकर सैयद हुसैन अली खाँ के साथ दिल्ली की ओर कूचकिया। फरुखसियर विदेशी मुसलमानों के गुटों के प्रभाव में था जो भारतीय मुसलमानों के गुट के नेताओं के रूप में उभरे सैयद बन्धुओं के विरुद्ध थे। अतः उसने इस सन्धि पर हस्ताक्षर करने से इन्कार करदिया। सैयद बन्धुओं को ईरानी, तूरानी एवं अफगानी गुटों के रूप में संगठित विदेशी मुसलमानों की चाल समझते देर न लगी। इस स्वार्थी गठजोड़ ने सैयदों के विरुद्ध संघर्ष को यह कहकर प्रचारित–किया कि यह लड़ाई मुग़लों एवं हिन्दुस्तानियों के बीच थी। फरुखसियर की भूमिका अत्यन्त निकृष्ट व विनाशकारी थी। इतिहासकार सतीश चन्द्र ने हुसैन अली को उद्धृत करते हुए सम्राट के चरित्र पर अच्छा प्रकाश डाला है। हुसैन अली ने कहा था–"वह (फरुखसियर) कृतज्ञता नहीं जानता, निष्ठा नहीं समझता

---

13. Ibid .

तथा अपने वचन में न केवल अस्थिर ही है, वरन् उसे वचन तोड़ने में भी शर्म नहीं है।"[14] अन्ततः **फरुखसियर** को अपदस्थ करदिया तथा बाद में मरवादिया। रफीउद्दरजात को सिंहासन पर बैठाकर उससे सन्धि पर हस्ताक्षर कराये। इस सन्धि को **सर रिचर्ड टेम्पल** ने मराठा साम्राज्य का **मैग्नाकार्टा** (Magnacarta) कहा है। इससे शाहू मराठों का निर्विवाद नेता बनगया और मुगलों की दक्कन की आय का चौथा भाग मराठों को मिलनेलगा। ऐसा करके पेशवा बालाजी विश्वनाथ ने अपनी कूटनीति से मराठा राजनीति को अद्वितीय महत्व के स्थान पर प्रतिष्ठित करलिया। सैयद बन्धुओं से सन्धि के कारण मराठा राज्य को 30 लाख रुपया मिला तथा **चौथ** और **सरदेशमुखी** के रूप में 35 प्रतिशत वार्षिक कर प्रतिवर्ष प्राप्त होनेलगा। सम्राट क्षय रोग से बुरी तरह पीड़ित था। अतः सैयद बन्धुओं ने 4 जून, 1719 को उसे गद्दी से उतारदिया और **शाहजहाँ द्वितीय** नाम से उसके बड़े भाई **रफीउद्दौला** को सम्राट बनाया। यह भी बीमार था और 17 सितम्बर, 1719 को उसकी मृत्यु होगयी।

28 सितम्बर, 1719 को सैयद बन्धुओं ने एक अन्य शहजादे को, जिसका नाम **रोशन अख्तर** था, मुहम्मदशाह नाम से गद्दी पर बैठाया। यह परम सुन्दर एवं अत्यन्त कायर सम्राट था। सैयद बन्धुओं के विरुद्ध विदेशी मुसलमानों के गठजोड़ से अन्त में सैयद बन्धुओं का पतन होगया। उनके साथ ही साम्राज्य

---

14. वही।

की प्रतिष्ठा भी जातीरही। हुसैन अली को धोखे से की गई हत्या पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए इतिहासकार **इर्विन** ने लिखा है कि :

" भारतीय करबला में दूसरे यज़ीद ने दूसरे हुसैन को शहीद कर दिया।"[15]

दिल्ली दरबार में मराठों के सीधे हस्तक्षेप ने भारत की तत्कालीन राजनीति पर दूरगामी प्रभाव डाले। गाजियाबाद का इलाका भी इससे अछूता नहीं रहा। आने वाले दशकों में यह जिला मराठों की राजनीतिक आकांक्षाओं का सहायक क्षेत्र सिद्ध हुआ।

उत्तरी भारत में सीधा सैन्य हस्तक्षेप करनेवाले पेशवा बालाजी विश्वनाथ का मूल्यांकन करते हुए **सर रिचर्ड टेम्पल ओरियण्टल एक्सपीरियेंस** में लिखते हैं–"वह शान्त स्वभाववाला अत्यन्त बुद्धिमान व्यक्ति था। वह दूसरे के शुष्क व्यवहार को अपने मधुर व्यवहार से जीतना जानता था। वह कूटनीति और वित्तीय मामलों में अद्वितीय था।.....कई बार उसका मृत्यु से सामना हुआ....परन्तु उसे सुअवसर मिलजाता था। उसने अपनी शक्ति और युक्ति के बल पर मुगलों से मराठों के लिए राजमान्यता प्राप्त की। वह अपनी कूटनीति से विजयी होताचला गया, और जब मरणासन्न हुआ तो उसे यह स्पष्ट होगया था कि उसने मुगल राज्य के खण्डहरों पर एक हिन्दू राज्य का गठन करलिया था और अपने लिए इस राज्य की वंशानुगत सत्ता प्राप्त करली थी।"

---

15. इर्विन : वही ।

अगले वर्ष बालाजी विश्वनाथ का असमय देहावसान होगया। छत्रपति शाहू ने वंशानुगत आधार पर उनके ज्येष्ठ पुत्र बाजीराव को पेशवा बनाया। इस समय वह मात्र 19 वर्ष का युवक था किन्तु वह आश्चर्यजनक समझ का स्वामी था। उसमें पिता के गुण विद्यमान थे।

उसने अपने पराक्रम और सूझबूझ से दक्कन में मराठा सर्वोच्चता स्थापित करके उत्तरी भारत पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। उसने मुगल साम्राज्य को नष्ट करके उसका स्थान स्वयं लेने के लिए छत्रपति शाहू ने कहा था–" अब समय आगया है कि हम विदेशियों को भारत से बाहर निकालदें और हिन्दुओं के लिए अमरकीर्ति प्राप्तकर लें। आओ! हम इस पुराने वृक्ष के खोखले तने पर प्रहार करें, शाखाएँ तो स्वयं ही गिरजायेंगी। हमारे प्रयासों से मराठा पताका कृष्णा नदी से लेकर अटक तक फहराने लगेगी।"

छत्रपति शाहू ने प्रभावित होकर उससे कहा था–

"नहीं, आप निश्चय ही इसे हिमालय के पार गाड़देंगे। आप सत्य ही योग्य पिता के योग्य पुत्र हैं।"

शोधार्थी का विचार है कि 1737 में यदि उसका दिल्ली धावा न हुआ होता, तो सम्भवतः गाजियाबाद भी न बसा होता। 1739 में नादिरशाह ने दिल्ली पर आक्रमण किया। उसनें भंयकर लूटमार की व जघन्य कत्लेआम किया, जिसका दुष्प्रभाव गाजियाबाद जिले की जनता पर भी पड़ा।

यह पेशवा बाजीराव के दिल्ली धावे का परिणाम था कि

गाजिउद्दीन ने तीन वर्ष बाद, 1740 में, **गाजिउद्दीननगर** अर्थात् वर्तमान **गाजियाबाद** की नींव रखी।

रिचर्ड टेम्पल ने बाजीराव के विषय में लिखा है ---He died as he lived in camp, under canvas among his men, and he is remembered to this day among the Marathas as the fighting Peshwa.[16]

किन केड एवं **पार्सिनीज़** ने उसके विषय में निम्नलिखित विचार व्यक्तकिये हैं : "किसी भी मापदण्ड़ से नापें तो यह मानना पड़ेगा कि बाजीराव एक महान व्यक्ति था।"[17]

एक रोचक कथा आती है कि एक बार सम्राट मुहम्मदशाह ने उस व्यक्ति का, जो उसके साम्राज्य को रौंद रहा था, चित्र बनाने के लिये अपने एक चित्रकार को भेजा। चित्रकार ने सैन्य वेशभूषा में घोड़े पर सवार बाजीराव का चित्र लाकर सम्राट के सामने रखदिया। चित्र में घोड़ा वेग से दौड़ रहा था और उसकी लगाम उसकी पीठ पर ढीली पड़ी थी। चित्र में बाजीराव सैन्य अभियान पर था और उसे बैठकर भोजन करना रुचिकर न था–न थाल, न व्यंजन। वह तो यात्रा करते–करते ही खेत में खड़ी गेहूँ की फसल से बालें तोड़लेता था और उन्हें मसल कर दाने निकालरहा था, जिन्हें खाकर ही वह सैन्य अभियान में विजय पर विजय प्राप्त कररहा था। सम्राट ने यह चित्र देखा और भयभीत होगया। उसने

---

16. रिचर्डटेम्पल : वही ।
17. किन केड ऐण्ड पार्सिनीज : वही ।

व्याकुल होकर निजाम से कहा कि यह तो प्रेत है। इससे सन्धि कर लो। अपनी कृति Rise of the Peshwas में **एच.एन. सिन्हा** ने लिखा है -----

"Therefore it has been rightly remarked that Baji Rao had the head to plan and the hand to execute."[18]

1740 में 39 वर्ष की अवस्था में पेशवा बाजीराव की असमय मृत्यु होगयी। तत्पश्चात् उसका बड़ा पुत्र बालाजी बाजीराव पेशवा बना। बालाजी बाजीराव के समय में शासन–शक्ति छत्रपति के हाथों से निकलकर पेशवा में केन्द्रित होगई थी। उसके काल में गंगा–यमुना के दोआब क्षेत्र में मराठा अभियान हुए जिनका पर्याप्त प्रभाव गाजियाबाद पर पड़ा।

सम्राट मुहम्मद शाह गाजियाबाद जिले में अपना काफी समय व्यतीत करता था। दरअसल वह लोनी और उसके आस–पास लगवाये गये बाग–बगीचों में अपना मन बहलायाकरता था। हस्तिनापुर शोध संस्थान इन बाग–बगीचों के बीच बनीहुई मुगल कालीन इमारतों के खण्डहरों व अवशेषों को खोज निकालने में सफल रहा है।

जीवन भर लोनी उसका प्रिय सैरगाह रहा। उसकी बेगमें व हरम की स्त्रियाँ लगातार यहाँ आती रहीं। लोनी उसके लिए कितना आकर्षक स्थल रहा होगा इसका आभास इस तथ्य से सहज ही लगाया जा सकता है कि जब वह

---

18. H.N.Sinha : Rise of the Peshwas .

रुहेले सरदार अली मुहम्मद खाँ[19] (जन्म से जाट) के विरुद्ध अभियान पर दिल्ली से 15 फरवरी, 1745 ई0 को चला[20] तो लोनी के **फरहत आफजा** नामक रमणीक बगीचे में आकर ठहरगया। उसने 18 दिनों तक[21] वहाँ नैसर्गिक सुषमा में सौन्दर्यपान व रमणी विलास में अपना समय नष्ट किया[22]। 1748 में मुहम्मद शाह की मृत्यु होगयी और उसका पुत्र अहमदशाह सम्राट बना।[23] इसी दौरान अफगानिस्तान के शासक अहमदशाह अब्दाली(दुर्रानी) ने पंजाब पर कई आक्रमण किये। वास्तविकता यह भी थी कि एक ओर तो उसे दिल्ली साम्राज्य के प्रभावी अफगान सरदार नजीब खाँ सहित सजातीय अफगानों की विविध प्रकार की सहायता सुलभ थी और दूसरी ओर उत्तर भारत में कोई सैन्य प्रतिद्वन्द्वी ऐसा न था जिसका आधार उत्तर भारत में स्थित होता। यही मूल कारण रहा कि इस काल में उत्तर भारत वर्षानुवर्ष विदेशी अफगान आक्रान्ता से क्रूर दमन सहन करने के लिए बाध्य रहा।

---

19. अफगानिस्तान के कन्दहार इलाके से दाउद खाँ नामक एक साधारण सैनिक आया था। उसने अपनी सैन्य प्रतिभा के बल पर शाही सेना में ख्याति प्राप्त की। उसने एक जाट बालक को गोद ले लिया और उसे धर्मान्तरित करके उसका नाम अली मुहम्मद रखा। यही बालक उसका उत्तराधिकारी बना।
20- Jadunath Sarkar: **Fall of the Mughal Empire**, Vol. 1, Orient Longman, New Delhi, 1988, p.30.
21. वही ।
22. वही ।
23. 18 अप्रैल, 1748 को 22 वर्ष की आयु में अहमदशाह दिल्ली की गद्दी पर बैठा। उसके विषय में 1777 में दिल्ली से Major Poiler ने लिखा है कि —"Prince Ahmad after his succession to the throne gave himself up entirely to the drinking of wine, *bhang, charas* and other intoxicating liquors and left a eunuch, the gallant of his mother, the sole disposer of everything."

अध्याय–3

उत्तर भारत में मराठा अभियान (1748–1760)

अध्याय–3

उत्तर भारत में मराठा अभियान (1748–1760)

अठारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध ऊपरी गंगा–यमुना दोआब के इलाके में मराठा–अभियानों का काल कहा जा सकता है। इस समय दिल्ली दरबार में नित्य नये षड्यन्त्र होने प्रारम्भ होगये थे। रुहेले और बंगश आदि पठान लोग दिल्ली में अफगान प्रभाव स्थापित करने के षड्यन्त्र कररहे थे और उन्हें सजातीय अहमदशाह अब्दाली (अफगानिस्तान) का प्रोत्साहन प्राप्त था। इससे निपटने के लिए सम्राट को मराठों की सहायता लेनीपड़ी। अतः मराठों को दिल्ली की राजनीति में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप करने का अवसर मिलगया। 1751 में अब्दाली के आक्रमण से भयभीत होकर मुगल सम्राट के वजीर सफदरजंग ने मराठों से सहायता की याचना की। अगले वर्ष मार्च में सफदरजंग ने मराठों से यह करार किया कि मराठे मुगल साम्राज्य की आन्तरिक और बाह्य खतरों से सुरक्षा करेंगे जिसके बदले में उन्हें 50 लाख रुपया वार्षिक भुगतान कियाजायेगा। उन्हें अजमेर सूबा (प्रान्त) मिला तथा पंजाब, सिन्ध और गंगा–यमुना दोआब से **चौथ** वसूलने के अधिकार भी मिले। इससे यह क्षेत्र मराठों की आकांक्षाओं में सहायक बना। 1752 में अब्दाली ने पंजाब पर आक्रमणकिया और लाहोर पर अधिकार करलिया। इस समय नवाब वजीर सफदरजंग दिल्ली में नहीं था। वह बनारस गया हुआ था।[1]

1.सैयद नज़मुल रज़ा रिज़वीः **अठारहवीं सदी के जमींदार**, पीपुल्स पब्लिक हाउस,नयी दिल्ली,1988,पृ0 21–22.

सम्राट ने उसे मराठों की सहायता लेकर तुरन्त दिल्ली लौटने का आदेश भिजवाया, ताकि अब्दाली के विरुद्ध कार्यवाही की जा सके।[2] जब तक मराठे दिल्ली पहुँचे, अब्दाली वापस लौटगया।[3] इस सहायता के लिए मराठों ने सम्राट से धन की मांग की।[4] सम्राट रिक्त राजकोष के कारण असमर्थ था।[5] लौटते हुए मराठों ने गाजियाबाद व मेरठ को लूटमार का शिकार बनाया।[6] सम्राट अहमदशाह के काल में अब्दाली के कई आक्रमण हुए। 1754 ई0 में वजीर इमादुल्मुल्क ने **आलमगीर द्वितीय** को गद्दी पर बैठाया जो सम्राट जहाँदार शाह का सबसे छोटा पुत्र था। इस समय इसकी आयु 55 वर्ष थी। वजीर गाजीउद्दीन इमादुल्मुल्क ने उसे दीवानेआम में ले जा कर सिंहासन पर बैठाया था। यह सम्राट **आलमगीर द्वितीय** कहलाया। इसने तुरन्त ही पूर्व सम्राट की गिरफ्तारी का आदेश दिया। अहमदशाह तथा इसकी माता दोनों कैद करलिएगये। नवम्बर, 1756 में अब्दाली ने चौथा आक्रमणकिया। 23 जनवरी, 1757 में अब्दाली वजीराबाद (दिल्ली) आपहुँचा। 25 और 26 जनवरी की रात्रि में अब्दाली ने सरदार फहीम खाँ के माध्यम से सम्राट को अपने सामने 26 जनवरी के दिन पूर्ण राजसी विधि से उपस्थित होने के लिए सूचित कराया। दरअसल जनवरी 1757 में अब्दाली पंजाब आया और वहाँ से दिल्ली की और बढ़ा और उसने 27 जनवरी, 1757 को

---

2. वही ।
3. वही ।
4. वही ।
5. वही ।
6. वही ।

लालकिले में प्रवेशकिया । उसने दिल्ली, आगरा व मथुरा के बीच के क्षेत्र में अत्यधिक लूटपाट की[7]। अनेक मन्दिरों को ध्वस्त किया[8] तथा बड़ी संख्या में हिन्दुओं की हत्या करायी।[9]

अब्दाली जब दिल्ली में रहा तो उसने दोआब में अपने घुड़सवार भेजे, जो प्रतिदिन यमुना पार करके गाजियाबाद तथा बुलन्दशहर जिलों में आते थे और हिन्दु जनता की हत्या तथा लूट को अंजाम देते थे। सिकन्दराबाद से लेकर अनूपशहर तक अर्थात् यमुना के किनारे से लेकर गंगा के किनारे तक हिन्दुओं का व्यापक नरसंहार कियागया। वीभत्स बलात्कारों और नरसंहार की घटनाओं ने हिन्दुओं का भारी विनाशकिया। अहमदशाह अब्दाली (दुर्रानी) के सैनिकों ने गाजियाबाद एवं आस–पास की जनता को नादिरशाह के वीभत्स अत्याचार की याद ताजाकरादी । प्रसिद्ध इतिहासकार **सर जदुनाथ सरकार** ने उसके बर्बर अत्याचार की घटनाओं को निम्न प्रकार अंकित किया है :

Afghan massacres all over the country

"The week from 28th Feburary to 6th March was the period of Spring Carnival (Holi) , when in every Hindu house there is rejoicing and playful bombardment with coloured powder and water,

---

7. Jadhunath Sarkar : op. cit. Vol. 2 , pp. 68--74.
8. Ibid .
9. Ibid .

singing and dancing day and night. Even the emperor and his wazir used to disport themselves in his festive season. But this year, as the court-historian of the reign writes, not one man celebrated these rejoicings. Every one was sunk in grief and misery [TALS;105 b]. Holi, was no doubt, played in Mathura and Virandavan, but there the day so profusely poured was the blood of Hindus. But before we follow the invader in this southern campaign, we shall trace the course of the war in the country around during the period of his stay in the capital. From Delhi as a centre Ahmad Shah continued to send out parties to forage in the Doab on the east and the Faridabad distrist on the south, the bridge of boats thrown over the Jamuna below Delhi facilitating the crossing and quick return of these detachments. In the middle of February the desolation created by them in the Sikandrabad district (modern Bulandshahar) is thus described by the eyewitness Ghulam Hasan Samin of Bilgram:' "Sikandrabad was full everywhere of fugitives from the environs of Delhi. Thence to Anupshahar [a four days'march] in every village that we passed, not a sign of an inhabitant was to be seen, and along the route unnumbered dead bodies were lying. Anupsharhar too was crowded with fugitives from Delhi, to such an extent that it was difficult to force a way through its lanes.....The Shah had ordered a

general slaughter in parganah Dasna, the zamindari of Rai Bahadur Singh."

"The same scene of slaughter and rapine met the eye in the region...From each halting place of the Afghan vanguard, lines of skirmishers spread out, right, left and in-front, in the shape of a fan. Their superb Khurasani horses easily covered 80-90 K.M. a day, and after scouting and foraging they fell back on their camp in the evening. Thus, the path of advance was cleared for the invaders".[10]

भारत में आलमगीर द्वितीय को सम्राट, इमादुल्मुल्क को वजीर तथा रुहेले पठान नजीबुद्दौला को साम्राज्य का मीरबख्शी एवं अपना मुख्य एजेन्ट बनाकर अब्दाली अफगानिस्तान लौटगया। स्वयं अफगान होने के नाते उसे भारत में बसे अफगानों (पठानों)से बड़ी सहानुभूति थी। इस प्रकार उसने सम्राट से बलपूर्वक नजीब खाँ रुहेले को मीरबख्शी नियुक्तकराया और दोआब का काफी बड़ा इलाका भी उसके अधिकार में दिलवादिया। गंगा–यमुना के दोआब का बहुत बड़ा क्षेत्र नजीब खाँ को मिला। शोधार्थी का विचार है कि ऐसा करके अब्दाली ने अफगानिस्तान के अलावा प्रकारान्तर से पंजाब से लेकर दोआब तक तथा पुनः निकटवर्ती रुहेलखण्ड के भारतीय क्षेत्र तक अफगान नियन्त्रण मजबूतकिया।

---

10. Ibid .pp. 60-61.

क्योंकि भौगोलिक रूप से अफगानिस्तान के काबुल प्रान्त से लेकर सारा पंजाब प्रान्त यमुना नदी तक था इससे लगेहुए सहारनपुर, हरिद्वार, मुजफ्फरनगर, मेरठ, गाजियाबाद बागपत का भू–भाग, गंगा से पूर्व रुहेलखण्ड का इलाका बिजनौर, ज्योतिबाफुले नगर (अमरोहा), मुरादाबाद, रामपुर, बदायूँ, बरेली, पीलीभीत, शाहजहाँपुर जिलों में रुहेले पठानों तथा बंगश पठानों का फर्रुखाबाद का क्षेत्र अफगानों के प्रत्यक्ष नियन्त्रण में था। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पठानों ने अफगानिस्तान से लेकर दिल्ली के आस–पास तथा गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र तक प्रभावी अफगान नियंत्रण स्थापित किया।[11] अब्दाली के सैन्य अभियान तथा नजीबुद्दौला को मीरबख्शी बनायेजाने की जानकारी मिलते ही पूना में अफगान विरोधी कार्यवाही करने की रणनीति बनाईगई ताकि दिल्ली को विदेशी अफगान प्रभाव से मुक्त कियाजाये एवं पूर्ववत् मराठा प्रभाव कायम किया जा सके। ऊपरी दोआब के इलाके नजीबुद्दौला को मिलजाने से यहाँ मराठा प्रभाव को क्षति पहुँची और अब यह पठानों के कार्यकलापों का क्षेत्र बनताजारहा था क्योंकि अब्दाली के आक्रमण के बाद राजधानी दिल्ली के सीमावर्ती इलाकों का प्रशासन प्रबन्ध सम्राट ने नजीबखाँ को देदिया था। सम्राट की ओर से उसे यह भी छूट मिली हुई थी कि वह इस क्षेत्र में अपनी मर्जी से राजस्व अधिकारी नियुक्त कर सकता था। नजीब खाँ ने इसका लाभ उठाकर शाही परिवार की जागीरों से प्राप्त आय में भी हेराफेरी

---

11. विघ्नेश कुमार : वही , पृ0 120 ।

की। ऐसे में वजीर गाजिउद्दीन इमादुल्मुल्क ने मराठों से सहायता माँगी। सम्राट भी नजीबुद्दौला से छुटकारापाना चाहता था।[12] पेशवा ने पूना से अपने छोटे भाई रघुनाथराव तथा मराठा योद्धा मल्हारराव होल्कर के नेतृत्व में मराठा सेना दिल्ली भेजी।[13] अगस्त 1757 में ये दिल्ली पहुँचे। उन्होंने नजीबुद्दौला को नजीबाबाद लौटने को मजबूर करदिया। विजेता मल्हारराव होल्कर ने गाजियाबाद जिले से होकर बागपत में तम्बू गाड़दिए। होल्कर ने बागपत और बड़ौत से क्रमशः 20000 और 17000 रुपये का आर्थिक दण्ड वसूल किया। किन्तु जैसे ही होल्कर वहाँ से हटा, नजीबुद्दौला ने पुनः इन सभी स्थानों पर अधिकार करलिया। मार्च 1758 में रघुनाथराव ने पंजाब की ओर कूचकिया और अप्रैल में मराठों ने आक्रमण करके लाहोर पर अधिकार करलिया। वहाँ से अब्दाली के पुत्र तैमूर को, जो पंजाब का गर्वनर था, भगादिया। तैमूर मराठों से अपनी जान बचाकर भागनिकला। कुछ महीनों में ही मराठे अटक जापहुँचे। समस्त पंजाब पर मराठा आधिपत्य स्थापित होगया। तैमूर की पराजय ने अब्दाली की प्रतिष्ठा धूल में मिलादी। यह वास्तव में उसके लिए कड़ी चुनौती थी। मराठों ने 75 लाख रुपया वार्षिक धनराशि के बदले में अदीना बेग खाँ को पंजाब का सूबेदार बनाया[14] किन्तु उसकी शीघ्र ही मृत्यु होगई। तत्पश्चात् साबाजी सिंधिया को पंजाब का गवर्नर बनायागया।

---

12. Jadhunath Sarkar : op. cit. pp. 83 .
13. Ibid .
14 . Ibid . p. 92.

1759 ई0 का साल ऊपरी दोआब के लिये नजीबुद्दौला और मराठों के बीच प्रतिद्वन्दिता का काल था। रुहेला सरदार अपने सजातीय पठानों के बल पर मराठा शक्ति को चुनौती देरहा था। ऐसे में 1759 में एक बार फिर मराठों ने दत्ताजी सिंधिया के नेतृत्व में लोनी (जिला गाजियाबाद) और उसके आस–पास के इलाकों पर आक्रमणकिया। उल्लेखनीय है कि ये इलाके नजीबुद्दौला के अधीन थे जिनमें उसके अधिकारी और किलेदार नियुक्त थे।

मराठों ने लोनी पर धावा बोला और किले का घेरा डालदिया। किले पर कब्जा करने के प्रयत्न के दौरान मराठा सेना की रसद समाप्त हो गई।[15] तब इनमें से लगभग 10,000 सैनिकों ने गाजिउद्दीन नगर अर्थात् वर्तमान गाजियाबाद कस्बे पर आक्रमण किया।[16] यह एक प्रकार की किलेबन्दी युक्त कस्बा कहा जा सकता था। इसके दोनों दरवाजों क्रमशः **दिल्ली दरवाजा** और **डासना दरवाजा**[17] **(चित्र 2)**को बन्द करके उनके विरुद्ध कारगर मोर्चा लियागया। यहाँ उनका कड़ा प्रतिरोध हुआ। वास्तव में गाजिउद्दीन नगर उस काल में चारों ओर से किलेबन्दी वाला कस्बा था। डासना दरवाजा और देहली दरवाजा बन्द कर देने से इस कस्बे की पूर्ण सुरक्षा होजाती थी।[18] बाकी भाग को वहाँ की **सराय पुख्ता** सुरक्षा प्रदान करती थी।[19] **सराय पुख्ता** की छत पर पिछली दीवार की मुंडेरी पर बने प्लेटफार्म

---

15. वही ।
16. वही ।
17. इसका चित्र श्री विघ्नेश कुमार की पूर्वोक्त पुस्तक में उपलब्ध है।
18. विघ्नेश कुमार : वही , पृ0 3 ।
19. वही ।

को आज भी तोप रखने के स्थान के साक्ष्य के रूप में देखा जा सकता है। इस प्रतिरोध के फलस्वरूप मराठे डासना की ओर मुड़गये। यहाँ पहुँचकर उन्होंने रसद प्राप्त करने के लिए लूटमार की। नजीबुद्दौला ने बड़ी कुशलतापूर्वक मराठों के विरुद्ध जाल फैलाया। उसने सजातीय अब्दाली को दिल्ली पर आक्रमण करने के लिए आमंत्रितकिया। सजातीय पठान हाफिज रहमत खाँ रुहेला भी इनसे मिलगया। इन्होंने सादुल्ला खाँ और दुन्दे खाँ से भी यह आश्वासन दिलवाया कि दिल्ली पर आक्रमण की दशा में वे अब्दाली का समर्थन करेंगे। अवध के नवाब शुजाउद्दौला से भी अब्दाली को उक्त समर्थन का आश्वासन दिलवाने में नजीबुद्दौला कामयाब रहा। इन्होंने गठजोड़ बनाकर विदेशी आक्रान्ता अब्दाली को बुलवाया ताकि ये मराठों को निकाल दें। **सिडनी ओवन** ने लिखा है कि –"अब्दाली....अफगान था अतः वह रुहेले पठानों से सहानुभूति रखता था तथा कट्टर मुस्लिम होने के कारण वह मराठों द्वारा अपने सहधर्मियों के विरुद्ध कियेगये अभियानों का विरोधी था।"

अब्दाली मराठों से युद्ध के लिए तैयार होगया। रुहेलों, बंगश पठानों, दुन्दे खाँ और सादुल्ला खाँ तथा अवध के नवाब शुजाउद्दौला का समर्थन विदेशी आक्रान्ता अब्दाली को आवश्यक सामरिक सहायता प्रदान कररहा था। इनका चरित्र देशद्रोही मीर जाफ़र का स्मरण कराता है जिसने मात्र 2 वर्ष पहले सन् 1757 में बंगाल के नवाब **सिराजुद्दौला** के विरुद्ध एक विदेशी शक्ति ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सहायता करके देश के साथ गद्दारी की थी, इतिहास में उसे

अप्रत्यक्ष रूप से भारत की गुलामी के लिए जिम्मेदार ठहराया जातारहा है।[20]

दत्ताजी सिंधिया ने नजीबुद्दौला की योजना को असफल करने और उसके विरुद्ध कारगर मोर्चेबन्दी करने के उददेश्य से मुजफ्फरनगर जिले में गंगा नदी के दाहिने तट पर स्थित शुक्रताल में पड़ाव डालदिया। यह गंगा नदी के दाहिने तट पर स्थित हिन्दुओं का प्राचीन पौराणिक तीर्थ स्थल है जो भागवतपुराण की कथा सुनाने के विषय में मुनि शुकदेव से सम्बन्धित मानाजाता है। व्यास और **शुक** नाम की तत्कालीन आदिवासी (वनवासी) जाति की कन्या के सहवास से इनका जन्म हुआ मानाजाता है और इसीलिये ये मुनि शुकदेव कहलाये। इन्होंने महाराजा परीक्षित को उनकी मृत्यु के पूर्व **भागवत पुराण** के रूप में धर्मोपदेश दिया था। गंगा के किनारे जिस स्थल पर यह धर्मचर्चा सम्पन्न हुई, उसे **शुक** मुनि के नाम पर ही **शुकताल** कहागया जो कालान्तर में **शुक्रताल** नाम से प्रसिद्ध हुआ।

नजीबुद्दौला ने यहीं पर सामरिक महत्व का एक मजबूत किला बनवाया था। यहीं पर वह मराठों द्वारा घेर लियागया था। आज भी किलेवाले स्थान पर बने खेतों से सोने तथा चाँदी के सिक्के मिलने की चर्चाएं होतीरहती हैं जो शोधार्थी के निदेशक डा० विघ्नेश कुमार को **फ़ील्डवर्क** के दौरान पर्याप्त रूप से सत्य प्रतीत हुईं।

दत्ताजी ने नजीबुद्दौला को शुक्रताल में घेरलिया ताकि

---

20. वही ।

नजीबुद्दौला गंगा नदी पार करके पंजाब की ओर न जा सके। शुक्रताल के निकट स्थित ग्राम बेलड़ा[21] में भी नजीबुद्दौला के समर्थन में एक सैनिक टुकड़ी तैनात थी। इसे सैन्य कूटनीति संचालन का अच्छा उदाहरण माना जा सकता है।

वास्तव में यह एक मजबूत गढ़ी थी। इधर दिल्ली में वजीर गाजिउद्दीन ने 30 नवम्बर, 1759 को सम्राट आलमगीर द्वितीय की हत्या करदी।[22] 29 नवम्बर को यह षड्यन्त्र रचागया। यह प्रचार कियागया था कि "लाहोर से आकर एक दरवेश ठहरा हुआ है जिसके पास अदृश्य शक्तियाँ हैं।" सम्राट को बहकाकर उसके दर्शन हेतु लायागया और उसको वहीं पर ही मारडालागया। इससे अब्दाली के प्रबन्ध अस्त–व्यस्त होगये। वह दिल्ली आकर गाजिउद्दीन को दण्ड देना तथा दिल्ली को मराठों के प्रभाव से सदैव के लिए मुक्त करना चाहता था। उसने 1759 के अन्तिम दिनों में सिन्धु नदी पार करके पंजाब को रौंद डाला।[23] वह शीघ्रतापूर्वक दिल्ली की ओर बढ़ा। पंजाब का सूबेदार साबाजी सिंधिया एवं उसका संरक्षक दत्ताजी सिंधिया उसे रोक नहीं सके। वे आगे की रणनीति बनाने के लिए दिल्ली की ओर लौटे। दत्ताजी ने थानेश्वर के निकट अब्दाली को रोकने का प्रयत्न किया, किन्तु असफल रहा। देश के दुर्भाग्य से दिल्ली के उत्तर में लगभग 16 कि0मी0 दूर बुराड़ी घाट (यमुना नदी के दाहिने

---

21. यहाँ आज भी मराठा सैनिकों की सामूहिक समाधियाँ विद्यमान हैं।
22. Jadunath Sarkar : op. cit.
23. Ibid .

तट पर ऊँचे टीले पर बसा त्यागी ब्राह्मणों का ग्राम बुराड़ी, जो वर्तमान में नई दिल्ली का हिस्सा है) की सैन्य झड़प में दत्ताजी सिंधिया का प्राणान्त होगया। वस्तुतः बुराड़ी घाट पर यमुना ने उस वर्ष गाँव के पास एक नाला छोड़दिया था जबकि यमुना की मुख्य धारा और इस नाले के बीच एक टापू बनगया था। इस नाले में कहीं–कहीं बहुत कम पानी था अन्यथा यह सूखाहुआ था। किन्तु इसमें हाथीघास अर्थात् झाऊ घास उगी खड़ी थी। यह घास हाथियों को खिलायीजाती है। बहुधा यह ढ़ाई–तीन मीटर ऊँची होजाती है। दत्ताजी सिंधिया अपने घोड़े पर इस नाले में उतरा, किन्तु वह झाऊ घास में पहले से मोर्चा लियेपड़े अफगान बन्दूक धारियों से बेखबर था। जैसे ही वह बन्दूक की प्वाइंट ब्लैंक रेंज में आया, अफगानों ने एक साथ कई गोलियाँ दाग दीं। दत्ता जी वहीं ढेरहोगया।[24] जैसे ही दत्ताजी का शरीर अपने घोड़े सहित भूमि पर गिरा, मियाँ कुतुबशाह[25] नामक सैनिक ने उसका सिर काटलिया और उसे अब्दाली के सामने लेगया। जनकोजी सिंधिया तथा मल्हारराव होल्कर की सैनिक टुकड़ियाँ अब्दाली के अभियान को रोक न सकीं। 25 दिसम्बर, 1759 को उसने यमुना नदी पार की और नजीबुद्दौला के इलाके सहारनपुर में आ गया।[26]

नजीबुद्दौला ने उस विदेशी आक्रमणकारी का हार्दिक स्वागत

---

24. Ibid.
25. Ibid.
26. इस इलाके में नजीब का प्रभाव जमाहुआ था। स्थानीय निवासियों के साथ उसके सम्बंध महत्वपूर्ण सिद्ध हो रहे थे।

किया। उसने इस इलाके के मुसलमानों से भरपूर सहयोग का लाभ उठाने की दृष्टि से यह अफवाह फैलवादी कि मराठों ने मुगल सम्राट को गद्दी से उतारकर पेशवा के ज्येष्ठ पुत्र विश्वासराव को बादशाह बनादिया था।[27] इस अफवाह को स्थानीय कट्टर मुसलमानों की धर्मान्धता से बलमिला। नजीबुद्दौला की चाल काम करगयी और वे प्राण–प्रण से अब्दाली की सहायता के लिए तैयार होगये। पूना में पेशवा बालाजी बाजीराव ने अब्दाली के अभियान के विरुद्ध पहले ही सदाशिवराव भाऊ को सेना सहित दिल्ली भेजदिया था। भाऊ के साथ विश्वासराव भी था। उसने 22 अगस्त, 1760 को दिल्ली पर अधिकार करलिया और 17 अक्टूबर, को कुंजपुरा जीतलिया।[28] 20 अक्टूबर, 1760 को मराठा सरदार गोविंद पंत पर अब्दाली की सेनाओं ने अचानक आक्रमणकिया और गाजियाबाद के निकटवर्ती क्षेत्र तथा कस्बे बागपत के समीप यमुना पार की और पानीपत की ओर बढ़गया। ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र का प्रमुख गाँव बेलड़ा जिला मुजफ्फरनगर की जानसठ तहसील के अन्तर्गत आता है। पहले इस स्थान पर नजीबुद्दौला ने एक मजबूत किलेबन्दी का निर्माण कराया था तथा इसकी सुरक्षा की मजबूत व्यवस्था की थी।[29] अनुश्रुतियों से ऐसी जानकारी मिली है कि इसमें रहनेवाले सिपाही गंगा

---

27. Jadunath Sarkar : op. cit.
28. Jadunath Sarkar : op. cit. pp. 157--58 .
29. **साक्षात्कार** , 26 नवम्बर 2004 .
    सैयद मुमताज अली पुत्र स्व0 सैयद वाजिद अली, पौत्र स्व0 सैयद जीवन अली, आयु 55 वर्ष, ग्राम बेलड़ा, जिला मुजफ्फरनगर (उ0प्र0) ।
    श्री विजय पाल सिंह पुत्र स्व0 श्री मुंशी राम, आयु 75 वर्ष, जाति जाट, बेलड़ा।
    श्री अजीत सिंह पुत्र स्व0 श्री भंवर सिंह ,आयु 53 वर्ष, जाति जाट, बेलडा।
    सैयद हैदर अब्बास पुत्र स्व0 सैयद जहूर हसन ,आयु 76 वर्ष, बेलड़ा। ———

स्नान के लिए शुक्रताल जानेवाले तीर्थ यात्रियों को कष्ट पहुँचाते थे।[30] कहते हैं कि इससे तीर्थ यात्रियों को कई बार बड़ा अपमान सहना पड़ता था।[31] उन्होंने इससे निपटने का उपाय सोचा और उन्होंने मराठों से सहयोग मांगा।[32] मराठों ने गढ़ी को घेरलिया और इसे ध्वस्त करदिया।[33] इस सन्दर्भ में श्री सुरेन्द्र सिंह पुत्र स्व0 श्री धूमसिंह, पौत्र श्री घासीराम, आयु 71 वर्ष, जाति जाट, गौत्र तोमर, मूल निवासी बेलड़ा (मुजफ्फरनगर), हाल निवासी 2/1–ए, न्यू प्रभातनगर, मेरठ ने साक्षात्कार के दौरान बताया कि उनके पड़बाबा के पड़बाबा के पिता मराठों के साथ मिलकर पठानों को लूटते थे उनका यह पूर्वज नसौली–बरवाला का मूल निवासी था जिसे मराठों ने जमीन माफी देकर बेलड़ा में बसाया था। तबसे उनके पूर्वज बेलड़ा में रहते आरहे हैं। कहते है कि इसके बाद मराठों ने उन सम्पर्कित

श्री सेवा राम पुत्र स्व0 श्री कबूल सिंह ,आयु 55 वर्ष, जाति जाट, बेलड़ा।
सैयद जब्बार हुसैन पुत्र स्व0 सैयद अहमद हसन, आयु 52 वर्ष, बेलड़ा।
सैयद गुलजार मुहम्मद पुत्र सैयद मुहम्मद, आयु 58 वर्ष, बेलड़ा।
श्रीमती नसीम फातिमा पत्नी सैयद मुमताज अली (ग्राम प्रधान), आयु 48 वर्ष, बेलड़ा।
सैयद नासिर अली ऐडवोकेट पुत्र स्व0 सैयद वाजिद अली, आयु 63 वर्ष, हाल निवासी–नजर कालोनी अंसारी रोड मुजफ्फरनगर , मूल निवासी–बेलड़ा।

30. **साक्षात्कार** दिनॉक 23–6–2004 .
श्री सुरेन्द्र सिंह पुत्र स्व0 श्री धूम सिंह पौत्र श्री घासी राम ,आयु 71 वर्ष, जाति–जाट गौत्र–तोमर मूल निवासी बेलड़ा, मुजफ्फरनगर हाल निवासी 2/1 न्यू प्रभात नगर, मेरठ। श्री सुरेन्द्र सिंह तौमर ने साक्षात्कार में बताया कि उनके पडबाबा के पिता मराठो के साथ लूटमार करते थे जो कि मेरठ और मुजफ्फर नगर जिलो में बहुधा पठानों के खिलाफ हुआकरती थी। उनका यह पूवर्ज नसौली–बरवाला का मूल निवासी था जिसे मराठों ने जमीन माफी देकर बेलड़ा में बसाया था। तब से उनके पूवर्ज बेलड़ा में रहते आरहे हैं।
श्री शिव ध्यान सिंह पुत्र स्व0 श्री छज्जू सिंह, पौत्र स्व0 श्री नत्थू सिंह, आयु 72 वर्ष, जाति–जाट, गौत्र–गौथ, मूल निवासी–बहलोलपुर (परीक्षितगढ़), जिला मेरठ, हाल निवासी 41/1 जे, जेल रोड न्यू आर्यनगर मेरठ।

31. वही।
32. वही।
33. वही।

किसानों से यहाँ बसने के लिये कहा। इस प्रकार यह गाँव मराठों के कहने से यहाँ बसगया।[34] शुरू में वर्तमान बागपत जिले के छपरौली कस्बे से 3 कि0मी0 दूर स्थित नसौली–बरवाला नामक गाँव के जाट किसान, ब्राह्मण एवं बढ़ई परिवार मराठों ने यहाँ बसाये थे।[35] जब यह क्षेत्र मराठा आधिपत्य में रहा तो उन्होंने यहाँ एक मन्दिर का निर्माण कराया।[36] इस काल का कुआ तथा यह मन्दिर दोनों आज भी अच्छी स्थिति में विद्यमान हैं।[37] सिपाहियों द्वारा तीर्थ यात्रियों को कष्ट पहुँचाने सम्बन्धी अनुश्रुति से हम सहज ही यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि नजीबुद्दौला की मृत्युपरान्त ही ऐसा सम्भव हो सकता था। ऐतिहासिक सत्य यह है कि नजीबुद्दौला ने स्वयं जीवन भर व्यक्तिगत चरित्र की उच्चता का पालनकिया था। यही नहीं, वरन् वह चरित्र सम्बन्धित यही आचरण कठोरतापूर्वक अपने सैनिकों से पालन करवाता था। अतः बेलड़ा की गढ़ी और वहाँ रहनेवाले सिपाहियों का यह मामला उसके पुत्र और उत्तराधिकारी जाब्ता खाँ के काल में होना उचित जानपड़ता है। उक्त अनुश्रुति की सच्चाई का पता लगाने के लिए यथा सम्भव **फील्ड वर्क** करना आवश्यक था। इसीलिए शोधार्थी ने अपने निदेशक डा0 विघ्नेश कुमार के साथ बेलड़ा जाकर विभिन्न व्यक्तियों के साक्षात्कार लिये। दर्जनों व्यक्तियों ने गढ़ी सम्बन्धी जानकारी होने से मनाकिया, किन्तु दोपहर बाद

---

34. वही।
35. वही।
36. वही।
37. वही।

डॉ0 हाशिम रज़ा ज़ैदी, फ़िज़िशियन तथा डॉ0 (श्रीमती) आबिद ज़ैदी के सहयोग से उन्हीं के पैतृक आवास पर अनेक ग्रामवासी आये और उन्होंने बेलड़ा ग्राम में रुहेलों की किलेबन्दी के विषय में विस्तृत जानकारी दी।

पूर्व ग्रामप्रधान सैयद मुमताज अली हमें सैयद खानदान की उस पुरानी हवेली में भी लेकर गये, जो पहले उक्त किलेबन्दी का महत्वपूर्ण हिस्सा थी और जिसे उन्होंने ग्राम के ही एक जाट परिवार को कुछ वर्ष पहले बेचदिया था। अनुसन्धान सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि बेलड़ा की किलेबन्दीवाली चाहरदीवारी में चार बुर्जियाँ थीं जो किलेबन्दी की सुरक्षा को मजबूती प्रदान करती थीं।

शोधार्थी के निदेशक ने मुजफ्फरनगर के ख्यातिप्राप्त वकील तथा पुराने कांग्रेसी नेता स्वर्गीय सैयद नजर मुहम्मद, ऐडवोकेट के बेलड़ा स्थित पैतृक कब्रिस्तान में एक अत्यन्त महत्व का पुरातात्त्विक साक्ष्य खोजा है। वर्तमान राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में इस साक्ष्य की महत्ता और भी बढ़गयी लगती है। यह है—मुसलमानों के कब्रिस्तान में हिन्दुओं की समाधियाँ। इस विषय पर गहनता से विचारकरने पर दो सम्भावनाएं ध्यान में आती हैं :

1. कहीं ऐसा तो नहीं है कि यह कब्रिस्तान पहले हिन्दुओं का समाधि स्थल रहा हो, और बाद में सैयदों ने इसे कब्रिस्तान के रूप में इस्तेमालकिया हो।

2 अथवा, ऐसा तो नहीं है कि यह पहले कब्रिस्तान ही रहा हो और बाद में मुस्लिम परिवार बेलड़ा छोड़कर अन्यत्र चलेगये हों तथा कुछ अन्तराल बाद पुनः बेलड़ा आये हों और इस बीच के अन्तराल में यहाँ हिन्दुओं की समाधियाँ

बनगयी हों। सैयदों ने वापस लौटने पर पूर्व की भाँति पुनः अपने कब्रिस्तान के रूप में इसका प्रयोगकिया हो।

किन्तु उक्त दोनों सम्भावनाओं के जिए बेलड़ा ग्राम के इतिहास में कोई स्थान नहीं है। यह छतरौड़ी शाखा के सैयदों, जो बारहा के सैयदों की चार शाखाओं में से एक प्रमुख शाखा है, का गाँव है। दरअसल सम्पूर्ण उत्तर मुगल काल में **सादाते–बारहा** के सैयदों ने प्रायः मराठों का साथदिया था। यह मत उचित जान पड़ता है कि नजीबुद्दौला के उत्तराधिकारी जाब्ता खाँ के विरुद्ध हुए अभियानों के दौरान बेलड़ा की किलेबंदी नष्ट करते समय मराठों के जो योद्धा मारेगयेहोंगे, उनका सामूहिक अन्तिम संस्कार इसी कब्रिस्तान में कियागया होगा और उस स्थान पर बाद में या तब ही यह समाधि स्मारक बनवायेगये होंगे। प्रतिवर्ष सैयद परिवारों द्वारा इनका उचित रख–रखाव कियाजाना वर्तमान परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय एकता की बेजोड़ मिसाल प्रस्तुत करता है।

अध्याय–4

ऊपरी दोआब की रणनीतिक महत्ता एवं पानीपत के तृतीय युद्ध में उत्तर भारत से मराठा प्रभाव का समूल अन्त

अध्याय 4

ऊपरी दोआब की रणनीतिक महत्ता एवं पानीपत के तृतीय युद्ध में उत्तर भारत से मराठा प्रभाव का समूल अन्त

पानीपत के तृतीय युद्ध की पृष्ठभूमि में दत्ताजी सिंधिया और उसके युवा संरक्षित जनकोजी सिंधिया के दिल्ली अभियान की चर्चा समीचीन होगी। वे 26 दिसम्बर, 1758 को अपनी यात्रा पूरीकरतेहुए नजफगढ़ पहुँचगए।[1] दत्ताजी सिंधिया के आने से उत्तरी भारत में मराठा नीति लगभग पूरी तरह परिवर्तित होगई थी। स्पष्टवादी और व्यावहारिक राजनीतिज्ञ मल्हारराव होल्कर ने उत्तर भारत की राजनीति को अब तक निर्देशितकिया था जिसके स्थान पर अब आतुर योद्धा दत्ताजी सिंधिया की नियुक्ति हुई थी।[2] वस्तुतः दत्ताजी कुशल योद्धा मानाजाता था। उससे कूटनीति की अपेक्षा नहीं की जा सकती थी। इसीलिये दत्ताजी की दृष्टि में ही वह कार्य, जो मल्हारराव होल्कर ने सम्पन्न किया था, सन्देहात्मक था।

मल्हारराव होल्कर ने उदीयमान अफगान योद्धा नफीबखाँ के प्रति सदा सहृदयता का व्यवहारकिया था। मल्हार उसे अपना दत्तक पुत्र भी कहता था। यह मल्हारराव के उत्कृष्ट व्यक्तित्व का परिणाम था कि नफीबखाँ उसे

---

1. Jadunath Sarkar : op. cit. vol.2, pp. 117 .
2. Ibid .

चचाजान कहता था। किन्तु उक्त नीति लगभग बिल्कुल उलट होजानेवाली थी। दत्ताजी को आदेशित कियागया था कि मराठों के लिए उत्तरी भारत में एक मुख्य कांटे के रूप में विद्यमान नफीबखाँ को कुचलदियाजाये। अतः, दत्ताजी की दृष्टि में और उसकी नीति में नफीबखाँ का पराभव महत्वपूर्ण था। वस्तुतः नफीबखाँ के रहते पंजाब और बिहार सूबों में मराठा अभियान सफलतापूर्वक नहीं चलाये जा सकते थे। यदि उसे कुचलदियाजाता तो ये अभियान व्यावहारिक रूप से चलाये जा सकते थे। इस दृष्टि से पूना दरबार की यह नीति उचित कही जा सकती है किन्तु मल्हारराव द्वारा कियेगये सभी प्रबन्ध भी दत्ताजी की दृष्टि में सन्देहात्मक थे। दिल्ली अभियान पर कूच करने के चौथे दिन ही दत्ताजी ने दिल्ली दरबार को यह समाचार भेजदिया था कि पेशवा ने मल्हार के स्थान पर उसे आगरा का सूबेदार नियुक्तकिया है । अतः, पूर्व निश्चित धनराशि उसे ही प्रदानकीजाये अन्यथा दिल्ली को लूट का सामनाकरनापड़ेगा। वजीर इमादुलमुल्क ने इस सूचना के उपरान्त दिल्ली के सभी द्वारों पर बड़ी संख्या में रक्षकों की नियुक्ति कर दी ताकि मराठों द्वारा सम्भावित क्षति से दिल्ली को सुरक्षित रखा जा सके। पुरानी दिल्ली के निवासियों ने भी शहर के परकोटे में शरणली। उसने दत्ताजी से यह पत्र व्यवहार किया कि 7–8 लाख रुपया लेकर वह दिल्ली को सुरक्षित छोड़ता हुआ अपना लाहोर कूच जारी रखे। 4 जनवरी, 1759 को मराठा सेना **बुराड़ीघाट**[3]

---

3. यह वर्तमान दिल्ली के अन्तर्गत त्यागी जमींदारों का गाँव है। मध्यकालीन स्रोतों में भी इसके विविध उल्लेख प्राप्त हैं। आगे चलकर यहीं दत्ताजी का प्राणान्त हुआ।

पहुँची। दिल्ली से प्रायः 16 कि0 मी0 उत्तर में स्थित इसी स्थान पर दो दिन बाद वजीर इमादुल्मुल्क ने दत्ताजी के साथ लम्बी वार्ता की । इस वार्ता के दो या तीन दिन बाद दक्कनी सैनिकों ने यमुना के पूर्वी तट स्थित लोनी नामक कस्बे को घेर लिया और वहाँ पर तथा आस--पास से धन एकत्रितकिया। वजीर ने दत्ताजी से इस कार्य के प्रति विरोध जताया और कहा कि ''जब आप के स्वामी और मेरे स्वामी के बीच मित्रता है उस समय यह कार्य कियाजाना क्या न्यायोचित है ?''

इस पर दत्ताजी ने अपने आदमियों को वापिस बुलालिया। उससे अगले दिन सहारनपुर जिले में अपने सैनिक भेजे। यह इलाका नजीबखाँ की जागीर में था। यद्यपि दत्ताजी ने अपने सैनिकों को यह कठोर आदेशदिये थे कि किसी भी गाँव को न छेड़ाजाये। 14 जनवरी, 1754 को दत्ताजी दक्षिण की ओर बढ़ा और वह दिल्ली के उत्तरी दरवाजे के पास जापहुँचा।[4] उसने वजीर से मिलने से इंकारकरदिया और उसके प्रति कठोर शब्द कहे। इस पर वजीर सचेत होगया और उसने शहर की सुरक्षा के कड़े पुख्ता इन्तजाम किये ताकि किसी भी सम्भावित आक्रमण से बचा जा सके। दत्ताजी के सैनिकों ने शहर को भयभीत करदिया जिससे वहाँ के धनीमानी लोग भागनिकले। मराठा सैनिकों ने दिल्ली के उत्तर–पश्चिम स्थित गाँव को लूटलिया। किन्तु कहीं--कहीं इसका उलटा भी हुआ। क्रोधित ग्रामीणों ने भी अकेले दुकेले मराठा सैनिकों को लूटा और उनकी गाड़ियाँ

---

4. वही ।

और घोड़ियाँ छीनलीं।

इसके बाद दत्ताजी ने अपना शिविर मुख्यालय बदललिया। उसने बुराड़ी घाट के स्थान पर तकियामजनूँ पर अपना शिविर गाड़दिया।[5] यह स्थानान्तरण 17 जनवरी, 1759 को सम्पन्न हुआ। यहाँ से उसने एक टुकड़ी भेजी जो वर्तमान ईदगाह के पीछे स्थित काली पहाड़ी पर दृष्टिगोचर हुई। इस टुकड़ी ने फाटक मिश्रीखान और जिन्सी तोपखाना (निकट सराय रोहिल्ला) पर आक्रमण किये।[6] शाही सैनिकों ने जो गड्ढ़ों में छिपे हुए थे, मुकाबलाकिया, किन्तु उन्हें खदेड़दियागया। शाही सैनिकों को भारी क्षति उठानी पड़ी और भागजानापड़ा। मराठा सैनिकों ने उन्हें शहर के दरवाजे तक दौड़ादिया।[7] मराठों ने सबसे बड़ी शाही तोप, जिसका नाम **अटक** था, को जलादिया। उन्होंने सराय रोहिल्ला में लूटपाट की और दिल्ली दरवाजे के बाहर तक वही प्रभावी थे। यह ऐसा स्थान था जहाँ व्यापारियों ने विशाल अनाज का भण्डारण कियाहुआ था। यह झड़प और लूटपाट चार दिनों तक चली। इस बीच वजीर के सैनिकों ने कुछ मराठा सैनिकों को मारडाला।[8] अन्ततः, 23 जनवरी, 1759 को दत्ताजी ने शांतिवार्ता के लिए अन्ताजी मानकेश्वर, पुरुषोत्तम हिंगाने तथा कुछ अन्य व्यक्तियों को भेजा, लेकिन कोई सफलता नहीं मिली।

---

5. वही ।
6. वही ।
7. वही ।
8. वही ।

3--4 दिनों के बाद ही मराठा शिविर में रसद आपूर्ति टूटगई, कोई भी व्यापारी लूट के भय से उधर जाने को तैयार न था। इससे मराठा शिविर में अचानक भुखमरी की स्थिति पैदा हो गई। 9—10 हजार दक्कनी सैनिकों ने यमुना पार कर गाजियाबाद पर धावा बोला, किन्तु नगरवासियों के विरोध के कारण वे कस्बे की चारदीवारी में न घुस सके। यहाँ पहले से ही बन्दूकें और तोपें लगीहुई थीं। अतः, वे डासना की और मुड़गए [9] और उन्होंने धन और अनाज इकट्ठा किया । यह इलाका वजीर की जागीर में था और यहीं से उन्होंने मराठा शिविर को रसद व अन्य वस्तुएं भेजीं। वजीर ने दत्ताजी से यह विरोध प्रदर्शित किया कि शांति वार्ता के दौरान यह लूटपाट उत्तेजक थी। अतः, दत्ताजी ने सैनिकों को वापिस बुलालिया। 29 जनवरी, 1759 को मराठा सैनिक शाहदरा व पटपड़गंज की ओर गए किन्तु वहाँ पर वजीर द्वारा तैनात सैनिक थे। उन्होंने दोनों स्थानों पर बाजारों की रक्षा की। किन्तु, जो व्यापारी अपना अनाज लादकर दिल्ली की ओर आ रहे थे, वे लूटलिएगए। अगले दिन एक समझौता होगया और 01 फरवरी, 1757 को दत्ताजी अपने उत्तरी अभियान पर आगे बढ़गया।[10]

दत्ताजी पंजाब जापहुँचा और उसने पंजाब को पुनः विजय कर लिया । मई, 1759 को वह दिल्ली की ओर वापिस आया। पानीपत के पूर्व में स्थित राम घाट से यमुना पार करके मराठा सैनिक शामली में रुके।

---

9. सैयद नजमुल रजा रिजवी : **अठारहवीं सदी के जमींदार**, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, 1988 पृ0 21—22।
10 Jadunath Sarkar : op. cit. Vol. 2 , pp. 120.

वह 23 मई को कैराना जापहुँचा और महीने के आखिरी दिनों में बागपत के दक्षिणी हिस्से में जापहुँचा। दत्ताजी ने नजीबखाँ को बुलवाया। पहले यह तय हुआ कि नजीबखाँ मराठों की सहायता करेगा और अवध के रास्ते विजय अभियान में सैनिक मदद देगा। नजीबखाँ की शर्त थी कि उसके अधिकारों को सुरक्षित रखाजाए । नजीबखाँ को साथ लेना दत्ताजी को उचित जानपड़ा क्योंकि दत्ताजी स्वयं साम्राज्य के प्रशासन का कार्यभार हस्तगत करना चाहता था ताकि अधिक से अधिक नियमित धन संग्रह हो सके। इसीलिए उसने वजीर को अपदस्थ करने का निर्णय लेलिया था।[11] अतः, 1 जून को उसने अब्दुल अहमद खाँ और अन्ताजी माकेश्वर को वजीर के पास यह सन्देश लेकर भेजा कि वह अपने पद से त्यागपत्र देदे और साम्राज्य का नियंत्रण स्वयं दत्ताजी के नियंत्रण में सौंप दे। मराठा सन्देश में युद्ध की धमकी दीगई किन्तु कुछ दिनों के बाद ही दत्ताजी को एक बड़ी धनराशि देकर सन्तुष्ट कियागया और वह बागपत से पीछे वापस मुड गया[12] और इस प्रकार दिल्ली आक्रमण से बच गई।

रुहेला सरदार नजीबखाँ और दत्ताजी सिंधिया के मध्य बिहार अभियान को लेकर जो रणनीति बनी थी, वह क्रियान्वित होने से पूर्व ही असफल होगई। हुआ यह था कि नजीबखाँ किसी भी स्थिति में बिहार अभियान में अपने सैनिक भेजना नहीं चाहता था। उसे यह भय था कि यह स्थिति उसके स्वयं के

---

11. Op.cit. pp. 120--121.
12. Ibid.

लिये हानिकारक थी। वह अपनी जागीर के निकटवर्ती क्षेत्रो में नियुक्त स्थानीय मराठा अधिकारियों के व्यवहार से यह निष्कर्ष निकालता था कि यदि उसके सैनिक बिहार अभियान पर गये तो ये स्थानीय स्तर के मराठा अधिकारी उसके इलाकों को हड़प सकते थे। वास्तव में उसका यह भय मात्र कल्पनाजन्य भी नहीं था। सच्चाई यह थी कि उसके साथ 1759 में, यानी मात्र दो महीने पूर्व, ऐसी एक घटना घटित हो चुकी थी जिसमें उसके हाथ से सिकन्दराबाद निकलगया था। हुआ यह था कि गोविन्द बल्लाल बुन्देले ने इटावा से उत्तर की ओर कूचकिया जबकि मराठों और नजीबखाँ के बीच पूर्व शांति सम्बन्ध थे तो भी गोविन्द बल्लाल बुन्देले ने सिकन्दराबाद में शिविर लगालिया और उसके ऐजेन्ट को सिकन्दराबाद से भगादिया तथा वहाँ मराठा अधिकार स्थापित करलिया था।

दूसरी घटना दत्ताजी के साथ ही घटित हुई थी उसमें नजीबखाँ ने यह निष्कर्ष निकाला था कि वह दत्ताजी सिंधिया पर विश्वास नहीं कर सकता था। वास्तव में दत्ताजी ने नजीबखाँ को एक भेंटवार्ता हेतु बुलवाया था जिसे लेकर नजीबखाँ ने यह निष्कर्ष निकाला कि दत्ताजी उसे बुलवाकर गिरफ्तार करना चाहता था और इस घटना के बाद नफीबखाँ अपने इलाके में चलागया।

नजीबखाँ शामली से चलकर सहारनपुर पहुँचा जबकि दत्ताजी ने मेरठ का रास्ता पकड़ा। मेरठ के निकट **जेता गूजर**[13] के किले पर उसने आक्रमण

---

13. Ibid .

किया। उसके बाद दत्ताजी बारहा सैयदों के[14] मूल स्थान के समीप ठहरा। यह सैयद रुहेलों के कटट्र शत्रु थे। वास्तव में **भैंसी युद्ध** ने सदैव के लिए इन के मन में रुहेलों के प्रति कटुतापूर्ण शत्रुता के बीज बोरखे थे। भैंसी युद्ध में सैयदों की **छातरोड़ी** शाखा को छोड़कर शेष सभी ने बड़ी सख्या में अपने वीर नागरिक खोदिए थे। दरअसल मुहम्मदशाह के राज्यकाल में **किंग मेकर्स** कहे जाने वाले सैयदबन्धु इसी बारहा क्षेत्र के मूल निवासी थे। ये दोनों भाई क्रमशः **अब्दुल्ला खाँ** और **हुसैन अली खाँ** बारहा थे।[15]

1737 में बचे–खुचे बारहा सैयद सरकारी सेवाओं से विहीन होकर अपने पैतृक इलाके में रहरहे थे कि उनके ऊपर भैंसी का युद्ध थोपदियागया। इस युद्ध में बारहा सैयदों की ओर से सैयद बन्धुओं के जीवित भाई सैयद सैफुद्दीन अली खाँ, जो पहले मुरादाबाद में गवर्नर रहचुके थे, ने सैयद योद्धा लेकर अपने सम्मान की सुरक्षा के लिए बढ़तीहुई मुगल फौज का सामना किया। यह युद्ध खतौली कस्बे के निकट स्थित ग्राम भैंसी में प्राकृतिक नाले के बायें तट पर हुआ था। इस युद्ध में सैयद सैफुद्दीन अली खाँ का सर काटने वाला रुहेला सरदार रहमत अली खाँ था। उसके इस कृत्य के उपहार स्वरूप उसे मुगल दरबार के शाही आदेशों से नगाड़ा रखने का अधिकार भी दियागया था।

---

14. These Sayyads are Shias while Najib Khan was the Sunni champion. Moreover he has snatched away many of their estates in the country around Miranpur.
15. विघ्नेश कुमार : **गाजियाबाद के चार हजार वर्ष** , हस्तिनापुर शोध संस्थान ,मेरठ, 2006, पृ0 112 ।

बारहा सैयद इस घटना को कभी नहीं भूल सके।[16] इतने वर्षों बाद जब दत्ताजी सिंधिया का शिविर जब उनके गृह–इलाके में आया तो उन्हें यह अच्छा अवसर जानपड़ा। उनमें से कुछ असरदार सैयद दत्ताजी के सम्पर्क में अवश्य ही आये होंगे। यह सोचना न्याय संगत लगता है।

यहाँ एक ऐतिहासिक कल्पना (Historical imagination) की जा सकती है। उत्तरी भारत में पहली बार दिल्ली दरबार की आन्तरिक गुटबाजी में दखलदेने के लिए सैयद बन्धुओं के साथ ही मराठे आये थे और पेशवा बालाजी विश्वनाथ के नेतृत्व में 15000 मराठा सैनिकों के बल पर सैयद बन्धुओं ने दिल्ली के लालकिले में सम्राट फरुखसियर को अपदस्थ करके अपनी इच्छा से सम्राट बनवाने का प्रयोगकिया था। इस समस्त घटनाक्रम ने बारहा सैयदों और मराठों में पारस्परिक गहन मित्रता के संकेतदिए थे।[17] अतः, यह सोचना महत्वपूर्ण है कि भैंसी के युद्ध क्षेत्र में और उसके बाद शाही सेना के आततायी पूर्ण अत्याचारों से त्रस्त हुए बारहा सैयदों ने आन्तरिक रूप से नजीब के इलाके के समीप दत्ताजी सिंधिया का हार्दिक स्वागत कियाहोगा।

ऐसा सोचना इसलिये और भी तथ्यसंगत लगता है क्योंकि रुहेले बारहा सैयदों के क्षेत्र में लगातार प्रभावपूर्ण दखलन्दाजी कररहे थे जिसे ये

---

16. **साक्षात्कार**, दिनांक 26–11–2004, सैयद मुमताज अली पुत्र स्व0 सैयद वाजिद अली, पौत्र स्व0 सैयद जीवन अली, आयु 55 वर्ष , श्री विजय पाल सिंह पुत्र स्व0 श्री मुंशी राम, आयु 76 वर्ष , श्री सेवा राम पुत्र स्व0 श्री कबूल सिंह , आयु 55 वर्ष, जाति जाट, ग्राम बेलड़ा, जिला मुजफ्फरनगर।

17. Satish Chandra : **Parties and Politics at the Mughal Court .** (1707--1740), pp. 257

निरीह अवस्था में असहाय होकर विवशतापूर्वक सहनकरते जारहे थे। सहारनपुर से लेकर अलीगढ़ तक का सम्पूर्ण इलाका नजीबखाँ के प्रत्यक्ष प्रभाव में था। साथ ही, नजीबखाँ उच्च कोटि का सेनानी था। अतः, उसने बारहा क्षेत्र में अपनी सामरिक शक्ति के केन्द्र के रूप में शुक्रताल में एक मजबूत किले का निर्माण कराया था।[18] शुक्रताल क्योंकि बारहा सैयदों के हृदयक्षेत्र कहे जानेवाले जानसठ के समीप स्थित है। अतः, बारहा सैयद इस दुर्ग को लेकर बेचैन होने स्वाभाविक थे। इस सम्भावना से इंकार नहीं किया जा सकता कि नजीबखाँ के विरुद्ध किसी भी सामरिक योजना में इस क्षेत्र से दत्ताजी सिंधिया को विविध प्रकार का समर्थन सुलभ रहना था।

ऊपरी दोआब में सशक्त संघर्ष

दत्ताजी ने नजीबखाँ से, जो इस समय सहारनपुर में था, माँग की, कि वह दत्ताजी को सहारनपुर के कुछ परगने दे, किन्तु नजीबखाँ तैयार नहीं हुआ। उसने इस बात पर बलदिया कि वह एक निश्चित धनराशि देने के लिए तभी सहमत हो सकता था जबकि मराठे उसके इलाकों से निकल जावें। इस शर्त पर दत्ताजी कुपित होगया और उसने नजीबखाँ की चौकियों पर अधिकार करने के लिए मराठा सैनिक टुकड़ियाँ भेज दीं।[19] रुहेले भयभीत होकर विना लड़े भागनिकले। इस प्रकार, अन्ततः ऊपरी गंगा–यमुना दोआब में एक बड़े युद्ध की

---

18. Jadhunath Sarkar: op. cit. pp. 120.
19. Ibid .

भूमिका स्पष्ट रूप से सामने थी।

नजीब खाँ ने आत्मरक्षा का सुदृढ़ प्रबन्ध पहले ही करलिया था। वह एक दूरदर्शी योजनाकार था और भविष्य की चुनौतियों को समय रहते ही सूक्ष्मतः पहचानने में समर्थवान था। उसने गंगा नदी के बायें तट पर स्थित प्राचीन पौराणिक तीर्थ **सुकरताल (शुक्रताल)**[20] में एक मजबूत किला बनवालिया था। यह स्थान सामरिक दृष्टि से ऊपरी दोआब में अत्युत्तम था। इस ऊँचे **खोले** पर बने किले के एक ओर पूर्व में शक्तिशाली गंगा प्रवाहित थी जो पूर्व दिशा में इसे महान् और अद्वितीय सुरक्षा प्रदानकरती थी।

इसके पश्चिमी ओर ऊँचे-ऊँचे टीलों की लम्बी श्रृंखला इसकी प्राकृतिक सुरक्षा पंक्ति निर्मितकरती थी। शुक्रताल के उत्तर, पूर्व और दक्षिण दिशाओं में असंख्य छोटे-बड़े गहरे नाले विद्यमान होने से इस स्थान को प्राकृतिक सुरक्षा कवच प्रदानकरते थे। साथ ही, रेतीली मिट्टी, बल्कि रेत, में इन नालों के गहरे कटान अश्वारोही सैनिकों की गतिविधियों के लिए लगभग पूर्णतः अनुपयुक्त परिस्थितियों का निर्माणकरते थे।

किले की उत्तरी दिशा में गंगा की सहायक सोलानी नदी का प्रवाह

---

20. यह गंगा नदी के दाहिने तट पर स्थित हिन्दुओं का प्राचीन पौराणिक तीर्थस्थल है जो भागवतपुराण की कथा सुनाने के विषय में मुनि शुकदेव से सम्बन्धित है। व्यास और आदिवासी शुक जाति की कन्या के सहवास से इनका जन्महुआ मानाजाता है और इसलिए ये मुनि शुकदेव कहलाये। इन्होंने महाराजा परीक्षित को उनकी मृत्यु के पूर्व **भागवतपुराण** के रूप में धर्मोपदेशदिया था। गंगा किनारे जिस स्थल पर यह धर्मचर्चा सम्पन्न हुई उसे शुक मुनि के नाम पर ही **शुकताल** कहागया जो कालान्तर में **शुक्रताल** के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

था जिससे इस दिशा में भी पूर्व दिशा की भाँति शुक्रताल को अभेदनीय प्राकृतिक सुरक्षा उपलब्ध थी। पूर्व की ओर यत्र–तत्र गंगा में अवस्थित ऊँचे–ऊँचे रेतीले टापुओं ने इसे और भी अभेद्य बनादिया था।

इस दुर्भेद्य किले की सुरक्षा को और भी अधिक दृढ़तर बनाने के लिए नजीब खाँ ने योजनाबद्ध सैन्य निर्णयलिये। उसने किले के उत्तरी, दक्षिणी और पश्चिमी दिशाओं में किले की प्राचीरों से काफी दूर–दूर तक फैले उन्नत टीलों और गहरे नालों में स्थान–स्थान पर बन्दूकधारी सैनिक नियुक्तकिये।[21] यह व्यवस्था पश्चिम और दक्षिण पश्चिम में विशेषतः कीगई, क्योंकि दत्ताजी इन्हीं ओर से किले पर आक्रमण कर सकता था। अब ऐसी सैन्य व्यवस्था होगयी थी कि केवल खाद्यान्न का संकट ही किले के पतन का कारण हो सकता था। उसने इस एकमात्र संभावित कारण का निवारण भी करलिया। उसने गंगा नदी पर नावों का पुल तैयार करवालिया। यह नितान्त सुरक्षित स्थिति में था। ऐसी स्थिति में किले का पतन केवल तब सम्भव था जबकि दत्ताजी की सेना गंगा पार कर दूसरी ओर जाकर नावों के पुल से आकर किले पर अभियान करे, किन्तु वर्षा ऋतु प्रारम्भ हो जाने पर यह सम्भावना निर्मूल थी।

15 सितम्बर, 1759 की शुक्रताल सैन्य झड़प

15 सितम्बर, 1759 को दोनों पक्षों के बीच अब तक की सबसे

---

21. Jadunath Sarkar : op. cit. pp. 121 .

घातक सैन्य झड़प हुई। इस दिन नजीबखाँ ने बड़ी चालाकी और सूझ–बूझ का परिचय दिया।[22] इसमें मराठा सेना के सर्वोत्तम घुड़सवार सैनिको में से 500 खेत–रहे, जबकि अफगान पक्ष के 50 बन्दूकची मारेगये और लगभग 100 घायल हुए। इस झड़प ने दत्ताजी को यह अनुभव करादिया कि गहरे नालों और ऊँचे टीलों में छिपे अफगान बन्दूकधारी सैनिकों के लिए घुड़सवार मराठा सैनिकों की अपेक्षा कहीं अधिक सुरक्षित और मारक स्थिति उपलब्ध थी। वस्तुतः शुक्रताल की भौगोलिक स्थिति अश्वारोही सेना की गतिविधियों के योग्य न थी जबकि पैदल बन्दूकची सेना परिणामकारी मारक क्षमता से अनुकूलन प्राप्त कररही थी।[23]

15 सितम्बर, 1759 का दिन दत्ताजी सिंधिया द्वारा शुक्रताल किले की घेराबन्दी का सर्वाधिक हानिप्रद दिन था।[24] इस झड़प का ऊपरी दोआब की उन प्रारम्भिक सैन्य झड़पों में उल्लेखनीय महत्व है जो मराठों और रुहेलों के मध्य 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुई थी। हुआ यह था कि इस दिन नजीब ने बन्दूकधारी पैदल सैनिक मराठा शिविर की ओर भेजे। वास्तव में यह उसकी एक शानदार चाल थी। दत्ताजी ने एक टुकड़ी उनका सामना करने के लिए भेजी और स्वयं सात हजार चुनेहुए घुड़सवारों को लेकर तेज गति से, किन्तु चुपचाप, रुहेलों की इस टुकड़ी को भुलावे में रखतेहुए इसके पीछे पहुँचने के लिए प्रयासरत

---

22. Rajwade V.K. and others (ed.) **Marathanchya Itihasanchi Sadharen**, Vol. I pp. 142--146 .
23. Ibid . pp. 138--142 .
24. **Siyar-ul-Mutakkhharim** , Vol. III, pp. 62 .

हुआ।[25] चतुर नजीब खाँ दत्ताजी की बहादुरी को जानता था और इसीलिए उसनेयह दावचला था। वास्तव में उसने दस हजार बन्दूकधारी पैदल सैनिक पहले ही सूखे नाले में तैनात कररखे थे। जैसे ही दत्ताजी अपने सात हजार अश्वारोही सैनिकों के साथ युद्धरत रुहेला टुकड़ी को भुलावे में रखतेहुए पीछे से आकर काट डालने के लिए चला, घोड़ों की टापों से रेतीली जमीन पर धूल उड़नेलगी। धूल का उड़ना नितान्त स्वाभाविक था क्योंकि शुक्रताल का सारा इलाका अत्यधिक रेतीला था। नजीब खाँ अपनी बनाई योजना पर सफलहुआ। जैसे ही दत्ताजी सूखे नाले को पार करने के लिए आगे बढ़ा, वातावरण में व्याप्त हो चुकी धुन्ध में सात हजार सैनिकों के भाले व तलवारें अपनी धात्विक चमक के कारण उनका आभास कराने लगे। दत्ताजी अपनी वीरतापूर्ण योजना को क्रियान्वित कररहा था जबकि दूसरी ओर नजीब खाँ अपनी चालाकी पर विश्वास कररहा था । नजीब को दत्ताजी के हर क्षण की जानकारी थी जबकि दत्ता जी नाले में तैनात बन्दूक लिये दस हजार रुहेलों के प्रति बेखबर था। जैसे ही मराठा सैनिक रुहेलों की बन्दूकों की मारक क्षमता के भीतरआये, उनमें से दो हजार ने एक साथ बन्दूकें दाग दीं।[26] तत्काल ही पाँच सौ योग्य मराठा घुड़सवारों के शव जमीन पर थे। धुन्ध भरे वातावरण में सब कुछ अस्पष्ट--सा था कि इतने में ही एक रुहेले ने जानकोजी सिंधिया के घोड़े की लगाम पकड़ली और उसने दूसरे हाथ से जानकोजी पर

---

25. Ibid
26. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 122

तलवार से वारकिया। जानकोजी को यद्यपि बचालियागया और उस रुहेले को काटडालागया।[27] इसके पश्चात् वीर सेनापति दत्ताजी सिंधिया और चालाक व अनुभवी नजीब के बीच कोई भी आमने–सामने का बड़ा संघर्ष नहीं हुआ। छोटी–मोटी मुठभेड़ें यद्यपि चलतीरहीं। इस लड़ाई में बाराह सैयदों ने अपने परम्परागत शौर्य का प्रदर्शनकिया।[28] यद्यपि उनमें से अधिकांश रुहेलों के द्वारा काटडालेगये।

गोविन्द बल्लाल बुन्देले का नजीबाबाद अभियान

दत्ताजी ने हर सम्भव प्रयत्नकिया कि नजीब खाँ से युद्ध के मैदान में आमना–सामना हो किन्तु नजीब खाँ अपनी सूक्ष्म सैन्य कूटनीति से अपनी शक्ति को बचायेहुए बैठा था। वह लड़ने के लिए किले से बाहर निकलना नहीं चाहता था। किले की घेराबन्दी की अवधि भी लम्बी होचली थी। अतः, दत्ताजी ने नजीब को किले से बाहर युद्ध के मैदान में लाने की युक्ति सोची। उसने गोविन्द बुन्देले को नजीबाबाद[29] पर आक्रमण करने के लिए भेजा। नजीब ने अपने नाम पर इस शहर को बसाया था जहाँ पत्थरगढ़ नामक प्रसिद्ध दुर्ग बनवायागया था। शुक्रताल घेरे के दौरान नजीब ने अपने और अपने प्रमुख सहयोगियों के परिवारों और सम्पत्तियों को यहीं सुरक्षित छोड़रखा था। नजीबाबाद का एकमात्र रक्षक

---

27. Ibid .
28. साक्षात्कार ,दिनांक 09–09–2005, सैयद मुमताज अली, पूर्व प्रधान ,बेलड़ा ,जानसठ, मुजफ्फरनगर।
29. Latitude. 30^0 37΄ N Longitude. 78^0 24΄ E

नजीब का पुत्र जाब्ता खाँ था जिसके पास मुट्ठी भर सैनिक ही छोड़गये थे। वास्तव में नजीब ने अपनी लगभग समस्त सैन्य शक्ति शुक्रताल पर ही केन्द्रित कररखी थी।

मराठा टुकड़ियों ने उत्तर–पश्चिम दिशा में गंगा नदी पार कर साकलगढ़ पर अभियान किया। यहाँ की अशक्त रक्षा पंक्ति को भेदकर उन्होंने इस पर अधिकार करलिया। रुहेलों की ओर से मैदान में युद्ध करनेवाला कोई न था। किन्तु रुहेलखण्ड के अफगान नस्लीय सरदार अली मुहम्मद रुहेले के उत्तराधिकारी सादुल्ला खाँ के नेतृत्व में आगे बढ़े। उसके साथ दुन्दे खाँ और हाफिज रहमत खाँ नजीबाबाद जापहुँचे और उन्होंने पूरी शक्ति के साथ यहाँ कस्बे की मोर्चाबन्दी कर ली। अतः, जब गोविन्द बुन्देले की घुड़सवार टुकडियाँ नजीबाबाद पहुँची, उन्हें कठिन और अभेद्य मोर्चेबन्दी के सामने पीछे हटना पड़ा। इस प्रकार शुक्रताल की किलेबन्दी से नजीब को बाहर लाकर मैदान में युद्ध करने को विवशकरने की दत्ताजी की योजना सफल नहीं हो सकी। गोविन्द बुन्देला वापस दत्ताजी के पास आगया। उसने वापसी में लगभग 100 घोड़े रुहेलों से हथियालिये और साथ ही, शुक्रताल में नजीब के नावों के पुल की दो नावें नष्ट करदीं। नजीब के लिए यह कोई विशेष क्षति न थी। दस दिन इसी प्रकार व्यतीत होगये। हाफिज रहमत खाँ दोनों पक्षों के बीच शान्ति हेतु वार्ता चलातारहा।

गोविन्द बुन्देले के अभियान का नजीब पर इतना असर अवश्य पड़ा था कि कुछ दिनों के लिए किले में रसद की कमी होगयी थी। गेहूँ के दाम इतने

बढ़े थे कि एक रुपये का चार किलो मिलता था। इस अवधि में **घुघनी** जो कि उबाल कर खायी गई थी,[30] काम आयी। अफगान योद्धा अपने परिवारों की सुरक्षा को लेकर भयभीत थे और यह भय दिन–प्रतिदिन बढ़ताजारहा था। किले में विद्यमान इन योद्धाओं और सैनिकों के परिवार जिन गाँवों में रहरहे थे उनमें गोविन्द बुन्देले के अभियानों का भय बढ़रहा था।[31] इसी हताशा में वे किंर्तव्य–विमूढ़ थे और कोई अपेक्षाकृत सरल हल निकालने के पक्ष में आगये थे। किन्तु उनके पुराने अनुभवी सरदार नजीब ने अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति का परिचयदिया। उसने उनसे कहा कि **अल्लाह** को याद रखो। अहमद शाह आरहा है। घेराबन्दी के पहले दिन से ही मैंने अपना दिल मौत पर लगादिया है। जो कुछ भाग्य में बदा है वही होगा। युद्ध के अलावा कुछ मत सोचो।''[32] उसके इस वार्तालाप ने गोविन्द बल्लाल बुन्देले के कार्य का प्रभाव नष्टकरदिया। रुहेले नजीब के साथ जी–जान से जुट गये।

इसके पश्चात् गोविन्द के सैनिक अपने शिविरों की पर्याप्त सुरक्षा होने से निश्चिन्त थे और असावधान भी थे कि एक दिन अचानक उन्हें अवध सेना का हरावल दस्ता दिखायीदिया। इस सेना में उमराव गिर और अनूपगिर के नेतृत्व में 10000 सैनिक थे। ऐसी अफवाहें फैलीं कि अवध सेना का मुख्य भाग स्वयं

---

30. यह एक प्रकार का ऐसा खाद्य था जो प्रायः पशुओं को खिलायाजाता था ।
31. वस्तुतः, गोविन्द बल्लाल बुन्देला एक राजस्व अधिकारी था।
32. इन शब्दों ने रुहेला लड़ाकों के दिल में उत्साह भरदिया था। बाबर ने भी खानवा युद्ध से पूर्व इसी प्रकार हतोत्साहित सैनिकों में अल्लाह के नाम पर ही फिर से उत्साह भरदिया था।

नवाब शुजाउद्दौला के नेतृत्व में आनेवाला था जिसमें 30000 लड़ाके थे।

इन सब स्थितियों ने 5 महीनों से घेरा डाले मराठा सैनिकों में भय उत्पन्नकिया। कई झड़पें हुईं और बहुत से मराठे खेतरहे। गोविन्द बल्लाल बुन्देले के अधीन टुकड़ी में से लगभग आधे सैनिक अनुपयुक्त स्थान पर गंगा पार करते समय डूब कर मरगये। जल्दी में इनका साज–सामान भी पीछे छूटगया। शेष आधे सैनिक दत्ताजी के शिविर में पहुँचकर निश्चिन्त हो सके। इस भयावह परिस्थिति का अनुमान दत्ताजी को लिखेगये गोविन्द बल्लाल बुन्देले के पत्र से स्पष्ट झलकता है जिसमें उसने लिखा था – "उसके सिपाही महान कठिनाई और जीवन के लिये आसन्न खतरे से जूझ रहे थे।" उमरावगिर के अधीन 5000 अवध अश्वारोही नावों के पुल से होकर शुक्रताल पहुँचगये और वे शुक्रताल से थोड़ा दक्षिण में स्थित किलेबन्द शिविर में डटगये।[33]

इसके कुछ दिन बाद शुजाउद्दौला स्वयं नदी के दूसरे तट पर अपनी पूरी शक्ति के साथ पहुँचगया। इससे मराठों में भय व्याप्त होगया। एक अफवाह थी कि अब नजीब पूर्वी तट से निश्चिन्त होकर मराठा शिविर पर अचानक हमला करनेवाला था। केवल इसी सूचना से तीनों मराठा सेनापतियों के शिविरों में सैनिकों की भीड़ कोलाहल करनेलगी और शत्रु के एक भी सैनिक को देखे विना ही असमंजसपूर्ण अवस्था में नियन्त्रणहीन होकर भागनिकली। भागते–भागते वे

---

33. उमरावगिर एवं उसका भाई अनूपगिर वास्तव में राजेन्द्रगिर के संरक्षित थे जो अवध के नबाब का सहयोगी रहा था ।

13 कि0मी0 पीछे पहुँचगये। दत्ताजी प्रातःकालीन सर्वेक्षण कररहा था, उस महान घुड़सवार ने तेजी से अश्व दौड़ाया और इस भीड़ से आगे पहुँचकर इन्हें आवेशपूर्वक सम्बोधित करते हुए कहा कि यह केवल अफवाह थी और अफवाह फैलानेवाले को गिरफ्तार कर लियागया है। तदुपरान्त भगौड़ी भीड़ वहीं रुक गई। किन्तु मराठा शिविरों में दिन–प्रतिदिन भय का वातावरण बनताजारहा था। यह निर्मूल न था वरन् इसमें वास्तविकता विद्यमान थी। अभी पिछली परिस्थितियों से और अफवाहपूर्ण सूचनाओं से उबरे न थे कि सूचना मिली कि अब्दाली की सेनाएं पंजाब में घुसआई थीं। पंजाब का सूबेदार साबाजी सिंधिया विना लड़े ही दत्ताजी की ओर भागा आ रहा था।[34]

पंजाब से भागकर साबाजी सिंधिया 8 नवम्बर, 1759 को शुक्रताल की घेराबन्दी में संलग्न दत्ताजी के पास पहुँचगया। इस पर दत्ताजी अत्यधिक कर्त्तव्यविमूढ़ होगया था। पंजाब में इसका सारा किया–धरा एक ही झटके में नष्ट होचुका था। उसका 5 महीनों का शुक्रताल घेरा व्यर्थ सिद्ध होरहा था। इससे कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ बल्कि उल्टे जन और धन की हानि ही हुई थी और अब यदि अब्दाली दिल्ली पर अधिकार करके शुक्रताल आता, तो उसकी स्थिति दो पाटों के बीच पिसने जैसी हो सकती थी।

इस कठिन सैन्य परिस्थिति में कोई त्वरित निर्णय आवश्यक जानकर

---

34. साबाजी दुर्रानी लड़ाकों के विरुद्ध अपनी स्थिति स्थिर न रख सका ।

दत्ताजी ने युद्ध परिषद् में मंत्रणा की। इसमें निर्णय हुआ कि तम्बू और सामान 25 कि0मी0 पीछे सुरक्षित स्थान पर रखेजायें तथा दत्ताजी घेराबन्दी और कड़ी करे। शुजाउद्दौला ने अपने योग्य अधिकारी के माध्यम से शान्ति वार्ता चलायी और कहलवाया कि यदि नजीब को नष्ट करने की कोशिश की गई तो वह युद्ध में कूद पड़ेगा।

दत्ताजी भी शान्ति के पक्ष में था। उसने नजीब से 25 लाख रुपये का हर्जाना लेने की बातचलायी, किन्तु बात न बन सकी और युद्ध निश्चित हो-गया। विना हर्जाना लिये दत्ताजी का पीछे हटना स्वयं उसकी प्रतिष्ठा के लिए आघात था। ऐसे में वह पूना दरबार में मुँह दिखाने के योग्य नहीं रह सकता था।

इस प्रकार, ऊपरी दोआब में शुक्रताल, जो कि महाभारतकालीन हस्तिनापुर के खण्डहरों से दूर न था, उत्तरी भारत का सर्वाधिक महत्वपूर्ण केन्द्र बनता जारहा था। दत्ताजी अपने सैन्य सहायकों की सहायता निश्चित कर लेना चाहता था।

जिस दिन साबाजी शुक्रताल पहुँचा, उसी दिन सूरजमल की सेना का एक भाग दत्ताजी की सहायतार्थ पहुँचगया था। यह सेना रूपराम कोठारी के नेतृत्व में पहुँची थी जिसमें 5000 सैनिक थे।[35] लगभग इसी समय रुहेलों की सैनिक सहायता में भी वृद्धिहोगयी। फर्रुखाबाद का नवाब अहमद खाँ बंगश भी

---

35. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 124 .

शुक्रताल जापहुँचा। दत्ताजी ने तीव्रगामी साडिनी सवारों के माध्यम से मल्हारराव होल्कर को जल्दी आने का सन्देश भिजवाया, जो उस समय राजपूताना में था। उसने वजीर के पास भी सन्देशवाहक भेजे ताकि वह भी दोनों के सामान्य शत्रु नजीब को कुचलने के लिए सेना लेकर आये। उसने उसे लिखा – "आप किस असावधानी में सोये पड़े हो ?...... मैं तुम्हारी प्रार्थना पर यहाँ युद्ध में व्यस्त हूँ और तुम भरतपुर भाग जाने की योजना बनारहे हो।" वजीर इमाद को ससैन्य मराठा शिविर (शुक्रताल) आने के लिए यात्रा व्यय स्वरूप दो लाख रूपये देने हेतु सन्देशवाहक को दत्ताजी द्वारा अधिकृत कियागया था। 16 नवम्बर को वजीर ने सम्राट से औपचारिक स्वीकृति ली और वह चल पड़ा। वजीर मुरादनगर [36] तक आ भी गया था किन्तु यहाँ उसे सूचना मिली कि अफगान आक्रान्ताओं ने सरहिन्द तक समस्त पंजाब को अधिकृत करलिया था जबकि मराठे विना लड़े ही हर स्थान से भागगये थे। इस सूचना को पाकर वह वहीं से दिल्ली लौटगया जहाँ उसने 29 नवम्बर 1759 को कठपुतली सम्राट आलमगीर द्वितीय की हत्या करवादी।

सम्राट की हत्या की सूचना ने दत्ताजी की कठिनाइयों को और भी शीघ्र सामने लादिया। अब्दाली ने जो कि विगत दो महीनों से पंजाब में सिखों पर पर्याप्त नियंत्रण स्थापित करचुका था, इस सूचना से शीघ्र ही दिल्ली आने और इमाद को दण्डित करने का निर्णय लेलिया। तभी हफ्ता भर पहले एक दूसरी

---

36. मुरादनगर, वर्तमान गाजियाबाद जिले (उ0 प्र0) का तहसील मुख्यालय है जो राष्ट्रीय राजमार्ग एवं मेरठ–अम्बाला रेलवे लाइन पर स्थित है।

कठिनाई दत्ताजी के सामने थी जिसने मराठों को धक्का पहुँचाया था। मुल्तान में तैनात 6000 मराठा सैनिको में से केवल 500 सैनिक जीर्ण–शीर्ण दशा में शुक्रताल पहुँचपाये थे जिन्हें देखकर लगता था कि महान विपत्ति आसन्न थी।

वस्तुतः, दत्ताजी ने एक दूसरी रणनीति बनायी थी। इसके अनुसार वह गोविन्द बल्लाल के नेतृत्व में बंगश पठानों के केन्द्र फर्रुखाबाद पर आक्रमण करने और उसे हस्तगत करने के लिए मराठा सेना भेजना चाहता था। उस सेना को गंगा पर नावों का पुल बनाकर फर्रुखाबाद पर अभियान करना था।[37] वह ऐसा तब करना चाहता था जब सम्राट और वजीर शुक्रताल घेराबन्दी में उसके साथ अभियान पर होते। इससे उसे अपने कार्य में संवैधानिकता प्राप्त होजाती। किन्तु शुजाउद्दौला के निश्चय से तथा अब सम्राट की हत्या होजाने से उसकी यह योजना पूर्णतः रद्द होगयी थी। साथ ही, पंजाब से अब्दाली का आगमन विनाशक संकेत था।

मराठा सेना शुक्रताल से थानेश्वर तक

इन सामरिक परिस्थितियों में दत्ताजी के पास कोई विकल्प नहीं बचा। अब उसे शुक्रताल से अपना घेरा उठाने में भी महती सावधानी बरतनी थी। नजीब अपनी हल्की पैदल सेना को खाइयों से बाहर लाकर उसके शिविरों पर आक्रमण करवा सकता था। अन्ततः दत्ताजी सावधानीपूर्वक पीछे हटा। उसने

---

37. यह योजना व्यावहारिक रीति से सुसंगत नहीं कही जा सकती थी।

मुजफ्फरनगर के रास्ते से होकर पानीपत के निकट राम घाट पर यमुना पार की। वह 8 दिसम्बर, 1759 को शुक्रताल से चला था और यहाँ 20 दिसम्बर को पहुँचा था। यहीं उसे गुप्तचरों द्वारा सूचना मिली कि जहान खाँ, शाहपसन्द खाँ और अब्दुल समद खाँ के नेतृत्व में अब्दाली के अग्रिम दस्ते 15 दिसम्बर को **छत** और **बनूर** इलाकों में प्रवेश करचुके थे। उन्होंने अम्बाला को हस्तगत करलिया था और वे 32 से 48 कि0मी0 की चौड़ाईवाले फैलाव में होकर प्रतिदिन तेजी से आगे बढ़ते आरहे थे।

आसन्न युद्ध का केन्द्र दोआबा अथवा यमुना का दक्षिणतटवर्ती भूभाग बननेवाला था।

अम्बाला से कुंजपुरा स्थित मराठा शिविर की दूरी मात्र 77 कि0मी0 थी। अतः चार दिनों के अंतराल पर अब्दाली और दत्ताजी के सैनिकों में संघर्ष अनिवार्य था। दत्ताजी ने अपनी सेना दो भागों में विभक्त करदी। उसने चुने हुए 25,000 घुड़सवार योद्धाओं को अपने पास रखा। यह पूर्णतः हल्की घुड़सवार सेना कही जा सकती थी। सेना का दूसरा भाग जनकोजी के साथ 32 कि0मी0 पीछे था जिसमें तोपें थीं और इमाद की सैन्य टुकड़ी थी।[38] वजीर और मराठा सेनापतियों की स्थिति सुरक्षात्मक दृष्टि से और भी पीछे रखीगयी थी। गोविन्द

---

38. अब्दाली की सेना के आगे संख्यात्मक कमी के कारण सिंधिया नेताओं की स्थिति स्पष्ट रूप से कमजोर थी। किन्तु ,क्योंकि दत्ताजी प्रखर वीर था, अतः, युद्ध से बचने के विकल्प पर वह सोच नहीं रहा था, युद्ध अवश्यंभावी था।

बल्लाल को नवम्बर के अन्त में इटावा जाने के लिये आदेशित कियागया था और पुनः ऊपरी दोआब में मुख्य सेना के साथ रोक लियागया था। उसने जानकोजी के साथ 22 दिसम्बर को कुँजपुरा पारकिया और अब उसे तम्बू तथा परिवारजनों की सुरक्षा के लिए नियुक्त कियागया। गोविन्द बल्लाल इन्हें साथ लेकर दक्षिण की ओर चलदिया। ऐसा आसन्न युद्ध में परिस्थिति विपरीत होजाने की सम्भावना के कारण कियागया था।

यह प्रबन्ध 22 दिसम्बर को पूरा होगया और दत्ताजी कुंजपुरा से निकलकर शत्रु की टोह लेने के लिये चलपड़ा जबकि जनकोजी ने करनाल की राह पकड़ी। अफगान दल के अग्रिम दस्ते में बीस हजार सैनिक थे लेकिन वे पूरी तरह छिपतेहुए आगे बढ़रहे थे। छोटी–मोटी झड़पों के बाद पहला युद्ध 24 दिसम्बर को लड़ागया। युद्धस्थल तरावड़ी के मैदान से अधिक दूर न था। यह ऐतिहासिक मैदान थानेश्वर के दक्षिण–पूर्व में स्थित है। मराठों के अग्रभाग में पाँच हजार अश्वारोही थे। इनके साथ ही एक हजार तुर्की सैनिक थे जो वास्तव में वजीर की सेना का प्रमुख भाग थे। इन्हें मुहम्मद सैदखान किपचक का नेतृत्व प्राप्त था। इस सेना ने अब्दाली की सेना पर हमलाकिया और शुरूआती दौर में शत्रु को पराजित करतीहुई आगे बढ़गयी। ऐसे में अब्दाली ने पुरानी सामरिक चाल चली और चार हजार अश्वारोही शाहपसन्द खाँ के नेतृत्व में भेजदिये और दूसरी एक अन्य टुकड़ी भी भेजदी। मराठों के चार सौ सैनिक मारडालेगये। अफगान सैनिकों ने इनके सिर काटलिये और इन्हें अहमद शाह की सेवा में विजय के प्रथम

परिणाम के रूप में प्रस्तुतकिया। दत्ताजी को जैसे ही सूचना मिली वह तत्काल युद्धस्थल पर जा पहुँचा। उसने अपने सैनिकों के नरमुण्ड रहित शव धरती पर पड़े देखे। शाम होने को थी और दो घंटे दिन रहगया था। अतः युद्ध जारी न रह सकता था। दोनों पक्ष अपने–अपने शिविरों की ओर लौटगये। खुले युद्ध में यह मराठों की पहली स्पष्ट हार थी। अगली सुबह जब कोहरा छटगया तो पतालगा कि अब्दाली की समस्त सेना ने बूढ़िया के निकट यमुना पार करली थी। बूढ़िया, सहारनपुर से 25 कि0मी0 उत्तर–पश्चिम में है। इस प्रकार अब्दाली ने ऊपरी दोआब में प्रवेशकिया जिससे पुनः यह क्षेत्र सामरिक महत्व का क्षेत्र बनगया।

ऊपरी दोआब में नजीब खाँ पहले ही अब्दाली की सेना हेतु विभिन्न प्रबन्ध करचुका था। उन दोनों के बीच पहले पत्र व्यवहार था और वह शुक्रताल से चलकर सहारनपुर तक पहुँचचुका था। दोनों मिलकर यमुना के किनारे–किनारे दिल्ली की ओर चले। क्योंकि प्रत्येक कस्बे में नजीब खाँ के राजस्व अधिकारी नियुक्त थे, अतः आक्रान्ता की सेना को खाद्य आपूर्ति सुगमता पूर्वक बनीरही। ऊपरी दोआब के इस क्षेत्र में अब्दाली और उसका प्रत्येक सैनिक भरपेट भोजन कररहा था और वे दिल्ली की ओर बढ़रहे थे।

ऐसी परिस्थिति में दत्ताजी को आक्रान्ता की योजना समझ में आने लगी।[39] पंजाब और सरहिन्द अब्दाली के अधिकार में थे। समस्त दोआब अब्दाली

---

39. अहमद शाह अब्दाली ने दस महीने पश्चात् भी दत्ताजी को इसी व्यूह में घेरने का प्रयास किया था।

और नजीब के लिए सुरक्षित स्थल था। ऐसे में शत्रु दिल्ली अथवा मथुरा में यमुना पार करके मराठा सेना के पिछले हिस्से पर आक्रमण कर सकता था। अतः दत्ताजी तुरन्त दिल्ली की ओर चलपड़ा। ऐसा करके उसने उस सामरिक परिस्थिति की सम्भावना को समाप्त करदिया जिसमें वह दस महीने पश्चात् फँसगया था। कुँजपुरा से 27 दिसम्बर को चलकर दो दिन बाद वह सोनीपत पहुँचगया जहाँ से वह पाँच दिन तक शत्रु की टोह लेतारहा। वजीर 28 दिसम्बर को दिल्ली में अपने महल में जाकर सुरक्षित होगया और यमुना की ओर से खाइयाँ खुदवानेलगा। अहमदशाह अब्दाली के पास अब तक कई अफगान सरदार आमिले थे। इनमें हाफिज रहमत खाँ, दून्दे खाँ, सादुल्ला खाँ और मुल्ला सरदार प्रमुख थे। ये ऊपरी दोआब में यमुना के बायें तट पर लोनी नामक स्थान पर आडटे।[40] इनकी स्थिति की जानकारी लेकर दत्ताजी सोनीपत से बुराड़ी जापहुँचा। यह जगह 16 कि0मी0 दूर थी। दत्ताजी 4 जनवरी, 1760 ई0 को बुराड़ी आपहुँचा था। समस्त ऊपरी दोआब में अफगान सैनिकों और छोटे–बड़े अफगान सरदारों की गतिविधियाँ चलरही थीं। रुहेलों और बंगश पठानों के जत्थे के जत्थे लोनी की ओर चले आरहे थे जिसके फलस्वरूप अब्दाली व नजीब के सैनिकों की संख्या बढ़ती चलीगयी।

दत्ताजी सिंधिया अब सबसे भंयकरतम निर्णय लेने के लिए उद्यत

---

40. लोनी में नजीब के अधिकारी नियुक्त थे ।

था। उसकी सेना दुश्मन के सामने अत्यल्प थी। उसकी शत्रु सेना की संख्या दिन–प्रतिदिन पठानों के आने से बढ़तीजारही थी। इतने पर ही अन्त न था बल्कि पिछली झड़पों और तरावड़ी के युद्ध के कारण उसके सैनिक हतोत्साहित भी थे क्योंकि उन्हें अब्दाली अथवा नजीब की सेना पर एक बार भी जीत नहीं मिल सकी थी। मल्हारराव होल्कर के आने से दत्ताजी की स्थिति सँभल सकती थी परन्तु इसके लिए और 15 दिन लग सकते थे। वीर दत्ताजी 15 जनवरी, 1760 को दिल्ली पहुँचा। अपने और अपने सरदारों के स्त्री–बच्चों और भारी सामान को रेवाड़ी की ओर भेजदिया। इनमें उसकी गर्भवती पत्नी भगीरथीबाई भी थी। अब दत्ताजी ने स्त्री–बच्चों की सुरक्षा से निश्चिंत होकर अपनी व्यूह–रचना रची। उसने अपनी हल्की अश्व–सेना को सामान के साथ कुछ मील पीछे नियुक्तकिया।

यमुना का पूर्वी तट कुहासे के कारण अस्पष्ट था। दिन में धुंध रहने के कारण कुछ दिखायी नहीं देता था। इस स्थान पर मराठों का कोई मित्र अथवा सूचना देनेवाला न था। दत्ताजी किसी भी स्थिति में यह नहीं जान सकता था कि अब्दाली का अगला पग क्या होता अथवा वह यमुना को कहाँ पार करता? उसने छोटी–छोटी टुकड़ियों में मराठा सैनिक लगारखे थे ताकि अब्दाली को यमुना पार करने से रोका जा सके। साबाजी के अधीन 700 सैनिक बुराड़ी घाट[41] पर नियुक्त थे जिनकी स्थिति दत्ताजी के बिल्कुल निकट थी। दो या तीन स्थानों पर नीचे की

---

41. यह त्यागी जमींदारों का गाँव था ।

ओर दिल्ली तक मराठा सैनिक नियुक्त कियेगये थे। शरद ऋतु के इन दिनों में यमुना का जल स्तर न्यूनतम था। इसके अतिरिक्त बुराड़ी में यमुना की दो धाराएं होगयी थी। जिनके बीच एक चौड़ा टापू विद्यमान था। पूर्वी धारा की जल राशि अत्यधिक थी जबकि पश्चिमी छिछला नाला पानी से लगभग रहित था। इनमें दलदल व्याप्त थी। वास्तव में यह दलदली मात्र रहगया था। चौड़े टापू पर झाऊ घास, सरखंडे की ऊँची–ऊँची वनस्पति उगीहुई थी। यह इतनी ऊँची थी कि एक घुड़सवार दूसरे घुड़सवार को देख नहीं सकता था। 9 जनवरी, 1760 को साबाजी सिंधिया ने देखा कि नजीब खाँ ने नदी पार करली थी और वह टापू के पश्चिमी छोर पर आपहुँचा था। दिन तीन घंटे बीतचुका था और उसके अग्रगामी रुहेलों के पीछे अब्दाली के सैनिक थे। यह टापू अश्वारोही सैनिकों के पूर्णतः अनुपयुक्त था। अतः, रुहेले सरदार हाथियों पर चढ़कर आये थे। इनके पास हल्की तोपें थीं। ये तोपें हाथियों के दोनों ओर बंधी थीं। बुराड़ी घाट पर नियुक्त मराठा टुकड़ी ने देखा कि नदी का झाऊ युक्त पश्चिमी हिस्सा भारतीय अफगानों से भरउठा था। साबाजी ने तत्काल ही शत्रु को उलझाया किन्तु संख्याबल की अधिकता और मस्कटी फायरिंग ने, तलवार और भाले के ऊपर, नाले से लेकर बुराड़ी की ओर तक, बढ़तबनादी।[42] फलतः, मराठों का भारी नरसंहारहुआ। एक घंटे के पश्चात् 5 कि0मी0 दूर से दत्ताजी के नेतृत्व में आये मराठे सैनिकों ने युद्ध जारीरखा। इन्होंने

---

42. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 130.

विजयी रुहेलों पर बड़ी तेजी से आक्रमणकिया और नाले के पीछे ढकेलदिया। इन सैनिकों में सबसे आगे काफी स्यामवर्णी, नाटा और सबसे पतला आदमी चालीस वर्षीय स्वयं दत्ताजी था[43] जो अपने भाले से सबसे आगे बढ़कर शत्रु पर वार कर रहा था। अपनी प्रसिद्ध वीरता के कारण और अपनी चरित्र की विशेषता के कारण वही किसी भी अभियान में सबसे आगे रहकर शत्रु पर चोट– करता था। उसकी यही विशेषता इस दिन उसकी मृत्यु का कारण बनी थी। वास्तव में इतना आगे बढ़जाने के कारण वह उन रुहेला सैनिकों का बहुत अच्छा लक्ष्य बनचुका था जो झाऊ की झाड़ियों में अपनी भरी हुई मस्कट लेकर लेटेहुए थे। जैसे ही उसका घोड़ा नाले के दूसरे छोर पर दौड़ताहुआ पहुँचा अफगान जिजैल सैनिकों ने दत्ताजी पर गोलियाँ दाग दीं।[44] एक गोली दत्ताजी की आँख से होकर निकलगयी और वह वहीं ढेरहोगया।[45] उसके साथ ही उसके बहादुर साथियों की बड़ी संख्या खेतरही। नजीब ने इस परिस्थिति का लाभ उठाते हुए अफगान पैदल सेना को आगे बढ़ा दिया। दलदल युक्त स्थल में मराठा सैनिकों से उनका तीक्ष्ण युद्धहुआ। युद्ध का रुख मराठों के विरुद्ध था। साबाजी की समस्त टुकड़ी काटडालीगयी।[46] लेकिन वह बचनिकला। मराठा सैनिक दत्ताजी के शव को न ले जा सके। वास्तव में जैसे ही दत्ताजी जमीन पर गिरा मियां कुतुब शाह ने उसका सिर

---

43. Rajwade V.K. & others , op. cit. I, p. 156.
44. Ibid.
45. Ibid.
46. Tahmasp Khan Miskin describes it with details.

काटलिया[47] और ले जाकर अब्दाली के सम्मुख प्रस्तुत करदिया।

इस भयंकर सूचना को पाते ही जनकोजी ने शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़कर लड़ाई जारीरखने का प्रयासकिया किन्तु उसके सैनिकों के हृदय बैठगये थे। उसके अधीन 20 हजार सैनिक थे। जनकोजी ने स्वयं को युद्ध में झोंकदिया। किन्तु मस्कट की फायरिंग के समक्ष भाले की एक न चली।[48] डेढ़ घंटे तक उसने युद्ध लड़ा और अन्ततः उसकी बाँह में एक गोली लगगयी। उसके अनुयायी उसे युद्ध स्थल से दूर लेगये। मराठा सेना दिल्ली की ओर भागनिकली। अफगानों ने भागते हुए मराठा सैनिकों पर आक्रमणकिया और भारी नरसंहार किया। इस स्थिति से अवगत होते ही इमाद भरतपुर के लिये भागनिकला। कुछ दिनों के बाद मल्हारराव होल्कर एवं जनकोजी सिंधिया ने परम्परागत युद्ध शैली अपना कर दुश्मन का कड़ा प्रतिरोधकरना चाहा, लेकिन वे दुश्मन को अपेक्षित क्षति न पहुँचा सके।[49] अहमदशाह अब्दाली, सूरजमल के इलाके में आनिकला। अब्दाली ने सरदार जहानशाह को दोआब में जाने का आदेशदिया। यह आदेश उसने खिज्राबाद से 27 फरवरी को दिया था क्योंकि 26 से 27 फरवरी तक मल्हारराव कालका देवी[50] होते हुए दोआब में प्रवेश करचुका था। उसने दिल्ली और निकटवर्ती दोआब में अब्दाली और भारतीय अफगानों की संयुक्त सेनाओं के समक्ष

---

47. A.B. Phalke : **Shinde--shahi Itihasanchi Sadhanen** , Vol. I ; p. 220.
48. Ibid.
49. दोआब,निकटवर्ती राजस्थान और दिल्ली के निकटवर्ती हरियाण में वे दोनों अफगानो को हतप्रभ करते रहे।
50 दिल्ली स्थित कालकाजी मंदिर का क्षेत्र।

अपनी गतिविधियाँ बनायेरखीं। 28 फरवरी को मल्हार सिकन्दराबाद जापहुँचा। यहाँ उसे पता चला कि नजीब ने अब्दाली के शिविर के लिए 10 लाख रुपये भेजे थे। यह धनराशि नजीब ने अपने रक्षक के युद्ध सम्बन्धी खर्चों के लिए योगदान स्वरूप भेजी थी। अनूपशहर के रास्ते पर यह धन दोआब में आना था। मल्हार शीघ्र ही सिकन्दराबाद पहुँचगया। यहाँ वह तीन या चार दिन रुका। उसका एक स्थान पर इतने समय रुकना विनाशकारी सिद्धहुआ। अहमदशाह ने अपने सबसे योग्य सेनापति जहानशाह के नेतृत्व में अश्वारोही सैन्य टुकड़ी भेजी। इसने त्वरित गति से 4 मार्च की प्रातः कालीन बेला में मल्हार पर आक्रमण करके उसे आश्चर्यचकित करदिया। असावधान मराठा शिविर में भगदड़ मचगयी और उसके सैनिक अपना साजो सामान छोड़कर भागनिकले। अनेक सामान्य सिपाहियों के साथ मल्हार के तीन उच्च अधिकारी–अनन्तराम जादव, सेथयाजी खराडे और उसका पुत्र इस लड़ाई में मारे गये। मल्हार को स्वयं भी भागनापड़ा और वह यमुना पार करके आगरा पहुँचगया। दीवान गंगाधर उसके पीछे मथुरा पहुँचा।

सरदार जहानशाह गंगा तट स्थित अनूपशहर से चलकर यमुना के बायें तट पर पहुँचगया। वह मथुरा के लगभग सामने था जबकि स्वयं अब्दाली उसके एक दिन पीछे चलरहा था। कोल (अलीगढ़) पहुँचने पर नजीब ने उसे वहीं पर रुकने की सलाह दी। उसने ऐसा ग्रीष्म ऋतु और आगामी मानसून को दृष्टिगत रखते हुए किया था। इन्हें ऐसी सूचनाएं मिली कि दक्षिण से मराठों की विराट सेना उत्तरी भारत में अपने प्रभाव को पुनःस्थापित करने के लिए आरही थी।

अब्दाली की सेना के सामने मल्हार राव को सफलता नहीं मिली। भरतपुर से लौटते समय होल्कर ने हाफिज रहमत के सन्देश वाहक को बुलाया और शान्ति प्रस्ताव पर चर्चा की। **पुरुषोत्तम हिंगाने** ने 12 मार्च, 1760 को लिखा था – " हाफिज हमारे शिविर में आने और हमारे सरदार से मिलने की बात करता है और वह अब्दाली को वापिस भेजने के लिए सहमत करेगा। तत्पश्चात् वह अपने सैनिकों के साथ हमारे साथ मिलजायेगा और नजीब खाँ को नीचा दिखाने के लिए हमारी मदद करेगा। वह वचन देता है कि वह नजीब खाँ की कभी मदद नहीं करेगा। हमारे सरदार इस पर सहमत होगये हैं कि हम न तो उसके रास्ते में आयेंगे और न ही उसके इलाके में घुसेंगे।......"[51]

दूसरी ओर पेशवा बालाजी बाजीराव को लगभग 3 सप्ताह तक उत्तरी भारत की राजनीतिक अवस्था का कुछ पता न चला। 27 जनवरी को अर्थात् दत्ताजी की मृत्यु के 19वें दिन पेशवा को दिल्ली स्थित अधिकारियों का पत्र मिला जिसमें दत्ताजी की मृत्यु की सूचना नहीं थी अर्थात् यह पत्र 9 जनवरी से पूर्व लिखा और भेजागया था। इसमें अब्दाली के उत्तरी भारत में आ धमकने और पंजाब से मराठा प्रभाव पूर्णतया समाप्त होने तथा दत्ताजी का शुक्रताल घेराबन्दी असफल होजाने आदि की सूचना थी। इसमें यह भी लिखा था कि दत्ताजी दिल्ली वापस आगया था और अगले दिन निर्णायक युद्ध होने की प्रबल सम्भावना थी।

---

51. A.B. Phalke. Ibid. p. 247 .

इस पत्र के तीन सप्ताह तक पूर्णतः निस्तब्धता रही। पेशवा को उत्तरी भारत से कोई समाचार नहीं मिला। उत्तरी भारत के साहूकारों की ओर से पेशवा तक यह सूचना आई कि दत्ताजी का प्राणान्त होगया था और जनकोजी राजपूताना की ओर भागगया था। साथ ही उत्तरी भारत में मराठा सेना का अस्तित्व समाप्त प्रायः होगया था। यह सब सूचनाएं पेशवा को औरंगाबाद में मिलीं। उत्तरी भारत में मराठों के इस विनाश का आधिकारिक पत्र पेशवा को 15 या 16 फरवरी को प्राप्तहुआ जिसमें उक्त विनाश का वर्णन था। एक ही झटके में उत्तरी भारत में पेशवा का राजनीतिक वर्चस्व जातारहा। दिल्ली साम्राज्य पर मराठों की सशक्त पकड़ की पुनर्स्थापना के लिए और उत्तरी भारत में सैन्य सर्वोच्चता बनाने के लिए पेशवा कृतसंकल्प था।

अतः, पेशवा ने उत्तरी भारत में सैन्य अभियान का निर्णयलिया। रघुनाथ राव इसके लिए उपयुक्त सेनानी रहाहोता[52] किन्तु अन्ततः सदाशिवराव भाऊ को इस कार्य के लिए नियुक्त कियागया। नाम के लिए सेना का कमांडर पेशवा का सत्रह वर्षीय पुत्र विश्वासराव था जबकि भाऊ उसका संरक्षक नियुक्त कियागया था।[53]

सदाशिवराव भाऊ ने तभी निजाम पर निर्णायक विजय प्राप्त की थी

---

52. वस्तुतः रघुनाथराव उत्तर भारत की स्थिति से परिचित था। इसी के नेतृत्व में मराठों ने 1758 में अब्दाली के पुत्र तिमूर शाह को लाहौर से भागने पर विवशकिया तथा लाहोर व सरहिन्द पर अधिकार किया था।
53. यह मुगल बादशाहों द्वारा सैन्य अभियानों में शहजादे को नाममात्र का कमांडर बनाकर भेजने की प्रथा की झलक प्रदानकरता है।

किन्तु वास्तव में उत्तरी भारत का उसे कुछ भी अनुभव न था। वह एक श्रेष्ठतर सेनानी तो था किन्तु उत्तरी भारत की कूटनीति और राजनीतिक दलबन्दियों तथा सामरिक स्थितियों से परिचित नहीं था।[54]

सदाशिवराव भाऊ ने 3 अगस्त, 1760 को दिल्ली पर पूर्णतः अधिकार करलिया। इसे शीघ्र ही भान होगया कि दिल्ली विजय से उसे कोई भी आर्थिक लाभ न था, उन्हें आर्थिक हानि ही उठानी थी। उस पर महल में शाही परिवारजनों और उनके सेवकों आदि का भोजन खर्च, सामान्य प्रशासनिक वेतन के भुगतान आदि की अतिरिक्त जिम्मेदारी आगई थी। इससे उस पर एक लाख रुपये मासिक का अतिरिक्त आर्थिक बोझ बढ़ा।

6 अगस्त को भाऊ ने **दीवाने खास** की चाँदी की छतगीरी उखड़वायी जिससे कुल 9 लाख रुपये प्राप्त हो सके।[55] 10 अगस्त को उसने निगम बोध घाट पर यमुना स्नानकिया और ब्राह्मणों तथा जामा मस्जिद के आस–पास के मुसलमान फकीरों को धन बाँटा। नारो शंकर को दिल्ली का सूबेदार और किलेदार बनाकर भाऊ ने उसके नेतृत्व में दिल्ली की रक्षार्थ एक सैन्य टुकड़ी नियुक्त की और ससैन्य स्वयं 12 अगस्त को बादली के निकट

---

54. वास्तव में पेशवा परिवार से सम्बंधित केवल एक ही सेनानी रघुनाथराव ही ऐसा व्यक्ति था जिसे उत्तर भारत की सामरिक रणनीति आदि का सम्यक् ज्ञान एवं अनुभव था।
55. सूरजमल इस छतगीरी को यथावत् रहने देने के पक्ष में था।

शालीमार बाग पहुँचगया। उसके इस अभियान ने बुराड़ी घाट से यमुना पार करने की रुहेलों की योजना असफल कर दी। भाऊ ने यहाँ 2 महीनों तक शिविर लगाये रखा। 10 अक्टूबर को उसे यहाँ से जानापड़ा। इस अवधि में उसके शिविर में सैनिकों और घोड़ों दोनों की रसद में भारी कमी आयी। उफनती हुई यमुना को पार करके दोआब में प्रवेश करना असम्भव था। अतः उसने कुंजपुरा को जीतने का इरादाकिया।

कुंजपुरा अभियान

कुंजपुरा यमुना के दाहिने तट पर किलेबन्द कस्बा था जहाँ से यमुना आसानी से पार कीजाती थी। इसी लिए कुंजपुरा का घाट ऊपरी दोआब में विद्यमान अब्दाली के लिए महत्वपूर्ण था। उसकी रणनीतिक महत्ता को देखकर यहाँ के सरदार नजाबत खाँ रुहेले को संरक्षण देरखा था। न केवल नस्लीय लगाव के कारण अफगानों का कुंजपुरे से लगाव था, बल्कि सरहिन्द से आनेवाली रसद आपूर्ति भी यहाँ एकत्र कीगयी थी।[56] अब्दाली ने खाद्य सामग्री के अलावा युद्धोपयोगी अन्य साजो–सामान भी इकट्ठा करवारखा था। वास्तव में इस योजना के पीछे नजीब खाँ का ही दिमाग था। नजाबत खाँ वास्तव में लुटेरों का सरदार था। यह अपने भारतीय अनुयायियों को सैनिकों की भाँति कपड़े पहनवाता था ताकि ग्राण्ड ट्रंक रोड पर दिल्ली–लाहोर के बीच अब्दाली के सैनिक समझे जाएं।

---

56. रसद भारी भण्डार कालान्तर में सदाशिवराव के हाथलगा ।

उसने 1757 में अब्दाली के भारत अभियान के दौरान ऐसा ही किया था।

भाऊ की सामरिक योजना में कुंजपुरा को विजित करना आवश्यक था। अतः भाऊ 16 अक्टूबर की शाम को कुंजपुरा जापहुँचा। शहर के बाहर सरहिन्द में अब्दाली का सूबेदार अब्दुल समद खान और मियां कुतुबशाह[57] अपने दो हजार सैनिकों के साथ मोर्चा जमाये बैठे थे। नजाबत खाँ के पास आठ हजार लड़ाके थे। भाऊ ने, बिना देर लगाये, रात को ही शहर का घेरा डालदिया। अब्दुल समद मारा गया। मियां कुतुबशाह को घायल अवस्था में कैद करलियागया। उनके सैनिक शहर के दरवाजों की ओर भागखड़ेहुए और उन्होंने सुरक्षा हेतु प्रवेश चाहा। लेकिन नजाबत खाँ ने डर अथवा भय के कारण दरवाजे नहीं खुलवाये। इस पर अब्दाली के सैनिकों ने अहमदशाह से इसकी शिकायत करने की धमकी दी। इस पर नजाबत खाँ डरगया और उसने दरवाजे खुलवादिये। तब तक भगोड़ों का पीछाकरते मराठा सैनिक भी आगये थे। वे भी साथ में नगर में प्रवेशकरगये। कुंजपुरे की हर गली में आमने--सामने का युद्धहुआ और कुँजपुरा भाऊ के अधिकार में आगया। मियां कुतुबशाह को शहर से कैद करलियागया और उसका वध करदियागया।[58] अब्दुल समद खाँ व मियां कुतुबशाह के सर काट कर मराठा–शिविर में भाले पर टाँग कर घुमायेगये। निजाबत खाँ के दो पुत्र

---

57. भाऊ को मियां कुतुबशाह की वैसे भी खोज थी। इसी ने भूमिसात दत्ताजी का सिर काट कर अब्दाली के समक्ष पेशकिया था।
58. मियां कुतुबशाह के शरीर को जनकोजी को सौंपदियागया था ताकि सिंधिया शिवीर में सैनिक अपने पूर्व सेनानी दत्ताजी के हत्यारे से बदला चुकता कर सकें।

पकड़लियेगये। उसका केवल तीसरा पुत्र जीवित बच सका। भाऊ एक हफ्ते तक कुंजपुरा ठहरा। 25 अक्टूबर को वह कुरुक्षेत्र के लिए चलपड़ा किन्तु वह तरावड़ी तक ही पहुँचा था कि उसे बागपत में अब्दाली द्वारा यमुना पार करने की सूचना मिली जो दो दिन पहले सोनीपत पहुँचचुका था। अतः, भाऊ तत्काल शत्रु की ओर लौट पड़ा और 29 अक्टूबर को पानीपत पहुँचगया।(**चित्र 3**) उसे 1 नवम्बर को अफगान सेना की 11 कि0मी0 दूर विद्यमान होने की सूचना मिली।

पानीपत से पूर्व ऊपरी दोआब में अब्दाली की गतिविधियाँ

4 मार्च, 1760 से लेकर अक्टूबर 1760 तक ऊपरी दोआब विशेष रूप से अहमदशाह की गतिविधियों से दुष्प्रभावितरहा था।

सिकन्दराबाद के पास 4 मार्च की प्रातःकाल मल्हारराव की टुकड़ी को परास्त करके अब्दाली ने ऊपरी दोआब से मराठा प्रभाव का समूल अन्त करदिया था। तत्पश्चात् वह कोल (अलीगढ़) की ओर बढ़ा।[59] उसने नगर पर अधिकार कर लिया और ऊपरी हिस्से में बने हुए **रामगढ़**[60] नामक किले का घेराडालदिया। यह किला सूरजमल के अधीन था और उसकी ओर से दुर्जनसाल नियुक्त था। राजा सूरजमल ने इसकी बड़ी मजबूत किलेबन्दी करायी थी और यहाँ बड़ी मात्रा में युद्धक सामान का भण्डार था। अब्दाली स्वभावतः यह अनुमान कर

---

59. अभी तक कोल का नाम अलीगढ़ नहीं हुआ था।
60. वास्तव में कोल स्थित रामगढ़ नामक इसी मजबूत किले का नामान्तरण करके बाद में मिर्जा नज़फ खाँ ने इसका नाम अलीगढ़ रखा था। कालान्तर में शहर का नाम भी अलीगढ़ प्रसिद्ध होगया। यद्यपि राजस्व रिकार्ड्स में आज भी तहसील कोल ही दर्शायीजाती है।

रहा था कि घेराबन्दी कई महीने तक चलेगी किन्तु अब्दाली की टुकड़ियों ने यमुना के पूर्वी तटवर्ती जाट चौकियों पर अधिकार करलिया। बुलन्दशहर जिले तक जाट भगादिये गये और इस प्रकार समस्त ऊपरी दोआब उसके विश्वस्त नजीब खाँ के हाथ में आ गये। इससे सूरजमल की स्थिति में अन्तरआया और उसने अब्दाली से शान्तिवार्ता स्थापित की। विजेता अब्दाली ने 45 लाख रुपये की मांग की थी।

एक प्रकार से देखाजाए तो ज्ञात होता है कि अप्रैल के मध्य तक भारत में अब्दाली का कार्य पूरा होचुका था क्योंकि उत्तर भारत में उसने मराठा शक्ति को समाप्तकरदिया था। दत्ताजी सिंधिया का वध करदियागया। मल्हारराव होल्कर को भगादियागया और दिल्ली पर इसका अधिकार होगया था। ऊपरी दोआब से प्रत्येक शत्रु अब्दाली ने समाप्तकरदिया। सूरजमल से भी क्षतिपूर्ति का वचन लेलियागया था। अब इतना भर शेष था कि शाहआलम द्वितीय दिल्ली की गद्दी पर आकर बैठजाता और शुजाउद्दौला उसके वजीर का कार्य करता। किन्तु नजीब खाँ ने उससे प्रार्थना की कि वह भारत में बसे अफगानों की जान–माल पेशवा की दया पर छोड़ कर न जाएं क्योंकि सूचना थी कि दक्षिण से एक विशाल मराठा सेना उत्तर की ओर कूचकरचुकी थी। उसने अब्दाली को युद्ध व्यय के रूप में दस लाख रुपये नकद दिये। साथ ही दोआब में रहने की अवधि तक सेना की रसद पूर्ति करने का उत्तरदायित्व लिया। वर्षा ऋतु व्यतीत करने के लिए अब्दाली ने अलीगढ़ के पास शिविर डालदिये। यहाँ उसके सैनिकों के लिए घास–फूस व बाँस की झोपड़ियाँ बनायीगयीं तथा दिल्ली से शाही तम्बू मँगवा लिये

गये।

इसी शिविर से अब्दाली ने हाफिज रहमत खाँ को सूरजमल से वार्ता चलाने हेतु भेजा, और यदि सम्भव था तो उसे ही मराठों से भी वार्ता चलानी थी। यद्यपि मराठों से कोई वार्ता अथवा हल न निकल सका। वर्षा ऋतु के दौरान जुलाई में अब्दाली ने अलीगढ़ से शिविर उखाड़कर गंगा के तट पर अवस्थित अनूपशहर[61] में छावनी डालदी। उसने अगले दो महीने के लिये रुहेलों को गंगा पार अपने–अपने घरों को जाने को आदेशितकिया ताकि उस पर भोजन व चारे का वजन कम हो सके। अगस्त व सितम्बर के इन्हीं दो महीनों में भाऊ व शुजाउद्दौला के मध्य सन्धि वार्ता चली, परन्तु वह निष्फलरही। भाऊ को ये गुप्त सूचनाएं मिल रही थीं कि अफगान शिविर में खाद्य सामग्री का नितान्त अभाव होने वाला था और उनमें आन्तरिक फूट भी पड़नेवाली थी। वास्तव में अहमदशाह की स्थिति ढाई महीनों के लिए कठिन व भयावह होगयी थी। किन्तु यह उसकी दृढ़ इच्छा–शक्ति और अपने सैनिकों पर उसके प्रभाव का कमाल था कि उसकी सेना कष्टों से बचगयी। वास्तव में नजीब की पूर्ण वफादारी व साधन सम्पन्नता ने तथा शत्रु रहित ऊपरी दोआब में रहने के कारण आक्रान्ता भुखमरी से बचनिकला। वास्तव में एक घुड़सवार को जिन्दा रहने के लिए उस समय दो सौ रुपये मासिक की आवश्यकता थी क्योंकि अब्दाली के शिविर में खाद्यान्न के संकट के कारण

---

61. वर्तमान बुलन्दशहर जिले का तहसील मुख्यालय, जो गंगा के दाहिने तट पर बसा है।

उसके दाम बढ़गये थे। अब्दाली की सेना के लिए दूरस्थ स्थानों से अनूपशहर स्थित उसके शिविर में खाद्य सामग्री भेजीजारही थी। अम्बाला, करनाल, रुहेलखण्ड व अवध से अब्दाली की रसद पूर्ति बनीरही।

भारतीय रुहेलों से अहमदशाह ने बलपूर्वक कहा कि उन्हें सहयोग राशि देनी चाहिए क्योंकि वह उन्हीं की रक्षार्थ भारत आया था लेकिन उन्होंने अपनी गरीबी का रोना रोया। अनूपशहर छावनी में उसके दस हजार घोड़े, ऊँट व खच्चर सितम्बर के मध्य तक रोग ग्रस्त होकर मरगये थे और वे प्रतिदिन मररहे थे। उसने शुजाउद्दौला से भी धन व खाद्य आपूर्ति चाही। ऐसे में अहमदशाह वापिस जाने के लिये तैयार था यदि मराठों के साथ उसकी सम्मानजनक सन्धि होजाती।

अब्दाली के भारतीय मुस्लिम–मित्र–संघ में भी बैचेनी बढ़गयी थी। सदैव से विश्वसनीय नजीब के अलावा दूसरे लगभग सभी मुस्लिम सरदार सशंकित थे। शुजाउद्दौला अपने शिविर में अप्रसन्न पड़ा था और कभी–कभी वह अपने आंतरिक सहयोगियों के बीच अब्दाली की ओर आने के लिए खीज दिखलाने लगता। अहमद बंगश और सादुल्ला खाँ मराठों की दिल्ली विजय से भयभीत थे और वे मध्य दोआब में मराठों के एजेन्ट गोविन्द बल्लाल बुन्देले और स्वयं भाऊ से गुप्त वार्ता कररहे थे। इतना ही नहीं बल्कि इससे भी बड़ी बात हुई। मिस्किन लिखता है – "अब्दाली के कुछ तुर्की योद्धा निराशा में उसका शिविर छोड़गये और उन्होंने मराठों को अपनी सेवाएं देनी चाही किन्तु भाऊ इस अवसर का लाभ

न उठा सका। शत्रु की कमजोरी से लाभ लेकर वह दोआब में गतिविधियाँ बढ़ा सकता था और इन भारतीय रुहेलों तथा शुजा की असन्तोषजनक मनःस्थिति से कूटनीति पूर्वक युद्ध का पासा पलट सकता था।"[62] यद्यपि दोआब क्षेत्र में गोविन्द बल्लाल बुन्देले को गतिविधियाँ बढ़ाने के लिए भाऊ ने निर्देशित कररखा था किन्तु 60 वर्षीय भारी शरीर वाले इस राजस्व अधिकारी ने जीवन भर छोटी--मोटी झड़पें और लड़ाईयाँ लड़ कर छोटे--मोटे स्थानीय सरदारों की छोटी--मोटी गढ़ियों और किलेबन्दियों पर तो विजय प्राप्त कररखी थी किन्तु नवम्बर 1759 के नजीबाबाद अभियान की दुखःद स्थिति उसके मन को द्रवित कररही थी। अतः वह गंगा पार के अरक्षित रुहेला प्रदेशों में अभियान करने में असफल रहा।

अब्दाली का पानीपत कूच

अक्टूबर के अन्त में यमुना का जलस्तर कम होगया। वर्षा ऋतु के कारण वह दिल्ली और कुंजपुरा के पतन के विरुद्ध कुछ भी न कर सका। कुंजपुरा में अफगानों के वध से उसका हृदय भारी था। अपने जीवित रहते हुए अफगान जाति का इतना बड़ा अपमान वह सहन नहीं कर सकता था। वह अक्टूबर के शुरू में शाहदरा तक पहुँचा और निराशा पूर्वक उसने अनुमानलगाया कि यमुना कब तक पार करने लायक होजानी थी। 20 अक्टूबर को वह उत्तर की ओर चला। बागपत से चार कोस पहले उसने पड़ाव डाला। यहाँ वह चार दिन

---

62. Tahmasp Khan Miskin ; op. cit.

रहा। इस अवधि में उसके सैनिकों को यमुना को पार करने के लिए उपयुक्त स्थान मिलगया। यह बहुत ही कम चौड़ाईवाला भाग था जहाँ नदी का जलस्तर मनुष्य तथा पशुओं के पार करने योग्य था परन्तु इस स्थल से तनिक–सा हटने पर ही जलस्तर की गहराई अत्यधिक होजाती थी जिससे डूबने का खतरा उपस्थित था। उस कम चौड़ाईवाली पट्टी को चिह्नित करने हेतु निशान बनाएगये थे। 25 अक्टूबर को सेना पार होनी शुरूहुई।[63] स्वयं अब्दाली ने 26 अक्टूबर को यमुना पार की तब तक आधी सेना नदी पार करचुकी थी।[64] दूसरे किनारे पर इतनी बड़ी संख्या में मनुष्यों व पशुओं के चलने से दलदल बनगयी[65] जिसमें शीघ्रतापूर्वक झाऊ की झाड़ियाँ डालीगयीं तथा दलदल से छुटकारा पायागया। तीन दिनों में नदी पूरी सेना पार करगयी।[66] कुछ हजार आदमी डूब भी गये लेकिन नदी पार करके मराठा सेना के निकट जापहुँचना अब्दाली की सफलता थी।[67].

27 अक्टूबर को अब्दाली ने उत्तर की ओर बढ़ना शुरूकिया। सोनीपत के पास मराठों का उस टुकड़ी से आमना–सामनाहुआ जो नदी पार करते समय उन पर आक्रमण के लिए नियत थी। मराठों की इस टुकड़ी पर अचानक

---

63. Sayyad Nuruddin Hussain Khan : **Life of Najibuddaula**, British Museum, Persian Manuscript 24410. Translated by Jadunath Sarkar in Indian Historical Quarterly and Islamic Culture, 1933.
64. Ibid .
65. Ibid .
66. Ibid .
67. Ibid .

शाह पसन्द खाँ के नेतृत्व में चार हजार दुर्रानी सैनिकों ने हमला कर उन्हें चकित करदिया। सभी मराठे मारडालेगये। अब्दाली इस रात सोनीपत के उत्तरी भाग में स्थित फखरु बाग में सोया था। 26 तारीख को **सराय सम्भलका** में मराठों का अग्रगामी दल दिखायी पड़ा।[68] दोनो पक्षों में युद्ध हुआ। इसमें दो–तीन हजार सैनिक मारेगये। अब्दाली गन्नौर जापहुँचा। यह स्थान सोनीपत से 15 कि0मी0 उत्तर में और सम्भलका (समालखा) से 13 कि0मी0 दक्षिण में है। अब्दाली यहाँ 28 से 30 अक्टूबर तक रुका और 31 अक्टूबर को सम्भलका (समालखा) पहुँचगया। यहाँ से पानीपत 13 किलोमीटर रहगया। 1 नवम्बर को वह 8 कि0मी0 और बढ़गया और इस प्रकार वह भाऊ की मुख्य सेना के ठीक पास आगया। दोनों पक्ष आमने–सामने आ डटे।

कुछ समय पश्चात् अब्दाली के समक्ष खाद्यान्न का संकट उपस्थित होगया, लेकिन भाऊ इससे मुक्त था। किन्तु परिस्थिति बदलते देर न लगी। भाऊ के हाथ से कुंजपुरा निकलगया। परिणामतः मराठा शिविर में घोड़े के लिए न घास थी, न चना, न भूसी। मनुष्यों के लिए खाद्यान्न न रहा।[69] जनवरी 1761 के प्रथम सप्ताह में मराठा शिविर में अकाल था। बहादुर सैनिक भूख से मरनेलगे। आखिर त्रस्त होकर 13 जनवरी, 1761 को भाऊ के सामने चिल्ला–चिल्लाकर भूखों मरने

---

68. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 166 .
69. Sayyad Nuruddin Hussain Khan: op. cit. pp.466.

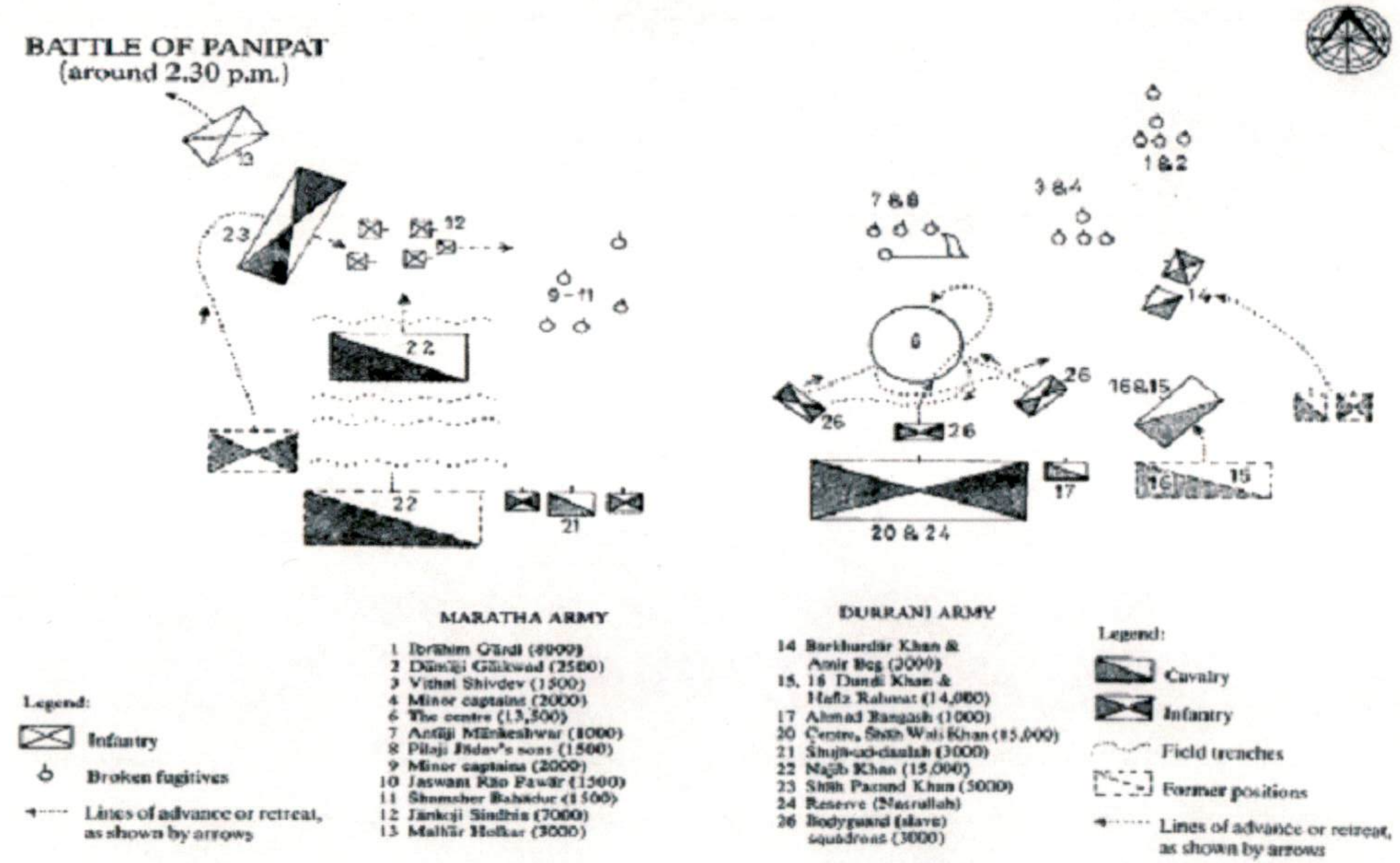
की अपेक्षा लड़कर मरने की प्रार्थनाकीगयी। अगले दिन 14 जनवरी, 1761 को इन परिस्थितियों में पानीपत का तीसरा युद्ध लड़ागया।[70]

युद्ध लगभग 10 बजे शुरूहुआ[71] (**चित्र 4**) और चार घन्टों बाद सम्पूर्ण मराठा सेना नष्ट होने को थी।[72] सवा दो बजे विश्वासराव मारागया।[73] मराठा सेना का अधिकांश भाग काटडालागया। होल्कर भागखड़ाहुआ।[74]

तीन बजे भाऊ ने अपने बचे हुए विश्वस्त साथियों को लेकर पुनः युद्ध प्रारम्भकिया।[75] (**चित्र 5**) ध्वस्त सेना के क्षीण भाग से और भाऊ की व्यक्तिगत वीरता से जो सम्भव हो सकता था वही हुआ। सम्पूर्ण सेना नष्टहोगयी। अब्दाली की इस विजय और मराठों की पूर्ण पराजय से 14 जनवरी, 1761 को उत्तर भारत से मराठा प्रभाव का समूल अन्त हो गया।

---

70. **Bhan Sahibanchi Bhakhar** , 110.
71. Jadunath Sarkar : op. cit. pp. 192--193. Indian Historical Quarterly, 1934--35.
72. Ibid .
73. Ibid.
74. Ibid.
75. Ibid.



Courtesy : J.N.Sarkar चित्र 5 *Fall of The Mughal Empire.* Vol, II

अध्याय–5

उत्तर भारत में मराठा प्रभाव की पुनर्स्थापना : पेशवा माधवराव कालीन प्रयत्न एवं परिणाम (1761–1772)

अध्याय–5

उत्तर भारत में मराठा प्रभाव की पुनर्स्थापना : पेशवा माधवराव कालीन प्रयत्न एवं परिणाम (1761–72)

14 जनवरी, 1761 को लड़ेगये पानीपत के तीसरे युद्ध ने उत्तरी भारत से मराठा प्रभाव को पूर्णतः नष्टकरदिया। इस युद्ध में इतिहासकार **सरदेसाई** के अनुसार महाराष्ट्र के लगभग प्रत्येक घर ने कम से कम अपना एक व्यक्ति खोया था।[1] पेशवा के उत्तम सैन्य सरदारों में से अनेक मारेगये। पेशवा का ज्येष्ठ पुत्र विश्वासराव और उसका संरक्षक सदाशिवराव भाऊ, जो स्वयं पेशवा बाजीराव के भाई का पुत्र था, मारेगये। दत्ताजी सिंधिया पहले ही वीरगति को प्राप्त हो चुका था।[2]

पेशवा को कई दिन बाद पानीपत युद्ध में पराजय की सूचना उस समय मिली जब वह उत्तरी भारत के लिए पूना से चलपड़ा था। यह सूचना भी किसी सरकारी स्रोत से नहीं आयी थी[3] बल्कि उत्तरी भारत से एक व्यापारी के पत्र द्वारा प्राप्त हुई थी, इस पत्र में यह समाचार निम्न प्रकार से कूट भाषा में अंकित

---

1. G. S. Sardesai ; **Selection from the Peshwa Daftar** , Vol . II.
2. V. K. Rajwade ; op. cit. Vol., I , p. 156.
3. भाऊ का सूचना तन्त्र अत्यधिक कमजोर रहा , उत्तर भारत सम्बंधित उसकी अनुभवहीनता वस्तुतः नाश का कारण बनी।

था :

" दो अमूल्य मोती पानी में घुलगये, सोने की सत्ताइस मुद्राएं खोयी गयीं, चाँदी और ताँबे की जो हानि हुई है उसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता।"[4]

एक अनुमान के अनुसार युद्ध क्षेत्र में प्रातः नौ बजे से साढ़े तीन बजे तक तीन चरणों में मराठों के तीस हजार सैनिक मारेगये।[5] अहमदशाह अब्दाली के मृतक सैनिकों की संख्या बीस हजार थी, जो गम्भीर घायल सैनिक धरा पर पड़े थे वे रात की ठण्ड बर्दाश्त न करने के कारण मरगये।[6]

15 जनवरी को दुर्रानी सैनिकों ने पानीपत शहर पर हमलाकिया, यहाँ हजारों मराठा सैनिक आकर छुपगये थे। अहमदशाह की आज्ञा से पानीपत और आस–पास लगभग पचास हजार सैनिक नृसंशता पूर्वक कत्ल करदियेगये।[7] मराठा शिविर से एक लाख भार वाहक पशु अब्दाली के हाथ लगे जिनमें 3,000 ऊँट एवं तीन सौ हाथी थे, हजारों गाड़ियाँ, बहुत–सी तोपें और बन्दूकें, भाले, तलवारें और ढालें बड़ी संख्या में हाथलगीं।[8] मीर तक़ी मीर ने मीर की आप बीती में लिखा है :

"दुर्रानी सिपाही जो महज फकीर थे एकाएक मालामाल होगये

---

4. वस्तुतः यह तत्कालीन मराठी भाषा में लिखा था ।
5. Jadunath Sarkar : **Fall of the Mughal Empire** , Vol. II, pp. 196--206.
6. Ibid. pp. 209--219.
7. Ibid.
8. Ibid.

मराठों के कई हजार घोड़े--घोड़ियाँ विजेता ने अपने कब्जे में करलीं।"[9]

इस युद्ध से वास्तव में पेशवा की रीढ़ टूटगई थी। यद्यपि पराजय के लिए काफी सीमा तक भाऊ की अनुभवहीनता को जिम्मेदार ठहरायाजातारहा है तथापि इसमें पेशवा की नीतिगत आलोचना की जा सकती है। उत्तरी भारत के मामलों में भाऊ का अनुभव एकदम शून्य था जबकि मल्लहारराव होल्कर भाऊ को अनेक बार उचित परामर्श देताहुआ दिखायीपड़ता है। किन्तु वास्तविक वीरता से उत्पन्न दम्भ ने जमीनी अनुभव की एक न चलनेदी।[10] रसद का प्रबन्ध टूट जाने से भाऊ के सैनिकों को भूखों मरनापड़ा।[11] गोविन्द बलाल बुन्देले द्वारा भाऊ की सेवा में भेजीगई पूरी धनराशि उस तक नहीं पहुँच सकी। चार लाख बीस हजार रुपये में से केवल एक लाख बीस हजार ही भाऊ तक पहुँचे।[12] मराठों के पशु भूखे थे। सैनिक भूखे मररहे थे और शत्रु की अपेक्षा सैन्य बल भी तीन चौथाई था। जो भी हो दुरदम्भीय वीरता के साथ कूटनीतिक योजना समावेशित नहीं थी और अंततः वही हुआ जो सर्वाधिक अप्रत्याशित था।

पेशवा बालाजी विश्वनाथ इस आघात को सहन नहीं कर सका और इस सूचना के कुछ दिन बाद ही उसकी मृत्यु होगयी।[13] पानीपत के तृतीय युद्ध

---

9. बाद में कम उपयोगी घोड़े--घोड़ियाँ नजीबुददौला ने बिजनौर जिले के जागीरदारों में बांट दी थीं ।
10. यदि भाऊ ने मल्हारराव होल्कर की सलाह पर ध्यानदिया होता , तो परिणाम कुछ सकारात्मक रहता।
11. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 192.
12. Pandit Shiverao Kashiray : **An Account of the Battle of Panipat and preceding events**, in Persian written in 1870, The manuscript used was copied in 1875 probably for Col. Brown. Jadunath Sarkar's version appeared in Indian Historical Quarterly, 1934 -35.
13. यद्यपि वह पूना से सेना लेकर उत्तर भारत के लिए चलपडा था।

के परिणामस्वरूप उत्तरी भारत में मराठों ने जो सैन्य सर्वोच्चता अर्जित की थी वह जातीरही। राजपूत, जाट, रुहेले, बंगश आदि सरदारों में मराठों की अपराजेयता की जो धाक स्थायी होनेलगी थी, उसे भारी धक्कालगा।[14] पेशवा की असामयिक मृत्यु ने इस परिस्थिति को और भी निराशाजनक बनादिया।[15]

एक इतिहासकार के अनुसार "कोई भी पराजय इतनी पूर्ण नहीं हुई और कोई भी आपत्ति ऐसी नहीं आई जिसने इतना भय फैलाया हो। सारी मराठा जाति में दुःख और निराशा छागई। अधिकांश को अपने सम्बन्धियों की मृत्यु का दारुण दुःख था किन्तु सेना के इस भयंकर विनाश को सारी जाति अपने जातीय गौरव पर अत्यन्त घातक प्रहार समझती थी। पेशवा (बालाजी राव) इस चोट से कभी भी पनप नहीं पाया। वह धीरे--धीरे सीमा से पूना की ओर पीछे हटतागया। टूटी--फूटी सेना नर्मदा के उस पार लगभग सारे हिन्दुस्तान के जीतेहुए प्रदेशों को छोड़तीहुई पीछे हटगई। बालाजी की मृत्यु के बाद तुरन्त ही आपसी कलह की आग भड़की और पेशवा सरकार फिर कभी इससे उभर नहीं सकी। इन प्रदेशों में से कुछ को बाद में अंग्रेज अधिकारियों द्वारा अपने अनुशासित सैनिकों की सहायता से फिर जीतलियागया। मराठे राजाओं का संगठन अपने प्रमुख भय के समाप्त होते ही लुप्त होगया।"

---

14. Jadunath Sarkar : op. cit.
15. Ibid .

सर रिचर्ड टेम्पल[16] के अनुसार "बालाजी का चरित्र और स्वभावउसके पिता की तरह था। यद्यपि वह चतुर, मंत्रणा में प्रभावशाली और युद्ध में योग्य था तथापि एक सैनिक और राजनीतिज्ञ के रूप में वह अपने पिता के समकक्ष नहीं था। वह अपने साथियों के गुणों से पूर्ण लाभ उठाना जानता था इसी लिए उसकी उल्लेखनीय सफलताएँ वही हैं जो उसके लिए उसके अधीन पदाधिकारियों ने प्राप्तकी थीं। लेकिन वह सर्वदा सबसे आगे बढ़कर व्यवस्था स्थापित करता था। अपने समय में ही उसने मराठा शक्ति को इसके उच्चतम शिखर पर पहुँचादिया। इसके नियन्त्रण में एक लाख मराठे घुड़सवार इस बात को गर्व से कह सकते थे कि उनके घोड़े कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक की सब नदियों में प्यास बुझातेरहे। लेकिन इस विस्तृत राज्य को वह जन–साधारण के हित के लिए प्रयोग नहीं कर सका, शायद उसमें यह योग्यता ही नहीं थी। उसने मराठा राज्य को, जैसा कि वह आरम्भ में था, व्यवस्थित लूटपाट करने की संस्था के रूप में बनारहनेदिया और इसे ठोस शासन–प्रणाली का रूप नहीं दिया। इस विषय में वह व्यक्तिगत रूप से सिद्धान्तहीन था और अपने दादा और पिता से कम योग्य था।"

पेशवा बालाजी बाजीराव की मृत्यु के बाद उसके मझले पुत्र

---

16. Sir Richard Temple : op. cit.

माधवराव[17] को पेशवा बनाया गया यह उसके ज्येष्ठ पुत्र विश्वासराव से दो वर्ष छोटा था और इस समय इसकी आयु 16 वर्ष थी। दिवगंत पेशवा का छोटा भाई रघुनाथराव शासन कार्य में इसका संरक्षक बनायागया।[18] किन्तु माधवराव ने अपनी उत्कृष्ट क्षमता का परिचयदिया और वह अधिक सुसंगत निर्णय लेने में समर्थ था। वह रघुनाथ राव के हस्तक्षेप के विना सुचारु शासन चलानेलगा। वह वास्तव में योग्य था। यद्यपि उसकी आयु कम थी किन्तु उसकी बुद्धि तीव्र थी। रघुनाथराव अपनी पत्नी के बहकावे में अंततः आहीगया। उसकी पत्नी उसे इस बात के लिए प्रेरित करतीरही कि वह मराठा साम्राज्य के आधे भाग का स्वामी बने। अन्ततः पत्नी की चाल कामयाब रही और रघुनाथराव ने आधे राज्य की माँगकी। इस प्रकार मराठों में गृह–युद्ध प्रारम्भ होगया।

पेशवा माधवराव ने पानीपत की घोर पराजय से उत्पन्न हताशा और निराशा में अपना कार्य प्रारम्भकिया था। अपने चाचा रघुनाथराव के विद्रोह को सफलतापूर्वक दबाकर उसे पूना के महल में नजरबन्दकरदिया। पेशवा के शत्रुओं ने इन विपरीत परिस्थितियों से लाभ उठाने का प्रयासकिया। निजामअली इस स्थिति का लाभ उठाना चाहता था किन्तु दो वर्ष के संघर्ष के बाद पेशवा की सेनाओं ने उसे **राक्षस भुवन** के युद्ध में हरादिया।[19]

---

17. माधवराव बल्लाल ।
18. रघुनाथराव , राघोबा नाम से लोकप्रिय था ।
19. G. S. Sardesai : **New History of the Marathas** , Vol. I p. 192.

पेशवा ने हैदरअली द्वारा कर्नाटक में मराठा प्रभुत्व की क्षति पूर्ति करने हेतु उससे संघर्षकिया। 1769 में नागपुर के भोंसला शासक को परास्त करके माधवराव ने **कनकपुर की सन्धि** की।[20] यह दक्षिण में पेशवा की समग्र सफलता की अग्रसूचक थी। अब उसने अपना ध्यान उत्तर भारत की ओर केन्द्रितकिया। उसने देशभर से सूचना प्राप्त करने के लिए गुप्तचर नियुक्तकिये। निपुण कर्मचारियों, मुंशियों, लेखा–जोखा रखनेवालों, व्यवस्थापकों, राजस्व इकट्ठा करनेवालों, सेना की रसद भेजनेवाले ईमानदार व्यक्तियों की एक नई पीढ़ी कार्य में लगाईगई। सेनाध्यक्षों को आलस्य छोड़कर अनुशासन में रहना पड़ा। बारूद से चलायेजानेवाले हथियारों और गोला बारूद बनाने के लिए एक विशेष विभाग स्वयं पेशवा के निरीक्षण में स्थापितकिया गया।

कठिन परिस्थितियों के बीच किशोरवय पेशवा माधवराव ने अपना मार्ग प्रशस्तकिया। अपने राजनीतिक कौशल और सामान्य मामलों में असाधारण सूझ–बूझ के बल पर इस नवयुवक ने लगातार मराठा शक्ति में वृद्धि की। शक्ति संचय करके उत्तरी भारत में पानीपत के तृतीय युद्ध से विनष्ट मराठा प्रभाव को पुनः स्थापित करना उसका लक्ष्य था। इस योग्य पेशवा ने शीघ्र ही उन मान्यताओं पर विराम लगादिया, जिनमें मराठों की सैन्य सर्वोच्चता को धूमिल होतेहुए माना गया था। मराठे एक दशक से भी कम समय में उत्तर भारत में अपना प्रभाव पुनः

---

20. इस सन्धि से पेशवा की सर्वोच्च कार्यकारी शक्ति पुनः सर्वमान्य हो गई।

स्थापित करने आपहुँचे। यह वास्तव में मराठों की अथवा और अधिक सटीक ढंग से कहें तो पेशवा माधवराव की चमत्कृत कर देनेवाली योजनाओं का परिणाम था। 1770 की शुरूआत में पेशवा ने अपने चार कुशल सेनापतियों के नेतृत्व में उत्तर भारत में अभियान हेतु एक विशाल सेना भेजी।[21] ये चार सेनापति क्रमशः रामचन्द्र गणेश (पेशवा का नायब), वीसाजी कृष्णा बिनीवले, तुकोजी होल्कर और महादजी सिंधिया थे। इन्होंने मालवा होतेहुए चम्बल नदी पारकी और गंगा–यमुना दोआब के निकट पहुँचगए। तुकोजी होल्कर ने नजीबुद्दौला को एक निजी पत्र भेजा, जिसमें उसने अपने स्वर्गीय पिता मल्हारराव होल्कर की ओर से नजीब के प्रति बरतीगई सदा सहायता का उल्लेख करतेहुए दोनों परिवारों के मध्य मैत्री सम्बन्धों की आकांक्षा व्यक्तकी थी। **नजीब**[22] ने उत्तर में लिखा–" मैंने अपनी आयु के कारण जाब्ता खाँ को अपना उत्तराधिकारी .....नियुक्त किया है, वह आपके परामर्श से तनिक भी नहीं हटेगा।"

नजीब उत्तर भारत की राजनीतिक परिस्थितियों को सूक्ष्म रूप से पहचानलेने में सक्षम था। उसने अपने पुत्र को एक बार लिखा था कि "उत्तर भारत में उसकी सेना से लड़नेवाला कोई नहीं था किन्तु वह दक्षिण के इन शत्रुओं से केवल अपनी सेना के भरोसे रहकर युद्ध नहीं कर सकता था। दूसरी ओर

---

21. ये चारों सेनापति यदि 'एक राय' होकर निर्णय लेते और उस पर व्यवहार करते तो उत्तर भारत में उन्हें कोई चुनौती नहीं दे सकता था। किन्तु तुकोजी होल्कर ने आशा के अनुरूप व्यवहार नहीं किया।
22. नजीब ने बड़ी कूटनीतिक सूझ–बूझ प्रदर्शित की और तुकोजी को अपने हित साधन में संलग्न करलिया।

अहमद शाह अब्दाली की ओर से उसे कोई सुरक्षा नहीं मिल सकती थी और पेशवा अपने घरेलू झगड़ों में विजयी था। फलतः उसे अपने वंश और अपने नवस्थापित राज्य के प्रति चिन्ता होनी स्वाभाविक थी। अपने पुत्र जाब्ता खाँ में वह स्वयं जैसी अनुभवशीलता और नेतृत्वशीलता का विश्वास नहीं कर सकता था। अतः उसने मराठों से विनम्रतापूर्ण सम्बन्धों की स्थापना को श्रेयष्कर समझा। उसने मराठा सेनापतियों से आमने--सामने बैठकर उन्हें प्रभावित करने और उन्हें मित्र बनाने का निश्चय किया।[23] उसने वहाँ जाने से पूर्व मराठा शिविर में अपना सहयोग सन्देश भिजवादिया।

नजीब खाँ के विषय में मराठा शिविर में मतैक्य नहीं हो सका। एक पक्ष नजीब खाँ को साथ रखकर उत्तर भारत में मराठा शक्ति की पुनःस्थापना करने में अपनी कूटनीतिक सफलता देखरहा था जबकि दूसरा पक्ष भरतपुर के जाट राजा को अपने साथ रखकर उत्तर भारत में मराठा अभियान का पक्षधर था। तुकोजी होल्कर की भूमिका उचित नहीं कही जा सकती। वह नजीब खाँ के प्रति पुरानी पारिवारिक मित्रता प्रकटकररहा था और नजीब से गुप्त व्यवहार में संलग्न था। वह मराठा शिविर की नीतिगत बातों और विशेषतः महादजी की नजीब विरोधी योजनाओं को गुप्त पत्रों के माध्यम से अवगत करारहा था। यह तुकोजी के प्रभाव का ही परिणाम था कि पेशवा के नायब रामचन्द्र गणेश के मराठा शिविर में नजीब

---

23. यह मराठो की आन्तरिक स्थिति से अपने लिए लाभ उठाने की कला का नमूना माना जा सकता है।

के सहयोग प्रस्ताव का समर्थन कियागया था। मूलतः **रामचन्द्र गणेश** का विचार था[24]....''हम इस इलाके में दस साल बाद आये हैं यदि हम पहले नजीब को साथ लेकर मित्र नहीं बनाते हैं तो गंगा पार के रुहेले और शुजाउद्दौला आत्मरक्षार्थ हमारे विरुद्ध सैन्य गठजोड़ बनालेंगे और नजीब भी स्वयं में बहुत शक्तिशाली है। अपने विरुद्ध शत्रुओं के इस गठजोड़ से युद्ध में हमें बड़ी टक्कर लेनी होगी जिसका परिणाम कोई नहीं जान सकता। इसीलिये हमें इस व्यक्ति को अपना मित्र बनालेना चाहिए और फिर पहले जाट राजा से सुगमतापूर्वक धनराशि लेनी चाहिए। हमारे विरुद्ध नजीब ने जो कुछ भी किया था वह अब विगत की बात है।''

इस पर **महादजी सिंधिया**[25] ने यह कहते हुए आपत्ति की कि '' हम यहाँ लम्बे अरसे बाद इसी आदमी से प्रतिशोध लेने आए हैं। यदि अब आप इससे मित्रता का गठजोड़ करते हैं और इस मित्रता की शपथ लेते हैं फिर हम इस आदमी से बदला कैसे लेंगे ? दोआब में पेशवा की जागीरें पिछले 10 वर्षों से अफगानों ने अधिकृत कररखी हैं। इस जाति ने हमारी प्रतिष्ठा नष्ट की है, नजीबुद्दौला हमारा सबसे पहला दुश्मन है, विशेषतः मेरे साढ़े तीन परिवारजनों का खून उसके सिर पर है और तुकोजी द्वारा उसका अभिनन्दन प्रस्तावित है। कोई

---

24. रामचन्द्र गणेश के इस विचार की स्पष्टता के पीछे तुकोजी होल्कर द्वारा नजीब के प्रति सद्भावना को उत्तरदायी ठहराया जाता है।
25. उत्तर भारत के प्रति मराठा रणनीतिक स्पष्टता रखने में महादजी को सफल द्रष्टा मानाजाना चाहिए। आगे आनेवाले समय में घटित घटनाक्रम इसकी पुष्टि करते हैं।

बात नहीं है। मैं पेशवा को लिखूँगा और उनके आदेश प्राप्त करूँगा।''

इस प्रकार तुकोजी के माध्यम से नजीब को मित्रता का प्रस्ताव भिजवायागया और मध्य दोआब में जाट इलाकों पर अधिकार करने के लिए उसे अधिकृत कियागया। नजीब अपनी कूटनीतिक योजना में सफल रहा, उसने जाट राजा नवल सिंह के इलाके अधिकृत करलिये।[26] राजा **डीग** से चला किन्तु मथुरा के निकट 4, 5, 6 अप्रैल, 1770 के युद्ध में रामचन्द्र गणेश द्वारा रक्त रंजित युद्ध में पराजित हुआ।[27] नजीब 5 अप्रैल, को चन्डौस जापहुँचा और अगले दो दिन में नौझील का किला उसके सैनिकों के अधिकार में था।[28] नजीब खाँ ने शीघ्रतापूर्वक जेवर, दनकौर, टप्पल, डिबाई आदि परगनों पर, जो नवल सिंह के अधीन थे, अपना अधिकार करलिया।[29] तत्पश्चात् नजीब ने मथुरा के सामने यमुना के पूर्वी तट पर अपना शिविर लगाया। मराठों की समस्त सेना, जिसमें 70,000 सैनिक थे, मथुरा में एकत्रित हुई। तुकोजी होल्कर पहला व्यक्ति था जिसने यमुना पार करके नजीब से भेंट की और उसे बड़े सम्मानपूर्वक अपने शिविर में लेआया। अगले दिन परस्पर परामर्श चला और 19 अप्रैल को नजीब मराठा शिविर की ओर चला। वह सबसे पहले तुकोजी के शिविर में गया जिसने उसे रामचन्द गणेश और तत्पश्चात् महादजी सिंधिया से मिलवाया। नजीब ने महादजी सिंधिया को विगत

---

26. के0 आर0 कानूनगो : **जाटों का इतिहास** , ओरिजिनल्स , नई दिल्ली , पृ0 139 ।
27. ये इलाके दोआब क्षेत्र में थे।
28. यह सादाबाद से लगभग 32 कि0मी0 दूर है।
29. ये सभी स्थान उ0 प्र0 के वर्तमान बुलन्दशहर एवं गौतमबुद्ध नगर (नोएडा) जिलों में है।

शोक में सान्त्वना देने का प्रयास करते हुए कहा :

"ईश्वर जो चाहता है वही होता है। मैंने अपनी तरफ से दत्ताजी पाटिल के विरुद्ध कुछ नहीं किया। किन्तु मित्रता चाही और वह भी लड़ना नहीं **चाहते थे। लेकिन दिव्य इच्छा** के आगे किसी की कुछ नहीं चली और वह सब हो **गया। अपने दिलों में बदले का** भाव मत रखो, **अब जबकि मैं आपके साथ** शामिल **हो गया हूँ मैं आपके शत्रुओं को** दबा दूँगा।"[30]

महादजी कुछ देर के लिए बिल्कुल चुप रहा और फिर बड़े रुखे ढंग से बोला :

"ईश्वर की इच्छा पूरी हुई है, अब देखते हैं आगे वह क्या चाहता है।"[31]

परम्परागत उपहारों के आदान–प्रदान के उपरान्त दोनों पक्ष अपने–अपने शिविरों में लौटगए किन्तु दोनों ही ओर दिलों में कड़वाहट खत्म नहीं हुई थी।

कुछ दिन बाद इस गठजोड़ ने अपनी योजना को क्रियान्वित करने के लिए कार्य प्रारम्भकिया। 25 अप्रैल, 1770 को सम्पूर्ण मराठा सेना ने यमुना नदी पार की और नजीब के शिविर के समीप अपने तम्बू गाड़दिये। नजीब के अधिकारियों ने शिकोहाबाद, सादाबाद, सहित कई परगने राजा नवल सिंह से छुड़ाकर अधिकृत करलिये और वहाँ अपने राजस्व व सैन्य अधिकारी नियुक्त

30.एक प्रकार से मनोवैज्ञानिक रूप से महादजी को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए उसने ये शब्द कहे थे।
31.महादजी के इन शब्दों से कटुता अनुभव की जा सकती है।

किये। यह कार्य 3 मई, 1770 तक पूरा हुआ। 10 मई, 1770 को तुकोजी की ओर से गुप्त चेतावनी पाकर नजीब अलीगढ़ की ओर चलदिया। महादजी के कुछ मराठा सैनिक उसके शिविर की ओर लपके किन्तु कुछ भी न पा सके। शीघ्र ही वर्षा ऋतु आरम्भ होनेवाली थी। अतः मराठा सेना यमुना तट से शिविर उठाकर अलीगढ़ चलीआयी।

तुकोजी होल्कर पुरानी पारिवारिक मित्रता के कारण नजीब का पक्ष लेरहा था।[32] और, इसी ने मराठों के अभी तक के अभियान को, सीमित अर्थों में ही सही, असफल करदिया। हुआ यह था कि गंगा पार के रुहेलों ने धनराशि अभी तक नहीं पहुँचायी थी, जबकि ये सभी नजीब के समर्थक थे, ये सभी चाल चल रहे थे। इन्होंने यह शर्त लगायी कि जब तक राजा नवल सिंह से वसूली नहीं होगी तब तक वे मराठों को कुछ भी नही देंगे।[33] बंगश पठानों से भी यही उत्तर मिला।[34] इन्होंने मराठा सन्देश वाहकों से यह भी कहा कि "नजीब ने मेरठ और दूसरे महाल बलपूर्वक अधिकृत कररखे हैं। इन इलाकों को अभी तक मराठों ने वापस नहीं लिया है तब ऐसे में हम ही से क्यों मांग की जाती है ? हम चौथ अथवा इलाके तब तक नहीं देंगे जब तक नजीब ऐसा नहीं करेगा।"[35] यह बात अगस्त, 1770 की है। तीन महीनों के प्रयासों का अगस्त माह में बस यही परिणाम

---

32. मल्हाराव होल्कर नजीबुद्दोला को पुत्रवत् मानता था।
33. यह चालाकीपूर्ण व्यवहार नजीबुद्दौला के समर्थन व सहमति से ही कियाजारहा था।
34. नजीबुद्दौला इनसे भी गुप्त पत्र व्यवहार कर मराठों के विरुद्ध लामबन्दी कररहा था।
35. Jadunath Sarkar : op. cit.

निकला।

इस प्रकार, नजीब खाँ की दुहरी चाल से मराठों को कूटनीतिक पराजय का मुँह देखनापड़ा। एक ओर तो नजीब मराठों को आश्वस्त करतारहा कि वह मराठों के साथ था और उसके कारण रुहेले और बंगश पठान चौथ का भुगतान करेंगे जबकि दूसरी ओर वह रुहेले और बंगश पठानों से मराठों के विरुद्ध उकसानेवाली गुप्त वार्ता और युद्ध हेतु सैन्य--नीति बनारहा था। इतना ही नहीं, बल्कि उसने जाट राजा के मामले में भी दुहरी चालचली। उसने तुकोजी होल्कर के माध्यम से पेशवा के नायब रामचन्द्र गणेश को इस के लिए सहमत करलिया था कि मराठे नजीब खाँ को साथ लेकर राजा नवल सिंह के विरुद्ध गठजोड़ बनायेंगे जबकि दूसरी और वह राजा नवल सिंह से भी मराठों के विरुद्ध गुप्त वार्ता चलारहा था ताकि रुहेले और बंगश पठान मिलकर राजा नवल सिंह के साथ मराठों से युद्ध करते और उन्हें उत्तरी भारत से सदा के लिए भगादेते।[36]

इसी बीच एक बैठक के दौरान मराठा सरदारों के बीच नजीब उत्तेजित होगया। वास्तव में मराठा सरदारों ने उससे कहा था कि ''वह अपना वचन निभाने में असफल रहा है और पिछले 6 महीनों में कोई भी धनराशि जमा नहीं करापाया है। साथ ही वह अपने सजातीय पठानों को साथ लेकर मराठों के विरुद्ध षड्यंत्र रचरहा है।'' **नजीब** [37] यह सुनकर उत्तेजित होकर बोला :

---

36. Ibid .
37. Ibid .

"मैं आप लोगों के शिविर में असम्मान के साथ रहना बर्दाश्त नहीं कर सकता। आप नहीं सोचते कि अब आपके पास एक विशाल सेना है जबकि मेरे पास बहुत कम। यदि मैं मर भी गया और जमीन में भी दफन होगया तो भी मैं केवल 10 हजार आदमियों के साथ तुम सबको खाजाऊंगा। मैं जानता हूँ कि महादजी पाटिल अपने ह्रदय में मेरे लिए दुर्भावना रखता है जाओ और उससे कह दो, यदि तुम मर्द हो तो मैदान में क्यों नहीं आते, ये कहतेफिरने से क्या है कि तुम्हारे तीन परिवारजनों का खून मेरे सिर पर है या तो इसका प्रतिशोध लो अथवा बहादुर आदमी के लिए यह सर्वथा अयोग्य है। आप देख चुके हैं कि मैं क्या कर सकता हूँ। तीन के स्थान पर चौथे शव बनने के लिए तैयार होजाओ, मैंने तुम्हारा काम और व्यवहार देखा है, बहुत अच्छा। मैं इसी क्षण प्रस्थान करूँगा।"

मराठा सरदारों के बीच उत्तेजित नजीब को बड़ी मुश्किल से शान्त किया जा सका। यह काम आनन्द राव नरसी ने किया।

27 सितम्बर को नजीब ने राजा नवल सिंह के दूत से व्यक्तिगत बातचीत की और परस्पर समझौते के लिए मसौदा तैयारकिया। 8 अक्टूबर को दोनों पक्षों के अधिकारी उसके सामने बैठे और जाट राजा द्वारा दियेजानेवाली धनराशि तयकराई। इस प्रकार मराठों और नजीब के मध्य शान्ति समझौता सम्पन्न हुआ। नजीब खाँ का स्वास्थ्य निरन्तर गिररहा था। अपनी मृत्यु निकट जानकर उसने अपने पुत्र जाब्ता खाँ का हाथ तुकोजी होल्कर के हाथ में सौंपते हुए तुकोजी से प्रार्थना कि वह उसके पुत्र के प्रति उसी प्रकार दयालु रहे जैसा कि

मल्हारराव स्वयं उसके (नजीब के) प्रति था।[38] तत्पश्चात् मराठा सरदार जाब्ता खाँ की अगवानी में चलेगये और वह नजीबाबाद में शांतिपूर्वक मरने के लिए चल पड़ा। वह 12 अक्टूबर को चन्डोस [39] पहुँचा। चार दिन बाद 16 अक्टूबर को उसने सिकन्दराबाद [40] की सीमा में प्रवेशकिया यहाँ उसके शिविर के पास ही अनेक हिन्दु तीर्थ--यात्री सपरिवार रुके हुए थे जो कि गढ़मुक्तेश्वर मेले[41] के लिए यात्रा कररहे थे और शाम हो जाने पर रुकगए थे। उसने अपने जीवन का अन्तिम आदेश यही पारितकिया जिसमें उसके व्यक्तिगत चरित्र की उच्चता की झलक मिलती है। यह आदेश उसके सैनिकों के लिए था जिसमें बलपूर्वक कहागया था कि ''वे हिन्दू तीर्थ यात्रियों के साथ न तो अभद्रता करें और न ही उन्हें लूटें।'' वहाँ से वह हापुड़ पहुँचा। वर्तमान ऐस0ऐस0वी0 कॉलिज हापुड़ के सामने स्थित वर्तमान मस्जिद ही वह स्थल है जहाँ उसके प्राण निकलगए। उसका शव चुपचाप नजीबाबाद लायागया और दफनायागया। नजीबाबाद में उसका मकबरा विद्यमान है।

सन् 1771 का साल उत्तरी भारत में मराठा प्रभाव की पुनः स्थापना का साल कहा जा सकता है। मराठों ने अपनी सैन्य सर्वोच्चता पुनः स्थापित कर ली। सम्राट शाहआलम को महादजी सिंधिया में एक ऐसा विश्वसनीय सैन्य शक्ति

---

38. Ibid .
39. यह वर्तमान अलीगढ़ जिले का तहसील मुख्यालय है।
40. यह बुलन्दशहर जिले में है
41. कार्तिक पूर्णिमा को उत्तर भारत का ऐतिहासिक मेला गंगा नदी के तट पर गढ़मुक्तेश्वर नामक तीर्थस्थान पर भरता है। वर्तमान में यह गाजियाबाद जिले में सम्मिलित है।

केन्द्र दिखायीपड़ा जिसके बल पर वह साम्राज्य की राजधानी दिल्ली में सुरक्षित आ सकता था। और ऐसा ही हुआ। मराठों के साथ एक सन्धि की गई जिसकी शर्तों में सम्राट को दिल्ली सुरक्षित पहुँचाने का दायित्व सिंधिया पर था। पेशवा माधवराव के असामयिक निधन से पूर्व 1772 में ही उत्तर भारत में मराठा प्रभाव अपने सम्यक् रूपों में पुनः स्थापित होगया था। पानीपत के युद्ध ने मराठों की प्रतिष्ठा को करारा आघात दिया था। एक रिपोर्ट में जो राजपूताना में नियुक्त मराठा ऐजेन्ट ने पेशवा को भेजी, मई 1761 में लिखा गया था :

'सभी राजे–रजवाड़े हमारे खिलाफ होगए हैं।......राजपूत बहुत अधिक धृष्टता दिखारहे हैं।''[42]

पानीपत युद्ध के तीन–चार महीने बाद की स्थिति विन्ध्य के उत्तर में मराठों के लिए अत्यधिक कठिन होगयी थी। इस क्षेत्र में वे बिल्कुल अकेले पड़ गए थे और सर्वत्र ढकेले जारहे थे। यद्यपि अप्रैल, 1762 तक लगभग चालीस हजार मराठा सैनिक ग्वालियर क्षेत्र और उसके सीमावर्ती दक्षिणी हिस्सों में एकत्रित होगये थे। किन्तु पूना दरबार की आन्तरिक कठिनाईयों के कारण उन्हें स्पष्ट दिशा निर्देश प्राप्त नहीं थे। यद्यपि इस अवधि में राजपूतों को सुअवसर मिला, किन्तु राजा माधोसिंह[43] में चरित्र की उच्चता के अभाव, अपने सरदारों के साथ एकजुटता

---

42. G. S. Sardesai : op. cit. Vol. XXIX, p. 81.

43. Ibid . p. 82 .

के अभाव और मारवाड़ के विजयसिंह[44] के प्रति दुर्व्यवहार के कारण इस सुअवसर का लाभ नहीं उठाया जा सका। पानीपत युद्ध के 12 महीने से भी कम अवधि में राजपूतों के लिए राजनीतिक समीकरण बदलगये और ऐसा मल्हारराव होल्कर की उपलब्धियों से सम्भव हुआ।

अक्टूबर, 1761 के अन्तिम चरण में राजा माधो सिंह ने मराठा सरदार सदाशिवराव गोपाल के विरुद्ध दस हजार सैनिक भेजे। दूसरी ओर उसने कोटा से 19 कि0मी0 स्थित **केशोराय पटना** की मराठा चौकी[45] पर आक्रमण करने के लिए अन्य टुकड़ियाँ भेजीं। इस सूचना को पाकर मल्हारराव होल्कर 6 हजार मराठा सैनिकों सहित इन्दौर से **मुकन्दरा पास** की ओर चलपड़ा। कोटा क्षेत्र में **बड़िया** पहुँचने पर उसके साथ तीन हजार राजपूत सैनिक आमिले। ये सैनिक टुकड़ी कोटा के दीवान आखेराय पंचौली, युवक जालिम सिंह और रावराजा के संरक्षित भाई के नेतृत्व में आयी थी। मल्हारराव होल्कर ने शीघ्रतापूर्वक कूच किया। उसी के आदेश पर मंगलौर और भटवाड़ा के बीच युद्ध हुआ।[46] 28 नवम्बर की दोपहर युद्ध प्रारम्भ हुआ और सूर्यास्त के बाद तीन घंटे तक चलतारहा। रात में मराठा सैनिक वापस शिविर में नहीं लौटे बल्कि दुश्मन का घेरा डालेहुए पड़े रहे। उन्होंने अपने हथियार अपने पास ही रखे और उनके घोड़े रात भर काठी

---

44. Ibid .
45. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 302
46. मंगरौल कोटा से 50 किमी उत्तर–पूर्व में है। यह बाण गंगा नदी के पूर्वी तट पर बसा है। भाटवाड़ा इससे 6 किमी दक्षिण में है किन्तु यह नदी के पश्चिमी किनारे पर है।

कसे हुए ही रखेगये। सूरज निकलते ही युद्ध प्रारम्भ होगया और सूर्यास्त तक जयपुर सेना पूरी तरह विनष्ट कर दीगयी। 10 हजार योद्धाओं में से केवल चार सौ जान बचाकर भाग सके। होल्कर सेना[47] बहुत वीरता से लड़ी, मानो पानीपत से पलायन का दाग मिटारही थी। स्वयं मल्हारराव को एक गोली छूती हुई निकल गई। जयपुर सेना की पूर्ण पराजय निर्णायक थी। इस युद्ध ने उत्तरी भारत में मराठों की खोई सैन्य प्रतिष्ठा को वापस लादिया। इसी कारण मराठा विरोधी संघ नहीं बन सका। राजा माधोसिंह रणथम्भौर से जयपुर के लिए भागनिकला।[48] राजपूताना में मराठा प्रभाव अगले कुछ सालों में पुनर्स्थापित होगया।

सम्राट शाहआलम इलाहाबाद के किले में ईस्ट इंडिया कम्पनी की पेंशन पर निर्भर था। यद्यपि वह दिल्ली आना चाहता था किन्तु उसे लगातार प्राणों का भय था। ऐसा होना स्वाभाविक था क्योंकि वजीर इमादुल मुल्क ने उसके पिता सम्राट आलमगीर द्वितीय की नृशंस हत्या करवादी थी[49] और यह वजीर अभी भी दिल्ली में विद्यमान था। 1770 में नजीब की मृत्यु से भी सम्राट को आघात पहुँचा।

सम्राट अधिक दिनों तक इलाहाबाद में नहीं रह सकता था। मेजर **पोलीयर** ने 1778 में ऐसी सूचना उद्‌धृत की है जिससे सम्राट के दिल्ली प्रस्थान की तत्कालिक आवश्यकता को समझने में कुछ सहायता मिलती है। उसने लिखा

---

47. G. S. Sardesai : op. cit. Vol. II , p. 5--6 .
48. Ibid . Vol. XXI, p. 92--94.
49. Ibid Vol. XXIX. p. 27 .

है कि "ऐसी फुसफुसाहट थी कि नजीबुद्दौला की मृत्यु के बाद, जब जाब्ता खाँ दिल्ली के किले में सर्वशक्तिशाली था, तो उसने बाहरी हरम में घुसने की धृष्टता की थी और वहाँ की कुछ सभ्य महिलाओं से सम्बन्ध बनाना चाहा। स्वयं सम्राट की बहन खैरुन्निसा उसके निशाने पर थी।"[50]

कलकत्ता में ब्रिटिश गर्वनर को प्राप्त पत्रों से ज्ञात होता है कि दिल्ली से रानीमाँ ने लगातार कई पत्र भेजकर शाहआलम को इलाहाबाद से दिल्ली आने के लिए निवेदन भेजा था ताकि उसे और दूसरी अन्तःवासिनियों को सिखों के हमले से सुरक्षा मिल सके। उसने अपनी सेवा में नियुक्त खास हीजड़े को दिल्ली से गुप्त सन्देश के साथ इलाहाबाद भी भेजा था। हरम के संवेदनशील मामलों और शाही परिवार के आन्तरिक सम्मान से जुड़े मामलों में हीजड़ों को सन्देश वाहक के रूप में भेजेजाने की प्रथा प्राच्य देशों में सन्देश की अत्यधिक संवेदनशीलता को दर्शाती है।[51] अतः मेजर पोलीयर ने सम्राट द्वारा दिल्ली प्रस्थान हेतु शीघ्रता करने का जो संकेतदिया है उसमें सत्यांश प्रतीत होता है। जो भी हो, यह निश्चित है कि सम्राट दिल्ली लौटने के लिए अत्यधिक आतुर था। ऐसे में अन्ततः उसने मराठों से एक सहमति बनायी। इसकी शर्तें निम्न प्रकार थी[52] :

1. मराठों को 40 लाख रुपये का भुगतान किया जायेगा तथा मेरठ व सात अन्य

---

50. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 329.
51. Ibid .
52. Ibid. p. 330 .

महाल प्रदान कियेजायेंगें।

2. सम्राट मराठों को कड़ा–जहानाबाद और कड़ा–मानिकपुर के जिले सौंप देगा अथवा ऐसा न होने पर उन्हें दिल्ली के समीप इसके समतुल्य इलाका प्रदान करेगा।

3. मराठे दो महीनों में सम्राट के दिल्ली प्रस्थान की अगवानी करेंगे।

4. सम्राट 20 दिन में 10 लाख रुपये (40 में से) देगा। इस धनराशि के प्राप्त होने पर मराठों के माध्यम से दिल्ली का किला सम्राट के ऐजेन्ट को सौंप दियाजायेगा और तब सम्राट दिल्ली के लिए प्रस्थानकरेगा।

5. दिल्ली पहुँचने पर सम्राट मराठों को 15 लाख रुपये की आय वाले महाल सौंपदेगा। इस प्रकार, 40 लाख रुपये में से शेष बचे 15 लाख रुपये की धनराशि को सात महीने में चुका दियाजायेगा।

इस सन्धि पत्र पर सम्राट की ओर से युवराज की मुहर लगायी गयी।[53]

इलाहाबाद से स्वयं सम्राट ने इन शर्तों की पुष्टि करदी। इस प्रकार रामचन्द्र गणेश के साथ याकूब अली खाँ ने 15 फरवरी को सन्धि का जो मशविदा तैयारकिया था वह 22 मार्च को कार्यरूप में परिणित होगया। सभी मराठा सरदार इस दिन शहजादे के समक्ष उपस्थित हुए जिन्हें खिल्लतें दीगयीं। आंशिक भुगतान

---

53. G. S. Sardesai : op. cit. Vol. XXIX , p. 89.

होने पर मराठा सैनिकों ने दिल्ली का किला वापिस सैफुद्दीन खाँ को सौंपदिया। 2 अगस्त, 1771 को मराठों ने किला खाली करदिया।[54]

सम्राट की दिल्ली प्रस्थान की आतुरता का अनुमान इसी तथ्य से सहजतापूर्वक लगाया जा सकता है कि वह 13 अप्रैल को ही इलाहाबाद से चल पड़ा था। 20 मील पश्चिम में चलकर वह सराय आलमचन्द जापहुँचा। यहाँ वह 19 दिन रुका रहा। उसे शुजाउद्दौला के आने का इन्तजार था। शुजाउद्दौला ने दिल्ली प्रस्थान पर कोई आपत्ति नहीं की किन्तु वह इस पूरी यात्रा में सम्राट के साथ भी नहीं रहा। यद्यपि उसने सम्राट को 12 लाख रुपये भेंटकिये तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का प्रबन्ध भी किया। उसने 4000 सैनिक सम्राट की सेवा में लगाये।

2 मई, 1771 को सराय आलमचन्द से चलकर सम्राट शुजाअतपुर और कड़ा होते हुए 23 मई को जाजमऊ पहुँचा। यहाँ पहुँचकर शुजाउद्दौला ने सम्राट से वापस लौटने की आज्ञा माँगी। एक ओर वह सम्राट को अपनी सेवा से सन्तुष्ट करचुका था तो दूसरी ओर वह ईस्ट इण्डिया कम्पनी को असन्तुष्ट करने का कोई भी मौका नहीं देना चाहता था। अतः उसने सम्राट से नीतिमत्तापूर्वक अपने प्रान्त में लौटजाने की अनुमति प्राप्तकरली।

---

54. **Calender of Persian Correspondence**, Govt. of India Records Office, 1911--40, Persian letters and news sheets received by the British Governments at Calcutta with replies to them. Covers the year 1759--87.

सम्राट कानपुर होते हुए बिठूर पहुँचा। यहाँ पर जनरल सर रॉबर्ट बार्कर भी अपनी दो बटालियनों सहित वापस कानपुर और बनारस के लिए वापिस लौटगया। सम्राट कन्नौज होतेहुए फर्रुखाबाद पहुँचगया। फर्रुखाबाद के नवाब अहमद खाँ बंगश की 17 अप्रैल को मृत्यु होगई थी। सम्राट की ओर से दिवंगत नवाब की समस्त सम्पत्ति जब्त करने की मांग कीगयी किन्तु बख्शी फखरुद्दौला ने इस पर गुप्त रूप से आस–पास के इलाकों से रुहेले पठानों की फौज तैयार कर ली और वह युद्ध के लिए तैयारी करनेलगा। असहाय सम्राट के लिए यह परिस्थिति बड़ी कठिन होगई। सम्राट ने महादजी सिंधिया से सहायता की मांग की जिस पर सिंधिया एक विशाल सेना सहित सम्राट की सेवा में जापहुँचा। इस सूचना से बख्शी भयभीत होगया और इस शर्त पर सहमत होगया कि दिवंगत नवाब के पुत्र को अपने पिता का उत्तराधिकारी मानलेने पर वह सम्राट को 6 (छः) लाख रुपये देगा।[55]

इस सफलता के पश्चात् सम्राट ने फर्रुखाबाद से 30 कि0मी0 दूर नबीगंज में जाकर शिविर लगाया। शाही शिविर वर्षा ऋतु पर्यन्त इसी स्थान पर लगारहा। तीन महीने बाद दिल्ली किले से सैफुद्दीन मुहम्मद खाँ और दूसरे उच्च अधिकारी आये। उन्होंने नबीगंज में 15 नवम्बर को सम्राट से भेंट की। महादजी स्वयं 19 तारीख को पहुँचगया। शाही शिविर अन्ततः 1 जनवरी, 1771 को

---

55. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 331.

सिकन्दराबाद से 24 कि0मी0 दूर स्थित ग्राम सूरजपुर पहुँचा।[56] 3 जनवरी को सम्राट की माता युवराज और दूसरे शहजादे सम्राट से मिलने घरौती जापहुँचे। यह स्थान शाहदरा से 7 कि0मी0 दूर था। अपने परिवारजनों के साथ सम्राट ने 6 जनवरी को प्रातः सवा आठ बजे दिल्ली दरवाजे से होकर किले में प्रवेशकिया। उस दिन की शाम पवित्र रमजान माह की परिसमाप्ति अर्थात् ईद की पूर्व संध्या थी।[57]

चूँकि सम्राट का वापस दिल्ली आगमन और किले पर सम्राट का अधिकार मराठा सहायता से सम्भव हुआ था अतः वह मराठों के प्रति कृतज्ञ था। इस महती कार्य योजना के सफल क्रियान्वयन में महादजी सिंधिया सम्राट का सर्वाधिक विश्वासपात्र बनगया। इस प्रकार उत्तरी भारत में मराठे पुनः प्रभुत्ववान हो गये। आनेवाले महीनों में परिस्थितिवश यह प्रभुत्व और भी तेजस्विता धारण करने वाला था।

---

56. Ibid .
57. **Calender for Persion Correspondance** . Vol. II . pp. 693--810.

अध्याय–6

उत्तर भारत में मराठा शक्ति का उतार–चढ़ाव एवं सैन्य सर्वोच्चता (1772–1784)

अध्याय–6

उत्तर भारत में मराठा शक्ति का उतार–चढ़ाव एवं सैन्य सर्वोच्चता

(1772–1784)

सन् 1772 का वर्ष उत्तरी भारत में मराठों के लिए शुभ संकेतक था। सम्राट शाहआलम को फर्रुखाबाद से लेकर दिल्ली तक लाने में महादजी सिंधिया की महती भूमिका थी और इसीलिये सम्राट के उसके प्रति कृतज्ञता के भाव थे। दूसरी ओर नजीबुद्दौला के उत्तराधिकारी जाब्ता खाँ ने अपने पद के अनुरूप किंचित भी कर्तव्यपरायणता प्रकट नहीं की।[1] सम्राट के सन्देश का भी उसने कोई उत्तर नहीं दिया। जबकि मीरबख्शी होने के नाते उसे व्यक्तिगत रूप से सम्राट की सेवा में अनिवार्य रूप से उपस्थित होना चाहिए था। उसके इस उद्दण्डतापूर्ण अकर्मण्य व्यवहार से दरबार में उसके विरुद्ध वातावरण बनगया। सम्राट के कई विश्वस्त जाब्ता खाँ के विरोधी होगये। वस्तुतः सम्राट नजीबुद्दौला की अत्यधिक सेवाओं के कारण उसके पुत्र जाब्ता खाँ के प्रति कड़ी कार्यवाही टालरहा था अन्यथा फर्रुखाबाद प्रकरण के दौरान ही उसके विश्वस्त अधिकारियों ने उसे जाब्ता खाँ के विरुद्ध तत्काल कूच के लिए उकसाया था।

वास्तव में जाब्ता खाँ अपने चाचा सुल्तान खाँ के प्रभाव में था।[2] सम्राट का उसके प्रति विनम्र व्यवहार का कारण नजीबुद्दौला की सेवाएं ही थीं।

---

1. Jadunath Sarkar : op. cit. Vol. III , p. 29.
2. Ghulam Ali : **Muqaddamah-i-Shah Alam Namah**, Vol. II, pp. 266, 283.

31 अक्टूबर, 1770 को नजीब खाँ की मृत्यु होगयी थी। तब सम्राट ने न केवल शोक संदेश भेजा अपितु जाब्ता खाँ को अमीर–उल–उमरा की उपाधि सहित मीरबख्शी पद पर भी नियुक्तकिया। इसी के साथ सम्राट ने जाब्ता खाँ को उत्तराधिकार की परम्परागत शुल्क राशि का स्वयं भुगतान करने के लिए भी बुलाया। इसी के साथ नजीब के समय की खालसा जागीरों का हिसाब भी चुकता करने के लिए कहागया जो दिल्ली के आस–पास और ऊपरी दोआब क्षेत्र में स्थित थीं।[3] वास्तव में आलमगीर द्वितीय के शासनकाल से ही यह शिकायत थी कि नजीबुद्दौला शाही परिवार की खालसा भूमियों से लाखों रुपये प्रतिवर्ष हड़प रहा था। यह वास्तव में एक गम्भीर शिकायत थी जिसमें पूरी सच्चाई थी। यह धनराशि बहुत बड़ी थी जबकि नजीब केवल कुछ हजार रुपये ही जमा करवारहा था। अनेक इतिहासकारों का मत है कि समकालीन राजनीतिक घरानों में भरतपुर के जाट राजा को छोड़कर जाब्ता खाँ ही सर्वाधिक धनाढ्य व्यक्ति था और इस धन संचय में शाही खालसा भूमियों से प्राप्त धनराशि का बड़ा हिस्सा था।[4]

जाब्ता खाँ ने अपने व्यवहार से कोई विनम्रता न दिखायी, न ही कर्त्तव्यपरायणता प्रदर्शित की बल्कि इसके विपरीत उसने अफगान सरदारों को गौसगढ़ के आस–पास मोर्चाबन्दी करने में लगादिया। सम्राट के पास उसकी

---

3. Muna Lal : **Tarikh-i-Shah Alam**. Ellict and Dowson , 393, O.P.L. Manuscript. This was written in 1811.
4. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 29.

विद्रोहात्मक व्यवहार की स्पष्ट सूचनाएँ पहुँचनेलगीं तथापि उसके उत्तर की प्रतीक्षा कीगयी। सम्राट के इलाहाबाद से दिल्ली आगमन के लिए भी उसे पहले ही आदेशित कियागया था। इस आदेश के अनुसार मीरबख्शी जाब्ता खाँ को अपनी सेना सहित सम्राट के दिल्ली आगमन की आगवानी करनी थी। किन्तु हर बार और हर अवसर पर जाब्ता खाँ का रुख अपेक्षाकृत उद्दण्ड परिलक्षित होता गया। सम्राट सुरक्षित दिल्ली पधार चुका था तो भी वह स्वयं उपस्थित नहीं हुआ और सैन्य तैयारी में संलग्न रहा।[5] वास्तव में जाब्ता खाँ सम्राट की सैन्य अक्षमता को जानता था और इसीलिए उसने ऐसे व्यवहार का परिचयदिया था।

इस परिस्थिति में जाब्ता खाँ के विरुद्ध सैन्य कार्यवाही अनिवार्य हो गयी थी। यद्यपि सम्राट ने एक बार पुनः उसे शाही सम्मान प्रदर्शित करने के लिए निमंत्रितकिया, किन्तु, परिस्थितियाँ सैन्य कार्यवाही में विलम्ब के प्रतिकूल थीं। अतः जाब्ताखाँ के विरुद्ध तत्काल सैन्य अभियान का निर्णय लियागया।मिर्जा नजफखाँ[6] ने मराठा सेनापतियों तुकोजी होल्कर, महादजी सिंधिया और वीसाजी कृष्णा के साथ यमुना पार करके दोआब में प्रवेशकिया। शाही सेना की टुकड़ी मिर्जा नजफ खाँ के अधीन थी। इस संयुक्त सेना ने शीघ्रता पूर्वक कूचकिया।

स्वयं सम्राट दिल्ली से इस सेना के 16 कि0मी0 पीछे चला। लोनी,

---

5. Ibid.
6. He was a close relative of Shujauddaula , The Nawab of Oudh.

बागपत, और गौसगढ़ होतेहुए वह चाँदपुर पहुँचा।[7] यह स्थान गंगा के पश्चिमी तट पर रुड़की से 24 कि0मी0 पूर्व दिशा में स्थित है। इस अवधि में जाब्ता खाँ ने अपना खजाना और रुहेले सरदारों के परिवारों को पत्थरगढ़ किले [8] (नजीबाबाद) में सुरक्षित भेजदिया। इनकी रक्षा के लिए उसने एक छोटी टुकड़ी नियुक्तकी। जबकि वह स्वयं केवल चार हजार सैनिकों के साथ शुक्रताल के किले में जापहुँचा। अपनी सेना का शेष बड़ा भाग उसने गंगा के पूर्वी तट पर शुक्रताल से लेकर हरिद्वार तक 61 कि0मी0 लम्बे इलाके में नियुक्तकिया। ऐसा करके वह नजीबाबाद की सुरक्षा निश्चित कर लेना चाहता था। उसके दिमाग में 1760 ई0 में दत्ताजी की शुक्रताल घेराबन्दी की याद ताजा थी और गोविन्द बल्लाल बुन्देले का नजीबाबाद अभियान भी याद था। किन्तु न तो जाब्ता खाँ अपने पिता जैसा योग्य चतुर योजनाकार था और न ही मराठे दत्ताजी वाली गलती [9] दोहरानेवाले थे। सुलभ सामरिक साधन भी दत्ताजी की अपेक्षा अच्छे थे क्योंकि नजफ खाँ के अधीन शाही टुकड़ी में बन्दूकें एवं ऊँटों पर हल्की तोपें शामिल थीं। इस सेना ने रुहेलों की गंगा तट पर बनाई सैन्य चौकियों के आमने–सामने पश्चिम दिशा में खाईयाँ खोदलीं और डटगये। जाब्ता खाँ शुक्रताल के मजबूत किले में बैठा अपनी

---

7. इसी नाम का एक कस्बा ज़िला बिजनौर में भी है ।
8. यह मजबूत किला आज भी उ0प्र0 के बिजनौर जिले के नजीबाबाद तहसील मुख्यालय के निकट दर्शनीय है।
9. दत्ताजी को नजीबुद्दौला ने शुक्रताल में उलझायेरखा था। गोविन्द बल्लाल नजीबाबाद पहुँच कर भी कुछ हासिल नहीं कर सका था। क्योंकि दत्ताजी के पास तोप व बन्दूकें नहीं थीं ।

घेराबन्दी के विषय मे सोचतारहा और मराठा सेना हरिद्वार की जड़ के नीचे **चाँदी घाट** से गंगा पार करके रुहेलों के इलाके में पहुँच गयी। 23 फरवरी के दिन लगभग 9 या 10 बजे के बीच मराठा घुड़सवारों ने चाँदी घाट में गंगा की एक धारा पारकी और वे दोनों धाराओं के बीच बने टापू पर पहुँचगये और खाइयों में छिपे अफगानों पर तलवार लेकर टूटपड़े । इस अनायास हमले में बहुत से रुहेले मारेगये लेकिन शीघ्र ही अफगानों ने मस्कटों व रॉकेटों से तेज हमलेकिए। मराठा घुड़सवार पीछे हटनेवाले ही थे कि नजफ खाँ अपने ऊँट सवार लेकर युद्ध स्थल पर पहुँचगया और उसने जगह–जगह एकत्रित अफगान मस्कट और रॉकेट सैनिकों पर बन्दूकें व हल्की तोपें चलवादीं। इससे युद्ध का तत्काल निर्णय होगया। पहले ही हमले में कमरखाँ रज्जर और उसके चार–पाँच दूसरे सरदार मारेगये। रुहेला सेना भाग खड़ी हुई। केवल सादत खाँ अफरीदी अपने कुछ सौ बहादुर सैनिकों के साथ जमारहा। वह शाही सेना और मराठा सेना के दस हजार सैनिकों से लड़ने के लिए सन्नद्धरहा जो इस अन्तराल में गंगा पार करगये थे। इस बहादुर सरदार का घोड़ा मरगया था और इसकी दोनों जांघों में गोली लगगयी थी तो भी वह घोड़े बदल–बदल कर लड़ता रहा। वह तब तक लड़ा जब तक गम्भीर घायल अवस्था में जमीन पर न गिर पड़ा। उसके साथी इस अवस्था में भागगये किन्तु उसके गम्भीर रूप से घायल भाई सादिक खाँ ने स्वयं नजफ खाँ पर वार करना चाहा। वह शाही सैनिकों की भीड़ को चीरता हुआ घायल शेर की भाँति अपना लहुलुहान शरीर लिए अफगान लड़ाकों की

परम्परागत युद्धस्थल चीख (ऐं......!ऐं........) मारता हुआ नजफ खाँ के हाथी के पास जापहुँचा। उसकी चुनौती स्वीकार करते हुए नजफखाँ चिल्लाया[10] " **हाँ, मैं तेरे लिए तैयार हूँ** " और नजफ खाँ ने घायल सादिक खाँ पर भाले से वारकिया। तत्क्षण हौदे पर बैठे नजफ खाँ के सेवक ने उसे गोली मारदी। उसके गिरते ही अफगानों का अन्तिम प्रतिरोध समाप्त होगया। अफगान सैनिक जिधर सींग समाया भाग-- निकले। उसी शाम जाब्ता खाँ को सूचना मिली कि समस्त मराठा सेना गंगा के पूर्वी तट पर पहुँचगयी है। उसे भय उत्पन्न हुआ क्योंकि मराठे अब रुहेलों के क्षेत्र में उनके घरों पर हमला कर सकते थे। वह तत्काल शुक्रताल किले के दूसरी ओर अपने चार हजार सैनिकों के साथ मोर्चेबन्द अपने बहनोई अर्थात् रामपुर के नवाब फैजुल्ला खाँ के पास सैन्य सहायता माँगने पहुँचा। लेकिन फैजुल्ला में वीरता का अभाव था। उसने वैसे भी कभी कोई युद्ध न लड़ा था। अतः भय के कारण वह शुक्रताल की सुरक्षा के प्रस्ताव पर कायम रहने के बजाय रामपुर भागनिकला। वहाँ भी वह केवल रातभर ही रुका। अगले दिन अपना खजाना तथा परिवार लेकर वह तराई के जंगलों में भागनिकला। वह बहुत डरगया था कि उसके दिलो--दिमाग पर मराठों का भय छागया था। उसकी भयाक्रान्त मनोदशा की झलक इस तथ्य से समझी जा सकती है कि जाते--जाते उसने अपनी राजधानी रामपुर शहर को आग लगा दी ताकि मराठे

---

10. Ghulam Ali : op. cit. Vol. II, p. 284--296.

रामपुर [11] की ओर आकृष्ट न हो सकें। फैजुल्ला के भाग जाने और अपनी सेना के बिखरजाने से जाब्ता खाँ निराश होउठा। उसी दिन देर रात केवल चालीस विश्वस्त सहायकों के साथ वह हाथी पर चढ़कर उत्तरी पहाड़ियों की ओर भागनिकला। सरदार रहित रुहेले किला छोड़कर नजीबाबाद की ओर भागनिकले। जाब्ता खाँ का चाचा अफजल खाँ पकड़ागया। सभी अफगान सरदार अपनी महिलाओं और सैनिकों के साथ तराई की ओर भागनिकले। इनमें हाफिज रहमत खाँ के साथ दून्देखाँ के पुत्र भी शामिल थे। असंख्य मराठा घुड़सवार सैनिक रुहेलखण्ड में फैलगये। सभी अफगान तराई में जाछिपे थे तथा उनके इलाके अरक्षित थे। उन्होंने इनकी सुरक्षा के उचित प्रबन्ध नहीं किये थे। मराठों का जो अत्यधिक भय उनके हृदय में बैठगया था वह निर्मूल न था। 21 साल पहले 1751 में सफदरजंग के अभियान में मराठों की जो छवि बनी थी वह बड़े–बड़े अफगान सरदारों की स्मृति में जीवन्त थी। उन पुराने सरदारों में केवल दो ही अब थे। यद्यपि सरदार खाँ जीवित तो था परन्तु मरणासन्न के समान था और हाफिज रहमत खाँ जीवित था परन्तु वह वृद्ध होचला था।

1 मार्च को सम्राट शुक्रताल पहुँचा। किन्तु किले में वह सब न था जिसकी आशा थी। जाब्ता खाँ और उसकी सेना के पलायन के बाद शुक्रताल के

---

11. यह शहर उ0प्र0 का जिला मुख्यालय है जो राष्ट्रीय राजमार्ग सं08 पर दिल्ली से प्रायः 135 किमी दूर है।

निकटवर्ती गूजरों और मेवातियों ने बड़े पैमाने पर लूट--पाट की थी।[12] इतनी जघन्य लूटपाट तो कभी मराठों ने भी नहीं की थी। पूरे किले में केवल दो तोपें मिलीं और वे भी इसलिए मिलीं क्योंकि वे बहुत भारी थीं और लुटेरे उन्हें ले नहीं जा सकते थे। सम्राट को किले की ओर से बड़ी निराशा हाथलगी। मराठों ने शीघ्रतापूर्वक नजीबाबाद के निकट पत्थरगढ़ का किला घेरलिया। नजफ खाँ भी घेरेबन्दी में जापहुँचा। सम्राट भी पीछे से जापहुँचा। वास्तव में किला बहुत सुदृढ़ था और इसमें जाब्ता खाँ ने गोला बारूद का व्यापक मात्रा में प्रबन्ध कर--रखा था।[13] किन्तु इसमें रसद की कमी थी। जाब्ता खाँ के चाचा सुलतान खाँ पर किले की सुरक्षा का दायित्व था। एक पखवाड़े तक गोली--बारी चली और सुलतान खाँ अन्दर से टूटगया था। जो बड़े--बड़े अफगान सरदार शुक्रताल से भागकर तराई जापहुँचे थे इनके परिवार और बच्चे इसी किले के अन्दर मौजूद थे। सुलतान खाँ ने विवश होकर किला खाली करने के लिए एक शर्त रखी। इसमें उसने जीवन व परिवार के सम्मान की सुरक्षा का वचनलिया। मराठों ने तुरन्त उसकी शर्त मानली और उसने 16 मार्च को पत्थरगढ़ का किला खाली करदिया। मराठों ने किले के दरवाजे पर चौकी स्थापित करदी। शुरू में गरीब लोग बाहर निकले। उनकी तलाशी लीगई। धनी व्यक्तियों ने अपने आभूषण और धन सुरक्षित छिपाने के लिये गहरी खाई में डालदिये जो पानी से लबालब भरी थीं। मराठों ने

---

12. Tahmasp Khan Miskin : op. cit. pp.278--279.
13. Ibid

इन अफगान व्यक्तियों को बाहर जानेदिया। किन्तु तूरानी मुगल सैनिकों ने उनमें से अनेक के कपड़े भी उतारवालिये। कुछ महिलाओं को उन्होंने उनके शिविर के बजाये अपने शिविर में जाने के लिए विवशकिया। किन्तु नजफ खाँ को इसकी जानकारी मिल गयी और उसने अपने सैनिक दस्ते की निगरानी में महिलाओं को जलालाबाद लुहारी में अफगान लोगों के पास भिजवादिया। 20 दिनों तक मराठा सैनिकों ने पत्थरगढ़ में छिपे हुए धन को पाने के लिऐ खुदाईयाँ कीं। गुप्तचरों ने उन्हें सूचना दी कि किलेवासियों ने अपने गहने व धन पानी से भरी खाईयों में डाल दिये थे। अतः उन्होंने पानी निकालने के लिए नालियाँ खोद दीं जिससे पानी बाहर निकलगया और उन्हें बड़ी मात्रा में माल हाथलगा।[14]

पत्थरगढ़ की लूट में सम्राट को कुछ हाथ नहीं लगा। इससे वह रुष्ट था। वह उसमें हिस्सा चाहता था। शाही खेमे का मत था कि अविश्वसनीय मराठों ने सारा तोपखाना तथा खजाने सहित हाथी, घोड़े और दूसरी सम्पत्तियाँ अपने कब्जे में करली थीं और सम्राट को केवल नगण्य भाग अर्पितकिया था। 3 मई को सम्राट का धैर्य टूटगया और उसने मराठा दूतों से बातचीत में कठोरता दिखायी जिससे वे नाराज होकर चलेगये। किन्तु अगले ही दिन सम्राट ने राजा रामनाथ को मराठा शिविर में भेजा। 11 मई को महादजी सिंधिया के माध्यम से इसका हल निकाला और निश्चित कियागया कि पत्थरगढ़ से प्राप्त परिसम्पत्ति में

---

14. **Ibaratnama** , Vol. I, p. 210.

से 1/2 भाग सम्राट को, 1/4 भाग पेशवा को तथा शेष 1/4 मराठा सरदारों को मिलना था। किन्तु हाथी, नकद और जवाहरात नहीं बाँटेगये। सम्राट ने धन की मांग की जिस पर महादजी सिंधिया ने उसे दो लाख देने का वचनदिया।[15]

वास्तव में देखा जाये तो यह भाग पत्थरगढ़ की लूट का बहुत थोड़ा हिस्सा था। 9 मई, 1772 को नगीना से एक **मराठा ऐजेन्ट** ने जो रिपोर्ट भेजी उसमें यह उल्लेख था कि ''पेशवा अथवा सम्राट को विना कुछ दिये लाखों–लाख रुपये के मूल्य का लूट का सामान मराठा अधिकारियों ने आपस में बाँटलिया था।''

एक तथ्यसंगत अनुमान के आधार पर ज्ञात होता है कि मराठों को पत्थरगढ़ की लूट में 10 लाख रुपये मूल्य के सोने, चाँदी के सिक्के–सामान मिले। 2298 घोड़े मिले जिनमें से 1043 सम्राट को दियगये। 3 बड़ी तोपें, दो जिजेल, सात जम्बूरक, 1842 गोले, 100 रॉकेट तथा 530 मन बारूद इत्यादि मिला। आपसी विवाद का मूल बिन्दु जाब्ता खाँ की जागीरों से सम्बन्धित था जिनमें वे खालसा भूमि भी सम्मिलित थीं जो पानीपत, सहारनपुर और मेरठ जिलों में थीं और जिन्हें पानीपत के युद्ध से पहले शाही अनुदानों के रूप में मराठों को दियागया था। किन्तु सम्राट ने अब भूतपूर्व वजीर कमरुद्दीन के बेटे फखरुद्दीन को सहारनपुर देदिया तथा करनाल व अनूपशहर महादजी को सौंपदिये। महादजी को यह दायित्व भी सौंपागया कि वह वजीर शुजाउद्दौला को

---

15. G. S. Sardesai : **Selections from Peshwa Dafter** , Vol. XXIX. pp. 277.

व्यक्तिगत रूप से सम्राट के समक्ष उपस्थित होकर वजीर के कार्यों का निष्पादन करने के लिए राजी करेगा। भगोड़ा जाब्ता खाँ तराई में नानकमत्ता के जंगल में पहुँचगया तथा वहाँ हाफिज रहमत खाँ व अन्य छिपेहुए रुहेला सरदारों से मिला। जाब्ता खाँ ने उन सभी से उसके पैतृक अधिकारों की रक्षा की याचना की किन्तु मराठों के भय से किसी ने हुँकारा नहीं भरा।[16] वे सभी सम्राट की व्यक्तिगत उपस्थिति से समर्थन प्राप्त दुर्धर्ष मराठों से खौफ खाये हुए थे। निराश जाब्ता खाँ ने शुजाउद्दौला की शरण ली।

नवाब वजीर, कैप्टन गैब्रील हार्बर के साथ शाहाबाद जापहुँचा और उसने 12 मई की भेंट वार्ता में जाब्ता खाँ का भाई के समान सम्मानकिया। वह नजीबुद्दौला कालीन विरोध से लेशमात्र भी प्रभावी न था। थोड़े दिन बाद गोपामऊ में शुजाउद्दौला से मिलने वह जापहुँचा और समझौते की बात चली। रुहेलों व मराठों के मध्य शुजाउददौला को मध्यस्थ बनायागया।

मराठा सरदार वीसाजी कृष्णा 40 लाख रुपये की क्षतिपूर्ति पर सहमत होगया।[17] यह राशि हाफिज रहमत व दून्दे खाँ से वसूल कीजानी थी। रुहेले वास्तव में अुरक्षित थे। उनके परिवार और स्वयं जाब्ता खाँ का परिवार सम्राट के अधीन बन्दी थे। मराठों ने सारा रुहेलखण्ड रौंदरखा था। तराई में

---

16. Muna Lal : op. cit. pp. 129--131.
17. Jadunath Sarkar : op. cit, pp. 37--39.

पेचिस फैला हुआ था जिसके कारण प्रतिदिन 100 से 150 तक अफगान शरणार्थी काल कवलित होरहे थे। उनके सैनिक फर्रुखाबाद और दूसरी जगहों पर भागरहे थे। नवाब की मध्यस्थता के कारण मराठों ने रुहेलखण्ड छोड़दिया। रुहेला जंगलों से अपने घरों में आगये और अपनी जागीरों में चलेगये। जाब्ता खाँ से अलग से सन्धि करके नजीबाबाद व सहारनपुर की पैतृक जागीरें वापस देदीगयीं और उसकी पत्नियाँ व बच्चे छोड़दियेगये। महादजी सिंधिया ने इन शर्तों पर आपत्तियाँ व्यक्त कीं।[18] वीसाजी कृष्णा और महादजी के बीच खाई चौड़ी होगयी और महादजी ने अपने इस मुखिया के पास जाना बन्द करदिया। मराठा अभियान अनिश्चय की भेंट चढ़गया। इस अनिर्णय की स्थिति के सम्बन्ध में मुरादाबाद से **पेशवा के ऐजेन्ट** ने लिखा :

"ऐसा लगता है कि हमारे राजनीतिक प्रबन्ध जो कुछ स्थानों पर परिपक्वता के रूप में आनेलगे थे, अनिर्णय की स्थिति में चलेजायेंगे। हमारे नेता एक राय नहीं हैं। प्रत्येक अपने हिसाब से कार्य करता है। भगवान जाने ! कि इसका परिणाम क्या होगा....कोई भी पूर्व निर्धारित धनराशि का भुगतान नहीं कर रहा।"

एक ऐजेन्ट ने एक अन्य पत्र में लिखा :

"हमारे सैनिक अपने घर वापस लौटजाने के इच्छुक हैं।"

---

18. Ibid.

वीसाजी कृष्णा तथा तुकोजी होल्कर को जब यह पताचला कि सम्राट दिल्ली लौटना चाहता है तो इन्होंने उस पर दबाव डाला कि वह दिल्ली की जगह इलाहाबाद के लिए प्रयाणकरे ताकि अंग्रेजों से बंगाल व बिहार का पुराना राजस्व वसूला जा सके और शुजाउद्दौला से भी वसूली की जा सके।[19] किन्तु सम्राट अपनी सैन्य कमजोरी को वास्तविक अर्थों में जानता था और वह इन दोनों की विश्वसनीयता पर भरोसा नहीं कर सकता था। उसका मुख्य परमर्शदाता मिर्जा नजफ खाँ अंग्रेजों का नियमित पेंशनर रहचुका था जिसने 1763 से 1765 के दौरान अंग्रेजों की सैन्य क्षमता का नजदीक से अनुभवकिया था। महादजी सिंधिया ने भी नजफ खाँ के मत को उचित बताया और इसलिए सम्राट दिल्ली के लिए चलपड़ा। एक दिन वीसाजी कृष्णा और तुकोजी होल्कर सम्राट के प्रधानमंत्री हसामुद्दौला के पास पहुँचे और उन्होंने पूर्वी प्रदेशों की ओर प्रयाण करने के लिए दबाव बनाया। झगड़ा बढ़गया कि दोनों पक्षों के समर्थकों ने हथियार निकाल लिये। किन्तु सम्राट ने संघर्ष रोकदिया और नजफ खाँ की टुकड़ी को आवश्यकता पड़ने पर अपनी सुरक्षा के लिए तैयाररखा। तब जाकर ये दोनों मराठा सरदार वापसगये।

इस प्रकार मई के अन्त में दिल्ली के लिए शाही सेना की वापसी शुरू हुई। सम्राट ने नजीबाबाद से अपने समर्थकों के पीछे दो पड़ाव की दूरी

---

19. तुकोजी होल्कर की मूर्खतापूर्ण योजना शीघ्र ही उसे भी अनुभव हुई जब अंग्रजों की टुकड़ी से उसका वास्ता पड़ा।

रखकर यात्रा प्रारम्भ की। वह नहटोर,[20] शेरकोट[21], स्योहारा[22], सलीमपुर[23] और अमरोहा[24] होता हुआ गंगा तट पर पहुँचा और पूर्व में नदी पार की। तत्पश्चात् पश्चिम की ओर मुड़ा और मेरठ जिले के बक्सर[25], हापुड़[26] और लाखन[27] गाँव से होता हुआ दिल्ली की ओर बढ़ा। 9 जुलाई को वह दिल्ली पहुँचगया। इस अभियान में जान–बचाकर भागते रुहेलों ने आँवला, बरेली, रामपुर आदि अपने शहरों में आग लगादी थी तत्पश्चात् बचाहुआ शेष मराठों ने छीनलिया। केवल अमरोहा ही एक ऐसा शहर था जो वहाँ के सैयदों ने नजफ खाँ के माध्यम से 60 हजार रुपये के भुगतान का वचन देकर सुरक्षित बचालिया था। यह धनराशि मिर्जा नजफ खाँ के सिपहसलार कुली खाँ ने बड़ी क्रूरतापूर्वक वसूलकी थी। इसके बारे में कहाजाता था कि यह हृदय की कठोरता में दूसरा यजीद था।[28] उसने यह धनराशि पेशवा को पहुँचवादी। दोआब की ओर लौटते वक्त मराठों ने खुर्जा[29] का घेराडालदिया। इस समय खुर्जा एक जाट चौकी के रूप में थी। दो माह की लड़ाई के बाद 30 जुलाई को खुर्जा का पतन होगया। 29 जुलाई को सम्राट का

---

20. यह बिजनौर जिले में त्यागियों की रियासत रही है।
21. यह बिजनौर जिले में स्थित है ।
22. यहाँ भी 1952 तक त्यागी रियासत विद्यमान थी।
23. यह स्योहारा और अमरोहा के मध्य स्थित है।
24. यह उ0प्र0 का जिला मुख्यालय है।
25. यह बक्सर गोवर्धनपुर नाम से प्रसिद्ध है, जो राष्ट्रीय राजमार्ग सं0 24 पर स्थित है।
26. राष्ट्रीय राजमार्ग सं0 24 पर गाजियाबाद जिले का तहसील मुख्यालय है।
27. यह हापुड़ और दिल्ली के बीच अवस्थित है।
28. यजीद, मानिया का पुत्र था। इसीने करबला में पैगम्बर मुहम्मद साहब की बेटी के पुत्रों की सन्तानों की हत्या की थी।
29. जिला बुलन्दशहर का तहसील मुख्यालय है।

पहला शानदार सालाना जलूस मनायागया।

वीसाजी कृष्णा और तुकोजी होल्कर एवं सम्राट से उनकी झड़प

शरद ऋतु आते–आते सम्राट और उसके शहर को एक विपत्ति ने आघेरा। पत्थरगढ़ अभियान ने सम्राट और मराठों के बीच वैमनस्य उत्पन्न कर दिया था।[30] रुहेले पूर्णतः हरादियेगये थे किन्तु शाही जीत ने दोनों पक्षों को निराश किया। सम्राट को आभास होनेलगा कि न तो मराठे उसके खोए हुए प्रदेशों को वापिस लेने में सैन्य मदद करेंगे और न ही उससे अधिक राजस्व उपलब्ध करा पायेंगे जितना कि नजीबुद्दोला कियाकरता था। दूसरी ओर मराठे 22 मार्च, 1771 की सन्धि की संवैधानिक माँग की पूर्ति के लिए माँग करेंगे जिसके तहत उन्होंने उसे दिल्ली में आसीन कराया था। उस सन्धि के अनुसार तीस लाख रुपये अभी भी सम्राट द्वारा दियेजाने थे और इस धनराशि के लिए पेशवा की पूना सरकार द्वारा माँग की जारही थी। सम्राट ने राजस्व वसूली के लिए अवध और लम्बे समय से विलम्बित बिहार के अभियान पर जाना अस्वीकार करदिया था। ऐसे में इन मराठा सरदारों का ध्यान नजीबुद्दौला की विपुल सम्पत्तियों के उत्तराधिकारी उसके पुत्र जाब्ता खाँ की ओर जाना स्वाभाविक ही था। यही एकमात्र व्यक्ति था जिससे सम्राट की आवश्यकता हेतु धनापूर्ति करायी जा सकती थी। मराठा दबाव के कारण मीरबख्शी के पद और पैतृक जागीरों पर

---

30. सम्राट वीसाजी कृष्णा और तुकोजी होल्कर को नापसन्द करनेलगा था।

पूर्व की भाँति अधिकार के ऐवज में जाब्ता खाँ पेशवा को साढ़े दस लाख रुपये देने को सहमत होगया। जाब्ता खाँ के पारिवारिक मित्र तुकोजी होल्कर ने वीसाजी कृष्णा को इस नीति में शामिल करलिया। किन्तु महादजी सिंधिया ने सम्राट के विरुद्ध उनके द्वारा प्रस्तावित कार्यक्रम में भाग लेने से और नजीबुद्दौला के वंश के हितों को बनायेरखने की योजना में शामिल होने से इंकार कर दिया।[31]

पिछले रुहेले अभियान के दौरान सम्राट की दृष्टि में मिर्जा नजफ खाँ का स्थान बहुत ऊँचा होगया था। अभियान के दौरान गंगा तट पर सम्राट ने नजफ खाँ से प्रसन्नता से चिल्लाकर कहा था–" तुमने मेरी इज्जत बचा ली। " अब सम्राट ने उसे दिल्ली के उत्तर एवं पश्चिम में कई जिले सौंप दिये ताकि वह उनसे प्राप्त आय से सम्राट की सेवा में एक अच्छी सेना खड़ी कर सके। नजफ कुली खाँ को उसने हाँसी, हिसार में नियुक्तकिया। तूरानी मुगल नियाज बेग को सहारनपुर और मुहम्मद बेग हमदानी को जलालाबाद लुहारी (गौसगढ) तथा अफरासियाव खाँ को सोनीपत व पानीपत में तैनातकिया। सम्राट के झंडे के नीचे नई सेना के गठन की सूचना पाकर दिल्ली में जत्थे के जत्थे पहुँचनेलगे। इनमें अधिकांशतः पुरानी विश्रृंखलित दस्तों के सैनिक थे। शीघ्र ही एक प्रभावी सेना सम्राट की सेवा में प्रस्तुत थी। इसमें सात हजार सैनिक थे। इसके अलावा फारसी और तुर्क अवयवों से मुगलिया घुड़सवार दस्ता नजफ खाँ की व्यक्तिगत सेवा में

---

31. महादजी सिंधिया की नीति सुस्पष्ट थी। बाद के कालखण्ड में घटित घटनाओं ने सिद्ध किया कि मराठों में वही एक व्यावहारिक रूप से सटीक योजनाकार था।

पहले ही तैयार करलियागया था।

नजफ खाँ के उत्थान से हसामुद्दीन के मन में ईर्ष्या बढ़गयी और उसने तुकोजी होल्कर व वीसाजी कृष्णा के साथ मराठा संरक्षण में जाब्ता खाँ को सम्राट से पुनः मीरबख्शी बनवाने की चालचली[32] ताकि नजफ खाँ को मातदी जा सके। इन लोगों ने सम्राट से योजनापूर्वक इसकी मांग की किन्तु सम्राट ने यह मांग ठुकरादी। इसी प्रश्न पर सम्राट और दिल्ली शहर को मराठा आक्रमण के रूप में कीमत चुकानी पड़ी। इसी बीच वर्षा ऋतु आरम्भ होगयी और तीन महीने सैन्य गतिविधियाँ सदैव की भाँति बन्द रहीं। वर्षा के बाद मिर्जा नजफ खाँ ने जाटों के विरुद्ध अभियानकिया। शाही सेना ने दिल्ली के दक्षिण में कई किलेबन्द छोटी गढ़ियों पर अधिकार करलिया। किन्तु जाट राजा ने मराठों को कुछ धनराशि का भुगतान करने की सन्धि करके मराठों से निश्चिन्त होकर उसने शाही सेना के विरुद्ध अपनी टुकड़ी भेजी। उसके अग्रिम दस्ते का नेतृत्व **रेने मेडेक** कररहा था। उसने आते ही शाही सेना को पीछे हटादिया और विना एक भी तीर चलाये सभी चौकियों पर पुनः अधिकार करलिया। रेने मेडेक के इस कार्य ने सम्राट का ध्यान आकर्षितकिया और उसने इसे शाही सेना में आने का निमंत्रणदिया। सन्देश वाहक के माध्यम से यह फ्रांसीसी योद्धा अपने तीन हजार प्रशिक्षित सैनिकों सहित 40 हजार मासिक वेतन पर शाही सेना में नौकरी करने के लिए सहमत हो

---

32. महादजी की ऐसे कार्यों में स्पष्ट असहमति थी।

गया।[33] सम्राट की ओर से उसे यह भी आश्वस्त कियागया था कि वह अपनी सैनिक संख्या कितनी भी बढ़ासकता था। उसे 6 हजार जात व सवार का **मनसब** तथा **नवाब शम्सुद्दौला बहादुर कायम जंग** की उपाधि भिजवा दीगयी। इस पर वह जाट राजा नवाब सिंह की नौकरी छोड़कर सम्राट की सेवा में उपस्थित हो गया। क्योंकि उसने विना पूर्व सूचना के राजा नवल सिंह की सेवा छोड़दी थी, अतः, उसे दो लाख रुपये के **ऐरियर** का नुकसान हुआ।[34] उसकी काफी सम्पत्ति भी भरतपुर में रहगयी थी।

दिल्ली पर मराठा आक्रमण

जाब्ता खाँ और राजा नवल सिंह के प्रश्न पर वीसाजी कृष्णा व तुकोजी होल्कर सम्राट से क्रोधित थे और उन्होंने नवम्बर में दिल्ली की ओर रुख किया। 21 नवम्बर को वे राजधानी से केवल 13 कि0मी0 दूर थे। सम्राट ने अपने सरदारों के साथ मन्त्रणा की तथा उसने फजल अली खाँ को अंग्रेजों द्वारा उपलब्ध करायीगयी दो बटालियनों के साथ शाहदरा में यमुना तट पर खाईयाँ खोदने के लिए भेजा। लेकिन मराठे खिज्राबाद गाँव से यमुना पार करके दिल्ली के दक्षिणी ओर पहुँचगये।[35]

---

33. सम्भवतः भारत में फ्रांस के राष्ट्रीय हित को दृष्टिगत रखते हुए उसने सम्राट की सेवा में जाने का निर्णय लिया था, अन्यथा तथ्य तो यह है कि इससे उसे स्वयं व्यक्तिगत रूप में कई लाख रुपये की हानि निश्चित थी।
34. उसकी सैन्य साज–सज्जा एवं अन्य बहुविध कीमती सामान भी भरतपुर में उसके आवास में रहगया।
35. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 41.

7 दिसम्बर को मिर्जा नजफ खाँ मराठों से लड़ने बारापुला की ओर गया। किन्तु कोई युद्ध न हुआ। 10, 12 और 16 दिसम्बर को कुछ झड़पें हुईं और 17 दिसम्बर को निर्णायक युद्ध हुआ। शाही सेना की तीन पल्टन अपनी मस्कट लिए तैयार थीं। मराठा हल्की घुड़सवार सेना को अपनी ओर आते देख उन्होंने एक साथ बन्दूकें दागदीं। किन्तु अभी तक मराठे गोलियों की रेंज से बाहर थे तथा किसी को भी गोली न लगी और शाही सेना जब तक दुबारा मस्कटों से गोली चलापाती तब तक मराठे उन पर तलवार लेकर टूटपड़े। शाही सेना का दायां व बायां अंग निष्प्रभावी रहगया। केवल केन्द्रीय भाग रेने मेडेक के नेतृत्व में युद्ध करतारहा। जब उसे किसी ओर से भी सहायता न मिली तो वह वर्गाकार व्यूह बनाकर लड़नेलगा और उसने चारों ओर से मराठों को दूर ढकेले रखा। मिर्जा नजफ खाँ के सैनिक पूर्णतः निष्प्रभावीरहे। स्वयं मिर्जा नजफ खाँ ने भी रेने मेडेक के व्यूह में आकर सुरक्षा प्राप्तकी। मराठा सेना की बाईं टुकड़ी ने शहर तक धावाबोला और मेडेक के शिविर को लूटलिया।[36] ऊँट, घोड़े आदि दूसरे साजो–सामान मराठे लूटकर लेगये। मेडेक लिखता है : "हिसाम बिल्कुल पास ही किले की दीवारों के पीछे भारी तोपखाने के साथ मौजूद था। लेकिन वह न तो नजफ खाँ की सहायता के लिए आगे बढ़ा और न ही उसके शिविर को बचाने के लिए आया और थोड़ी देर बाद वह सैनिकों सहित खाइयों से निकल कर शहर

---

36. Muna Lal : op. cit. pp. 135--138.

में भागगया।" रेने मेडेक ने उसके इस व्यवहार के पीछे नजफ खाँ से ईर्ष्या बतलाया है। उसका यह भी मानना था कि उसके शिविर की लूट में मराठों के साथ हिसाम के सैनिक भी थे। उसके बाद मराठा सैनिक गाजिउद्दीन के आवास में घुसगये। इस किलेबन्दनुमा गढ़ी में करम खाँ नामक व्यापारी ने कुछ धन, घोड़े आदि रखवादिये थे जिन्हें लूट लियागया। दिल्ली दरवाजे के पास स्वयं सम्राट के दो हाथी भी मराठों के हाथलगे। उसके सेनाधिकारी डी0 कैरेस काओ की सूझ–बूझ के कारण रेने मेडक की व्यूह रचना अभेद्य बनीरही। दोपहर से लेकर तीन घंटे रात तक रेने मेडेक की सेना लड़तीरही थी। हसामुद्दौला के विरुद्ध विश्वासघात का आरोप था। जो भी युद्ध हुआ वह केवल रेने मेडेक की सूझ–बूझ से हो सका। दोनों ओर के तीन हजार लोग मारेगये। मराठों के 17 सरदार खेतरहे तथा 12 गम्भीर रूप से घायलहुए। पिण्डारियों ने पटपड़गंज व जयसिंहपुरा को आग लगादी।[37] पुराने किले का युद्ध निर्णायक रहा। रेने मेडेक पुरानी दिल्ली के खण्डहरों में अपनी खाईयों के पास बैठा था कि उसकी जांघ में एक गोली लगी। सम्राट भयभीत था। मराठा सेना शहर में मौजूद थी। जाब्ता खाँ के रुहेले सैनिक उनके साथ थे। मराठों की सहायता के लिए जाट सिपाही एवं समरु की बटालियन व तोपें पहुँच चुकी थीं। सम्राट असहाय था और 19 दिसम्बर को हसामुद्दौला सन्धि वार्ता के लिए वीसाजी कृष्णा व तुकोजी होल्कर के शिविर में

---

37. पिण्डारी मराठों की सेना के साथ चलते थे। मराठों की ओर से उन्हें वेतन आदि नहीं दिया जाता था बल्कि विजित अथवा अभियान क्षेत्र में लूटमार करने की वैध छूट मिलती थी।

गया। 20 तारीख को वीसाजी के दीवान दादो मल्हार और पाँच अन्य सरदार आये और सम्राट से गोपनीय वार्ता की। 26 दिसम्बर को पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार किले में सावधानी पूर्वक सुरक्षा के प्रबन्ध के उपरान्त वीसाजी कृष्णा, तुकोजी होल्कर सम्राट के सामने आये। वे अपने हाथ रुमाल से बांधे हुए थे। जैसे वे युद्धबन्दी हों। उन्होंने स्वर्ण मोहरें सम्राट को प्रस्तुत कीं और सम्राट ने उन्हें हाथी तथा अन्य उपहार सम्मानपूर्वक भेंटकिये। जाब्ता खाँ को मीरबख्शी बनायागया और उसे सहारनपुर, मेरठ और रुहेलखण्ड की पैतृक जागीरें वापिस करदीगयीं।[38] 2 जनवरी, 1773 को मराठों की माँग के अनुसार सम्राट ने मेडेक की बटालियन तथा नजफ खाँ द्वारा स्थापित मुगलिया घुड़सवार सेना और दूसरे दस्ते बर्खास्त करदिये। ये सब हुसामुद्दौला की चाल थी। लेकिन मराठों के दिल्ली से चलेजाने के बाद मिर्जा नजफ खाँ से उसे प्राणों का भय था। अतः उसने मराठों को इस बात के लिये रिश्वत दी कि वे नजफखाँ को सम्राट की सेवा से निकलवा दें। मराठों को भी लगरहा था कि सम्राट द्वारा 1771 में 25 लाख रुपये की जिस धनराशि का वचन दियागया था उसका मिलना असम्भव था। अतः, उन्होंने 25 के स्थान पर नौ लाख रुपये पर फैसला करलिया। हसामुद्दौला ने नकद और दूसरे रूप में यह 9 लाख रुपया अदा करदिये और उसने तुकोजी होल्कर को एक लाख रुपया अलग से देना निश्चितकिया। किन्तु यह शर्त थी कि वे नजफ खाँ

---

38. इस कार्य ने पत्थरगढ़ अभियान का प्रभाव पूर्णतः समाप्त करदिया था।

को बर्खास्त करादेंगे। मराठों ने मिर्जा नजफ खाँ को योग्य दुश्मन मानते हुए सम्राट से मांग की कि वह उसे बर्खास्त करके उन्हें सौंप दे अथवा अपना मुगलिया दस्ता लेकर दिल्ली से चलेजाने के लिए बाध्य करे। शहर में यह धमकी शीघ्र ही सर्वज्ञात होगयी। इस पर मुगलिया सैनिक शहर के प्रत्येक हिस्से में झुंड बनाकर नजफ खाँ के आवास पर पहुँचगये और उसकी सुरक्षा करने लगे।[39] मिर्जा नजफ खाँ ने भी अपनी रक्षा पंक्ति दृढ़ करली और सम्राट के आदेश की अवहेलना करदी। हसामुद्‌दौला ने मराठों को शहर में बुलवाया तथा नजफ खाँ के मुगलिया समर्थकों को खदेड़ने के लिए लाहोर दरवाजे की ओर शाही तोपखाना भेजा। मराठों ने शहर की दीवार के बाहर नजफ खाँ के आवास के सामने यमुना तट पर मोर्चा सम्भाललिया। रात को वे वापिस आ-- गये और अगले दिन पुनः मोर्चा बन्दी कीगयी। उसने अन्ततः दिल्ली छोड़ने का मराठा प्रस्ताव स्वीकार कर उनके यहाँ तीन हजार रुपये प्रतिदिन पर नौकरी करना स्वीकार करलिया। मराठों को उसे साथ लेकर रुहेलखण्ड और शुजाउद्‌दौला के इलाके में अभियान करने थे। इसीलिये उन्होंने उसे अपने यहाँ नौकरी पर रख लिया था।

मराठा अभियान

मराठा सरदारों ने यमुना पार कर 2 फरवरी, 1773 को दोआब में

---

39. इससे मिर्ज़ा नज़फ खाँ आक्रामक स्थिति में आगया जब कि उसके प्रतिद्वन्द्वी रक्षात्मक अवस्था में पहुँच गये।

प्रवेशकिया। अगले दिन नजफ खाँ अपने मुगलिया दस्ते सहित चलपड़ा। जाब्ता खाँ ने भी अभियान में साथदिया। ये तेजी से चलकर 15 फरवरी को गंगा के पश्चिम तट पर स्थित रामघाट जापहुँचे।[40] उनका उद्देश्य कड़ा व इलाहाबाद के जिलों को सम्राट की आज्ञानुसार शान्तिपूर्वक लेना था। अतः, उन्होंने शान्तिदूत भेजकर अवध के नवाब से उक्त मांग की कि जो जागीरें उसने 1765 के बाद से अपहृत कररखी थीं, उन्हें सौंपदे। उन्होंने गंगा पार के रुहेलों और विशेषतः हाफिज रहमत खाँ को बुलवाया और उससे जनवरी 1771 की सन्धि के अनुसार निश्चित धनराशि माँगी।

दिल्ली पर आक्रमण से पहले ही महादजी सिंधिया रुष्ट होकर अपने 10 हजार सैनिकों के साथ अलग हटगया था।[41] शिवाजी विटठ्ल के नेतृत्व में पाँच हजार सैनिक, गौसाई एवं स्थानीय सरदारों को दबाने के लिए झाँसी भेज दियेगये थे। अब मराठा सेना में 30 हजार सैनिक थे। जो लगभग बराबर संख्या में वीसाजी व तुकोजी के अधीन थे।

दूसरी ओर रेने मेडेक बेरोजगार होगया था और उसने अवध की नौकरी में जाने की प्रार्थना की। यदि 1764 की घटना को लेकर वे उसे माफ कर दें। तुकोजी होल्कर फैजाबाद पर हमला करने को आतुर था और तीन दिन में फैजाबाद को जीतने का विचार रखता था क्योंकि यह शहर चारदीवारी युक्त

---

40. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 47.
41. Ibid. p. 39.

नहीं था। किन्तु वीसाजी कृष्णा वास्तविकता समझता था और इसीलिये युद्ध से बचरहा था।

शुजाउद्दौला ने अपनी सुरक्षा के लिए अंग्रेज गर्वनर से किराये पर सेना माँगी। उसे इसका आश्वासन भी मिलगया। वह फैजाबाद से लखनऊ होता हुआ कानपुर जापहुँचा। कानपुर में अंग्रेज ब्रिगेड और पैदल सेना सहायतार्थ मिली जो कर्नल चैम्पेल के नेतृत्व में थी। 3 मार्च को चैम्पेल सहित नवाब फर्रुखाबाद के सामने गंगा के दूसरे तट पर पहुँचगया। यहाँ और अधिक ब्रिटिश सेना आकर सम्मिलित होगयी और अंग्रेज कमाण्डर–इन–चीफ़ जनरल सर रॉबर्ट बार्कर उससे आमिला। रुहेलों की ओर से शुजा को बार–बार सूचना मिलरही थी। अतः वह सम्मिलित सेना के साथ तेजी से उत्तर की ओर बढ़ा। 19 मार्च को वह रामघाट से 32 कि0मी0 की दूरी पर स्थित सहसवान आपहुँचा। यद्यपि वीसाजी कृष्णा उत्तरी भारत में मराठों का सर्वोच्च अधिकारी था, किन्तु, इन परिस्थितियों में वह तुकोजी के सामने असहाय था। तुकोजी ने नजफ को साथ लेकर अपने 15 हजार सैनिकों के साथ गंगा पार करली जबकि वीसाजी आधी सेना के साथ भारी भरकम सामान सहित रामघाट के पश्चिम में बैलोन[42] गाँव में रुकारहा। पिण्डारी आस–पास में लूटपाट करतेरहे। मराठों ने किसी भी आपात स्थिति से निपटने के लिए पूठ में गंगा पर नावों का पुल तैयार करवालिया।

---

42. जिला बुलन्दशहर (उ0प्र0) का एक गाँव।

अंग्रेजी फौज से तुकोजी का सामना

गंगा के पूर्वी किनारे पर पहुँचकर तुकोजी होल्कर ने अहमद खाँ पर आक्रमणकिया तथा पकड़लिया। यह सरदार खाँ का पुत्र था जो अली मुहम्मद रुहेले का बख्शी रहचुका था। यह रामघाट के दूसरी ओर असदपुर की गढ़ी से पकड़ागया था। यह अभियान संक्षिप्त और तीव्र था। इसमें रुहेलों के 2 हजार सैनिकों में से 300 सैनिक मारेगये जबकि मराठों के 900 सैनिक खेतरहे। 20 मार्च को सहसवान[43] से चलकर अंग्रेजी सेना रामघाट जापहुँची। यह जानकार तुकोजी ने घेरा उठालिया और 56 कि0मी0 दूर स्थित सम्भल[44] को जाघेरा। सम्भल के बाद उसने मुरादाबाद[45] को लूटा। जितनी तेजी से वह गया था उसी तेज गति से वह पूठ में गंगा पार कर के अलीगढ़ में वीसाजी से आमिला।

उधर 20 मार्च को प्रातः 10 बजे रामघाट की ओर बढ़ते समय अंग्रेजी ब्रिगेड ने मराठा सेना देखी। उन्होंने तुरन्त युद्ध की व्यूहरचना की। तभी मराठा सेना का एक बड़ा दस्ता बिना लड़े ही वापिस गंगा पार करगया। यद्यपि उनके 300 घुड़सवार टुकड़ी की टोह लेतेहुए पश्चिम की ओर दिखाई पड़े। अभी जनरल बर्गर का शिविर गाड़ा ही जारहा था कि वीसाजी कृष्णा की ओर से 12 पौण्ड के दो गोले उसके तम्बू के पास आकर गिरे। 30 गोलियाँ भी उस

---

43. जिला बदायूँ (उ0प्र0) का तहसील मुख्यालय ।
44. जिला मुरादाबाद (उ0प्र0) का पुराना ऐतिहासिक कस्बा एवं तहसील मुख्यालय है।
45. अकबर के पुत्र मिर्जा मुराद के नाम पर रामगंगा पर बसा शहर, वर्तमान में उ0प्र0 का जिला एवं कमिश्नरी मुख्यालय।

ओर से चलीं जिसके फलस्वरूप एक वृद्धा स्त्री की मृत्यु होगयी तथा एक हाथी घायल हुआ। अंग्रेजों ने तुरन्त दो तोपें चलायीं जिनसें मराठों के कई सैनिक मारेगये। वे अनिर्णय की स्थिति में वहाँ से भागनिकले।

22 मार्च की प्रातः बड़े सवेरे अंग्रेज जनरल ने रामघाट में गंगा पार की। वीसाजी कृष्णा सूचना मिलते ही 22 कि0मी0 पीछे हटगया। अंग्रेजों ने मराठों के शिविर स्थान पर ही शिविर लगाया। जनरल पार्कर 13 कि0मी0 ओर आगे बढ़गया। दोहरी चाल चलनेवाला हाफिज रहमत खाँ अब वजीर के शिविर में आगया। नजफ खाँ के अनेक अधिकारी भी अंग्रेजों से आमिले। होल्कर की मुरादाबाद लूट की खबर से अंग्रेज टुकड़ी उस ओर बढ़ी, किन्तु 26 मार्च को मराठों की वापिसी की खबर पाकर जनरल पार्कर पुनः रामघाट लौटआया। 27 तारीख को दो बजे मराठों ने रामघाट पर कब्जा करना चाहा। किन्तु नवाब के हीजड़े सेनापति महबूब अली खाँ ने उन्हें भगादिया। यह रुहेलखण्ड में मराठों का अन्तिम अभियान था क्योंकि ठीक एक साल बाद वह इलाका अवध में मिलालियागया था और अंग्रेजों के संरक्षण में आगया था। अंग्रेजों की सेना 16 दिन तक रामघाट में रुकी रही। तत्पश्चात् उसने अनूपशहर[46] में जाकर पड़ाव डाला। यह परिस्थिति मराठों के लिए विनाशकारी थी। उत्तरी भारत में उनके तीन सालों के प्रयत्नों पर पानीफिरगया था। तुकोजी होल्कर व वीसाजी कृष्णा इसके

---

46. जिला बुलन्दशहर का तहसील मुख्यालय , गंगा के दाहिने तट पर अवस्थित।

लिए एक दूसरे को दोषी ठहरारहे थे। नजीबुद्दौला के समय के 5 हजार सैनिक शुजाउद्दौला से पहले ही मिलगये थे।

फरवरी 1770 से लेकर मई 1773 तक की मराठा सफलताएं इन दोनों मराठों सेनापतियों की मूर्खता के कारण नष्ट होगयीं। अब वे कुछ हद तक इटावा और फैजाबाद के क्षेत्र में थे। अब वे घर वापसी की भी तैयारियाँ करने लगे। इन्होंने इटावा के निकट एक स्थान पर पत्थरगढ़ की लूट में प्राप्त भारी तोपें जमीन में छिपा दीं और बड़ी मात्रा में लूट का सामान कालपी में यमुना के नावों के पुल से होकर भिजवाने की व्यवस्था की। 21 अप्रैल को मराठों की ओर से शान्ति सन्धि हेतु दो वकील शुजाउद्दौला के द्वारा जनरल बार्कर से मिलनेगये। शुजा ने मराठों को यह वचन देकर सन्तुष्ट करलिया कि वह 1772 के युद्ध की क्षतिपूर्ति, जो उसके माध्यम से रुहेलों पर निर्धारित करायीगयी थी, के लिए 15 लाख का लिखित अनुबन्ध हाफिज रहमत खाँ से और 5 लाख का अनुबन्ध अहमद खाँ बंगश के पुत्र से लेगा और पत्थरगढ़ अभियान के समय उसकी मध्यस्थता में निर्धारित रकम की पूर्ति करायेगा। किन्तु रुहेलों को नवाब द्वारा रामघाट में प्राप्त सैन्य सहायता के बदले दीजानेवाली धनराशि का कोई प्रबन्ध नहीं कियागया जबकि 1772 की सन्धि में 40 लाख का वचन दियागया था। 5 मई को मराठा सरदारों ने नजफखाँ की सेवाएं समाप्तकरदीं और अलीगढ़[47] में उसे उपहार,

---

47. प्राचीन कोल शहर ही वर्तमान अलीगढ़, उ0प्र0 का जिला मुख्यालय एवं अब अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के कारण प्रसिद्ध।

सम्मान, आभूषण, 26 हजार नकद और अपनी जागीरों में से 19 परगने देकर विदा किया। तत्पश्चात् इटावा और कालपी के रास्ते वे दक्षिण की ओर लौटगये। अनूपशहर में गंगा के दूसरे तट पर 9 मई को मिर्जा नजफ खाँ, जनरल बार्कर से मिला और 20 मई को वापस दिल्ली पहुँचगया।

1773 में पूना की स्थिति असामान्य थी और उत्तर भारत से मराठा सेनाओं की वापसी के बाद लम्बे समय तक मराठे उत्तर की राजनीति से विलग रहे। नवाब शुजाउददौला चूँकि अनुपस्थित वजीर के रूप में था इससे दिल्ली प्रशासन शिथिल होतागया। सम्राट की कठिनाईयाँ बढ़तीजारही थीं। ऐसे में अब्दुल अहद खाँ कश्मीरी रीजेन्ट बना। उसके द्वारा हरियाणा क्षेत्र में सैन्य अभियान की असफलता से स्वयं उसकी स्थिति डाँवाडोल होउठी। मिर्जा नजफ खाँ के विरुद्ध षड्यन्त्र में लिप्तरहना उसकी आदत थी।[48] अन्ततः मिर्जा नजफ खाँ ने उसका पतन करदिया और रीजेन्ट का पद संभाला। सम्राट के पास इसके अतिरिक्त कोई विकल्प शेष नहीं था। 9 नवम्बर 1779 से लेकर 6 अप्रैल 1782 को अपनी मृत्यु तक वही रीजेन्ट रहा। मिर्जा की मृत्यु से सम्राट की स्थिति नियंत्रणहीनता की ओर बढ़ी। सम्राट ने दिवंगत मित्र के विश्वस्त अधीनस्थों में से मिर्जा शफी खाँ को मीर बख्शी नियुक्तकिया। दूसरी ओर मुहम्मद बेग हमदानी भी अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता था। ऐसे में मिर्जा मुहम्मद शफी ने महादजी सिंधिया को बुलावा भेजा

---

48. अब्दुल अहद कश्मीरी का वजूद मानो मिर्जा के विरोध पर निर्भर होगया था।

ताकि मुहम्मद बेग हमदानी का दमन किया जा सके। उसने हिम्मत बहादुर के माध्यम से महादजी को सन्देश भेजा :

"हमें अपने हृदय की बात स्पष्ट करने हेतु आपस में भेंट करनी चाहिए। नजफ खाँ शपथपूर्वक आपके भाई थे। अब वह नहीं रहे और उनके बाद आप ही मेरे पिता हैं। मेरी सलाह के मुताबिक काम करें।"[49]

इस समय महादजी सेना सहित ग्वालियर किले की घेराबन्दी में लगा था। वह समय निकालकर एक टुकड़ी लेकर मिर्जा शफी से भेंट करने के लिए चलपड़ा। 27 जून, 1783 को उन्होंने परस्पर भेंट की। 3 दिन बाद सिंधिया ने शाही शिविर में जाकर शफी के माध्यम से शहजादे से भेंट की। मिर्जा ने सिंधिया से मित्रतासूचक **रस्म पगड़ी** का आदान–प्रदान किया। शफी ने उससे प्रार्थना की कि वह साम्राज्य के सुचारू प्रबन्धन हेतु दिल्ली आये। सिंधिया ने इसे स्वीकार किया। तत्पश्चात् दोनों अपने–अपने नियत स्थानों पर वापिस लौटगये। सिंधिया ग्वालियर के लिए चला तथा मिर्जा शफी ने डीग की ओर प्रयाणकिया। किन्तु इस प्रकरण से मुहम्मदबेग हमदानी आशंकित था और वह मन ही मन षड्यन्त्र रचरहा था। उसने अफरासियाब खाँ से गुप्त सहमति बनाली। उसने षड्यन्त्रपूर्वक मिर्जा शफी की हत्या करवादी। यह घटना 23 सितम्बर को हुई। उसकी मृत्यु मुगलों के लिए घातक सिद्ध हुई। वह एक योग्य व्यक्ति था किन्तु षड्यन्त्रकारी अयोग्य

---

49. मिर्जा मुहम्मद शफी , मिर्जा नजफ़ खाँ का भतीजा था।

हमदानी के हाथों मारागया।

अक्टूबर, 1783 से मीर बख्शी के पद पर मिर्जा नजफ खाँ के दूसरे विश्वस्त संरक्षित अफरासियाब खाँ को नियुक्ति मिली।[50] यद्यपि मिर्जा शफी की हत्या में उसकी गुप्त सहमति थी। किन्तु यह प्रकट में सिद्ध नहीं हो सकती थी।दूसरी ओर, चूँकि शहजादा सुलेमान शिकोह अफरासियाब के शिविर में राजधानी से दूर था। अतः, अब्दुल अहद खाँ और सम्राट को यह भय था कि कहीं वे लोग शहजादे को भ्रमित करके बगावत न करवादें। अतः, षड्यन्त्र की संभावना को जड़ से मिटाने के लिए अब्दुल अहद खाँ की सलाह पर सम्राट ने अफरासियाब खाँ को ही **मीरबख्शी** घोषित करदिया।

18 नवम्बर को अफरासियाब के दिल्ली पहुँचने से पूर्व ही उसकी यह पदोन्नति हुई। अब्दुल अहद खाँ को **शफउद्दौला, उमदतुल्मुल्क, मदारुलमुल्क** आदि उपाधियाँ दी गईं। वह अब 24000 जात का बड़ा मनसबदार बनगया था। उसने शीघ्र ही मिर्जा नजफ खाँ का आवास अपने अधिकार में कर लिया और दिवंगत मिर्जा के दो विश्वस्तों, राजा मनीराम और मेहदी कुली खाँ, को 14 नवम्बर को कैद करलिया।

दूसरी और 31 जुलाई, 1783 तक सिंधिया ने ग्वालियार को पूर्णतः अपने अधिकार में लेलिया। 25 फरवरी, 1784 को उसने गोहद के राजा छत्रसिंह

---

50. यह एक हिन्दु पंसारी का बेटा था किन्तु बाल्यकाल में ही परिस्थितिवश इसे मिर्जा नजफ़ खाँ ने अपने संरक्षण में लेलिया था।

का भी दमन करदिया। वह समस्त मालवा का निष्कंटक स्वामी बनचुका था।

2 अगस्त, 1784 को महादजी ग्वालियर से शाही खेमे की ओर चला ताकि सम्राट से भेंट कर सके। किन्तु वर्षा होजाने से उसकी यात्रा 16 दिन विलम्बित होगयी। हुआ यह था कि 5 अगस्त से लेकर 19 अगस्त तक लगातार बारिश पड़तीरही थी। अभी वह 20 कि0मी0 ही चलपाया था कि वर्षा आरम्भ हो गयी थी। उसके शिविर में सर्वत्र पानी भरगया और उसके 2 हाथी, अनेक घोड़े और भारवाहक पशु बारिश में अधिक भीगने से मरगये। अनेक सैनिक बीमार पड़ गये। 5 सितम्बर को वह वापस ग्वालियर लौटगया। दशहरे के बाद 24 सितम्बर को महादजी ने अपना अभियान पुनः प्रारम्भकिया। उसने धौलपुर के किले पर अधिकार करलिया जो कि मुहम्मद बेग हमदानी के कब्जे में था।[51] उसने देहात में अपने राजस्व अधिकारी नियुक्त करदिये। धौलपुर और बारा के जिलों में सिंधिया का वर्चस्व होगया।[52] दूसरी ओर, अफरासियाब खाँ सम्राट को साथ लेकर हमदानी के विरुद्ध अभियान पर दिल्ली से चलपड़ा। वह आगरा आपहुँचा। अब तक महादजी चम्बल पार करके धौलपुर में अपना अधिकार जमाचुका था। वह सिंधिया की सहायता से हमदानी को कुचलने के लिए तैयार था। इसी बीच मिर्जा नजफ खाँ की कुँवारी कन्या, जो मिर्जा मुहम्मद शफी की मंगेतर थी, से विवाह करने के विषयक अफरासियाब खाँ के प्रस्ताव ने मिर्जा परिवार को रोषपूर्ण बनादिया। यह

---

51. मिर्जा नजफ़ खाँ का एक सेनापति एवं संरक्षित।
52. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 167.

परिवार मिर्जा शफी की हत्या में अफरासियाब की भूमिका पर पहले ही सन्देह कररहा था कि इस बात ने उन्हें उत्तेजित करदिया। अतः मिर्जा शफी के भाई जैनुल आबिदीन ने उसकी हत्या का निश्चयकिया।

3 नवम्बर को पूर्वाह्न 11 बजे (लगभग) जैनुल आबिदीन ने षड्यंत्र पूर्वक उसकी हत्या करवादी और स्वयं घोड़े की नंगी पीठ पर चढ़कर महादजी के शिविर में इसकी सूचना देने के लिए जापहुँचा।[53] उसने महादजी को बताया कि किसी ने अफरासियाब के तम्बू में ही उसकी हत्या करदी और वह वहीं से सीधे भागकर सूचनार्थ महादजी के पास आया था कि कहीं बाद में उस पर ही हत्या का अभियोग न चलादियाजाता। महादजी ने तत्काल अफरासियाब के शिविर को घेरने का आदेश दिया ताकि कोई गड़बड़ न फैलायी जा सके। उसने सारे मामले की कमान अपने हाथ में लेली। मुहम्मद बेग हमदानी ने 10 नवम्बर, 1784 को महादजी के समक्ष पूर्ण आत्मसर्मपण करदिया। उसके शिविर से सारी दूसरी सम्पत्ति सहित उसकी सभी 46 तोपें मराठा शिविर में लायीगयीं। उसने निम्नलिखित शर्तें माननी स्वीकार कर लीं :

1. वह अपने समस्त हथियार और सैन्य उपकरण महादजी को सौंपदेगा।
2. वह अपने परिवार को उज्जैन भेजदेगा जो सिंधिया की राजधानी में रहेंगे ताकि उसकी विश्वसनीयता बनीरहे।

---

53. Ibid. p. 170.

3. वह भविष्य में सिंधिया की नौकरी में रहेगा। उसकी जागीरें जब्त करलीगयीं।

12 नवम्बर को सम्राट आगरा से चलकर खानवा[54] में अफरासियाब के शिविर में जापहुँचा। 14 नवम्बर को मुहर्रम की पहली तारीख के दिन सिंधिया सम्राट से मिलने पहुँचा। सम्राट के शिविर से उसका शिविर 5 कि0मी0 की दूरी पर था। रास्ते में शहजादे ने उसका स्वागत किया। सम्राट के निकट पहुँचते ही सिंधिया ने 101 सोने की मुहरें भेंट कीं और अपना शिर सम्राट के पैरों में झुका दिया।[55] सम्राट ने उसकी पीठ पर हाथ फेरा, उसे ऊपर उठाया और यथोचित सम्मान की प्रथा उपरान्त अपने सामने मसनद पर बैठाया और बातें कीं।

15 नवम्बर को सम्राट खानवा से चलकर मराठा शिविर में गया। उसने मराठा सेना की परेड का निरीक्षणकिया और फिर उसे सिंधिया और इंगले के तम्बुओं के मध्य विशेष निर्मित शिविर में ठहरायागया। 17 नवम्बर को सम्राट शाहआलम ने महादजी सिंधिया से अत्यावश्यक, किन्तु विलम्बित चलरही, गुप्त वार्ता की। सम्राट ने उससे कहा कि उसे उसके घराने और साम्राज्य को चलाने के लिए प्रतिशासक बनना चाहिए। इस पर सिंधिया ने प्रत्युत्तर दिया कि वह विना राजकीय दफ्तर के प्रशासन कैसे चला सकता था। तब सम्राट ने उसे मीरबख्शी बनाने का प्रस्ताव रखा और रीजेन्ट के पद पर जो उससे भी उच्चतर था, उसे नियुक्त करने का विचार प्रकटकिया। किन्तु सिंधिया ने उत्तर देने के लिए कुछ

---

54. Ibid. p. 176.
55. Ibid. p.176.

दिन का समय माँगा।[56]

राजनीतिक परिस्थितियाँ किसी भी प्रकार के कूट षड्यंत्रों को निमंत्रित करती–सी जान पड़ती थीं। कोई भी मनसबदार अथवा मुगल दरबारी सैन्य शक्ति के पैमाने पर खरा नहीं उतररहा था, जबकि शाही सैनिक अपने पूर्व सेवा के भुगतान पर कभी भी बिफर सकते थे। धन एवं रसद के मामले में अधिक दिन का विलम्ब विनाशकारी एवं आत्मघातक हो सकता था। ऐसे में 30 नवम्बर को जयपुर के राजा के विरुद्ध धन वसूली के लिए अभियान उचित जानपड़ा। वैसे भी राजा ने पूर्व निर्धारित धनराशि का न तो अभी तक भुगतान ही किया था और न ही उसकी कोई किश्त भिजवायी थी। अतः, 30 नवम्बर के दिन सम्राट को साथ लेकर सिंधिया ससैन्य सैयदपुरा से 16 कि0मी0 पश्चिम में चला और पिंगौरा जापहुँचा। यहाँ रुकी हुई अंग्रेज सेना इसी दिन 16 कि0मी0 और पश्चिम में चलीगई। पिंगौरा में ही 1 दिसम्बर, 1784 को सम्राट ने खुला दरबार का आयोजन किया और इसमें पेशवा को अपना **नायब–ए–मुनाहब** तथा **बख्शी–ए–ममालिक** (मुख्य सेनापति) बनाया[57] तथा यह शर्त साथ जोड़ी कि कोई दूसरा नहीं बल्कि केवल महादजी पेशवा ही उक्त जिम्मेदारी को स्थायी रूप से वहनकरेगा। उसने पेशवा के लिए परम्परागत पोशाक और दूसरे मूल्यवान उपहार पूना भेजने के लिए महादजी के हवालेकिये। इनके साथ ही पेशवा के रीजेन्ट नाना फड़नवीस

---

56. Ibid.
57. D. B. Parasnis (ed.) : **Dilli-yethil Marathyanchin Raj-Karanen** , Vol. I, p. 133 & 106

को भी उपहार भिजवायेगये। शिविर तीसरे दिन पुनः 16 कि0मी0 पश्चिम में स्थित हेलना नामक स्थान पर लगाया गया।

यहाँ सम्राट ने दूसरे दिन फिर एक दरबार लगाया जिसमें शाहआलम ने महादजी को साम्राज्य में सृजनीय सर्वोच्च पद–**वकील–ए–मुतलक** पर नियुक्त करदिया।[58] यह पद पेशवा के सन्दर्भ के विना ही सीधे महादजी को दियागया था।[59] यह पद इतना दुर्लभ्य था कि अबसे पहले केवल तीन सम्राटों के काल में केवल तीन ही मनसबदारों को प्रदान कियागया था।[60]

मुगल साम्राज्य के उच्चतम संभव पद पर आसीन होकर महादजी सिंधिया का गौरव अतुलनीय रूप से बढ़गया। वह सम्राट का सर्वाधिक विश्वस्त अधिकारी बनगया था। यह उसकी सैन्य प्रतिष्ठा की सर्वोच्च स्थिति का खुला सूचक था। इस प्रकार 1784 के अन्तिम महीने में उत्तर भारत में महादजी के नेतृत्व में मराठों ने 1761 में पानीपत में खोई अपनी सैन्य सर्वोच्चता पुनः स्थापित करली।[61]

---

58. **Historical Papers relating to Mahadji Sindhia,** Vol. I , p. 9.
59. Ibid.
60. पूर्व में केवल अकबर , शाहजहाँ , तथा बहादुरशाह प्रथम ने इस पद पर केवल एक–एक बार एक–एक व्यक्ति को नियुक्तकिया था।
61. Jadunath Sarkar : op. cit. p. 179.
    G. S. Sardesai : op. cit. p. 151.
    D. B. Parasnis (ed.) : op. cit. p. 139.

अध्याय–7

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब में मराठा प्रशासन के स्मारक (1784–1800)

अध्याय–7

उपरी गंगा–यमुना दोआब में मराठा प्रशासन के स्मारक

(1784–1800)

गढ़मुक्तेश्वर

ऊपरी गंगा यमुना दोआब क्षेत्र के महत्वपूर्ण नगर गाजियाबाद जिले में गंगा नदी के दाहिने तट पर अवस्थित गढ़मुक्तेश्वर एक प्राचीन कस्बा है। इसकी भौगोलिक स्थिति– **अक्षांश 28^0 25′ उत्तर, देशान्तर 77^0 33′ पूर्व** है। गढ़मुक्तेश्वर कस्बे के दक्षिणी भाग में कस्बे से कुछ दूर हटकर मराठों ने एक किला निर्मित कराया था जिसे स्थानीय लोग **मराठा किला** के नाम से जानते हैं। यह 18वीं शताब्दी के अन्तिम चतुर्थांश में बनवायागया था। महादजी सिंधिया के नेतृत्व में मराठा शक्ति और उसकी सेनाएँ अजेय सिद्ध होरही थीं। सम्राट शाहआलम महादजी के पूर्ण प्रभाव में था। महादजी सिंधिया को मुगल सम्राट ने गंगा–यमुना दोआब का क्षेत्र सौंपरखा था। इस उपजाऊ इलाके में महादजी ने सफल योजना क्रियान्वित की, जिसके अन्तर्गत महत्वपूर्ण स्थानों, नगर केन्द्रों एवं बाजारवाले कस्बों तथा धार्मिक व राजनैतिक महत्ता प्राप्त स्थलों पर प्रभावपूर्ण प्रशासन स्थापितकियाजाना था। इस प्रकार स्थापित प्रशासन को कुशलतापूर्वक संचालितकरना मराठों का उददेश्य था। इस दृष्टि से गढमुक्तेश्वर ऊपरी दोआब का एक उपयोगी केन्द्र था। यहाँ इमारती लकड़ी का कारोबार बड़े व्यापक स्तर पर होता था। वर्षा ऋतु से पहले गढ़वाल के पहाड़ों में प्रतिवर्ष इमारती लकड़ी

अध्याय–7

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब में मराठा प्रशासन के स्मारक (1784–1800)

अध्याय–7

उपरी गंगा–यमुना दोआब में मराठा प्रशासन के स्मारक

(1784–1800)

गढ़मुक्तेश्वर

ऊपरी गंगा यमुना दोआब क्षेत्र के महत्वपूर्ण नगर गाजियाबाद जिले में गंगा नदी के दाहिने तट पर अवस्थित गढ़मुक्तेश्वर एक प्राचीन कस्बा है। इसकी भौगोलिक स्थिति– **अक्षांश 28^0 25′ उत्तर, देशान्तर 77^0 33′ पूर्व** है। गढ़मुक्तेश्वर कस्बे के दक्षिणी भाग में कस्बे से कुछ दूर हटकर मराठों ने एक किला निर्मित कराया था जिसे स्थानीय लोग **मराठा किला** के नाम से जानते हैं। यह 18वीं शताब्दी के अन्तिम चतुर्थांश में बनवायागया था। महादजी सिंधिया के नेतृत्व में मराठा शक्ति और उसकी सेनाएँ अजेय सिद्ध होरही थीं। सम्राट शाहआलम महादजी के पूर्ण प्रभाव में था। महादजी सिंधिया को मुगल सम्राट ने गंगा–यमुना दोआब का क्षेत्र सौंपरखा था। इस उपजाऊ इलाके में महादजी ने सफल योजना क्रियान्वित की, जिसके अन्तर्गत महत्वपूर्ण स्थानों, नगर केन्द्रों एवं बाजारवाले कस्बों तथा धार्मिक व राजनैतिक महत्ता प्राप्त स्थलों पर प्रभावपूर्ण प्रशासन स्थापितकियाजाना था। इस प्रकार स्थापित प्रशासन को कुशलतापूर्वक संचालितकरना मराठों का उददेश्य था। इस दृष्टि से गढमुक्तेश्वर ऊपरी दोआब का एक उपयोगी केन्द्र था। यहाँ इमारती लकड़ी का कारोबार बड़े व्यापक स्तर पर होता था। वर्षा ऋतु से पहले गढ़वाल के पहाड़ों में प्रतिवर्ष इमारती लकड़ी

का कटान होता था और लकड़ी के उपयोगी आकार के लट्ठों (वृक्षो के तनों) को नदी के किनारे इकट्ठा कियाजाता था। इन्हें नदी में डाल दियाजाता था। यातायात पर धन खर्च किए विना ही ये लट्ठे गंगा की धार में बहते हुए स्वयमेव गढ़मुक्तेश्वर पहुँचजाते थे। यहाँ इन्हें योजनाबद्ध तरीके से बाहर निकाललिया जाता था।[1] इन्हें गढ़ की इमारती लकड़ी की मण्डी में विक्रय हेतु एकत्र किया जाता था। उन दिनों गढ़मुक्तेश्वर की यह मण्डी दूर–दूर तक इमारती लकड़ी की आपूर्ति का सुगम, सरल और सस्ता केन्द्र थी।[2] दिल्ली आदि नगर केन्द्रों तथा हरियाणा व राजस्थान तक के इलाकों में गढ़ मण्डी से लकड़ी का सामान जाया करता था। बड़े स्तर पर यहाँ लकड़ी के काम सम्बन्धी कुटीर उद्योग विकसित थे। प्रतिवर्ष कार्तिक पूर्णिमा पर लगनेवाला गंगास्नान का मेला गढ़मुक्तेश्वर के व्यापार के पर्याप्त अनुकूल था। इसमें उस समय भी लाखों लोग आते थे [3] जो लकड़ी का गृह उपयोगी सामान खरीद कर लेजाते थे। अतः उस काल में आर्थिक दृष्टिकोण से गढ़मुक्तेश्वर एक आकर्षक केन्द्र बनाहुआ था।

---

1. **साक्षात्कार** दिनाँक 10–12–2001, चौधरी विक्रम सिंह त्यागी पुत्र स्व0 चौ0 सोनाथ सिंह, पौत्र चौ0 कदम सिंह,आयु 84 वर्ष, ग्राम तिगरी तीर्थ, जिला–जे0पी0नगर(अमरोहा)।

   साक्षात्कार, दिनॉक 25–5–2000 श्रीमती चन्द्रमुखी त्यागी पत्नी स्व0 वेद प्रकाश गाँधी जी, आयु 80 वर्ष,व्रजघाट,जिला–गाजियाबाद एवं श्री चन्द्र प्रकाश त्यागी पुत्र स्व0 वेद प्रकाश' गाँधी जी',आयु 58 वर्ष, गढ चौपला, गाजियाबाद।
2. **साक्षात्कार**, दिनाँक 25–5–2000 श्री राजेन्द्र सिंह त्यागी पुत्र स्व0 चौ0 राम चन्द्र सिंह त्यागी, पौत्र चौ0 झण्डू सिंह, आयु 60 वर्ष, मूल निवासी ग्राम तिगरी तीर्थ, जिला–जे0पी0 नगर(अमरोहा), हाल निवासी श्रद्धापुरी, कंकरखेडा, मेरठ।
3. Edwin T. Atkinson: **Statistical, Descriptive and Historical Account Provinces of India,** Vol. III, Meerut Division, Part II, Govt. Press, Allahabad, 1876, p.374.

एक अन्य दृष्टि से भी मराठों के लिए गढ़मुक्तेश्वर आकर्षणपूर्ण था। मराठों की **हिन्दू पद पादशाही** की परिकल्पना इसे महत्वपूर्ण बनाती थी। इसका कारण था गढ़मुक्तेश्वर का धार्मिक महत्व। हिन्दुओं की धार्मिक मान्यताओं के अनुसार पूर्व काल में गणों की मुक्ति होने के कारण इस स्थान का नाम **गणमुक्तीश्वर** प्रसिद्धहुआ था जो कालान्तर में बिगड़ कर **गढ़मुक्तेश्वर** होगया।

गंगा के तट पर बसे होना इसे महत्वपूर्ण बनाता था और निकटवर्ती क्षेत्र पर यहाँ से प्रशासन चलाना सहज था क्योंकि यहाँ पहुँचने के लिए सरल और चौड़े रास्ते विद्यमान थे। इन सभी और ऐसी अन्य विशेषताओं के महत्व को भली–भाँति समझकर महादजी सिंधिया ने गढ़मुक्तेश्वर को ही निकटवर्ती क्षेत्र का प्रशासनिक केन्द्र बनायाहोगा।

शोधार्थी का मत है कि ऐसा करके उनकी धार्मिक, आर्थिक, प्रशासनिक एवं सैन्य आकांक्षाओं की तृप्ति हुईहोगी और उक्त सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हुई होगी। राजनीतिक दृष्टिकोण से यह निर्णय अत्यन्त लाभप्रद था। भौगोलिक दृष्टि से गढ़मुक्तेश्वर का विशिष्ट सैनिक महत्व था। उल्लेखनीय है कि गंगा के उस पार रुहेले पठानों पर इस किले से दबाव बनाया जा सकता था जबकि दूसरी ओर यह दिल्ली की सामरिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक था।

मराठा किला

परकोटा

एक प्राचीन किले[4] के ध्वंसावशेषों पर मराठा अफसर मीर भावन द्वारा पुनर्निर्मित गढ़मुक्तेश्वर के मराठा किले का परिसर यद्यपि अधिक विस्तीर्ण नहीं था[5] तथापि मध्यम आकार का यह एक सृदृढ़ किला था। इसकी किलेबन्दी इसकी चारदीवारी तथा इसकी बाह्य रक्षा दीवारें बड़ी मजबूती से बनाईगयी थीं और इसकी दीवारों की चौड़ाई भी पर्याप्त रखीगई थी। उस समय गंगा की धारा तथा किले के मुख्य द्वार के बीच गंगा की रेती का विस्तृत मैदान हुआकरता था। उस काल में किसी भी बाह्य व्यक्ति को इस मैदान पर आने–जाने की मनाही थी। ऐसा आदेश इसलिए था क्योंकि गंगा की धारा के उस पार जो क्षेत्र था उसमें मराठा विरोधी शक्तियों के गुप्तचर आसानी से विचरण कर सकते थे। वह क्षेत्र दोआब की सूबेदारी में नहीं आता था। फलतः वहाँ मराठों का प्रत्यक्ष नियन्त्रण न था। इस किले का परकोटा सुरक्षात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति करता था। वास्तव में यह एक आयताकार दुर्ग था। गंगा की धारा के समानान्तर जो दीवार थी उसमें पूर्वाभिमुख किले का सिंह–द्वार था। इस दीवार के पश्चात् जो अन्य तीन प्राचीरें थीं उनसे मिलकर परकोटे की रचना होती थी। उनमें आने–जाने के मार्ग न थे।

---

4. op. cit., Ibid., p. 374 .
5. H.R. Nevill : **District Gazetteers of the United Provinces of Agra and Oudh**, Vol. II, Muzaffarnagar, Govt. Press, Allahabad, 1903, p. 226 .

ऐसा सम्भवतः इसलिए भी रहाहोगा क्योंकि मुख्य द्वार से किले में प्रवेश करने पर उसके फर्श की ऊँचाई क्रमशः बढ़जाती थी। ऐसा होना स्वाभाविक था क्योंकि प्राचीन किले को योजना पूर्वक प्राकृतिक रूप से ऊँचे टीले, जिसे स्थानीय भाषा में **गंगा का खोला** कहा जाता है, पर बनायागया था। मुख्य द्वार से किले के अन्दर प्रवेश करते ही एक विस्तृत चौड़ा एवं समतल भाग था। सम्भवत सेना को सुसज्जित करने में इस समतल मैदान का उपयोग कियाजाताहोगा। इस भाग में कई कुओं के अवशेष मिलते हैं। इनमें सबसे बड़ा कुआ आज भी स्पष्ट दिखायीदेता है। यह कुआ शिवमन्दिर और नष्ट हो चुके सिंह–द्वार (मुख्य द्वार) के मध्य स्थित था।

शिव मन्दिर

ऊपर उल्लिखित विस्तृत समतल मैदान को पार करके आगे बढ़ने पर एक अष्ट कोणीय देवस्थान आज भी विद्यमान है।(**चित्र 6**) यह मन्दिर जर्जरावस्था में है। वस्तुतः यह तत्कालीन शिवमन्दिर है, जो एक उन्नत चबूतरे पर खड़ा है। इसका आधार अष्टकोणीय है। प्रत्येक अष्टकोणीय आधार भुजा के ऊपर ऊँचे मेहराब की आकृति है, जो और ऊपर चलकर गुम्बद का आधार बनाती है। गुम्बद की बनावट ठोस है। इसके उच्चतम भाग में धातु का एक सरिया निकला हुआ है जो इस बात का साक्ष्य है कि गुम्बद के ऊपरी भाग में एक ऊँची चोटी रहीहोगी, जो ईंट और चूने से बनीहोगी। कालान्तर में चोटी में प्रयुक्त ईंट और चूना उखड़ कर गिरगया और केवल सरिया खड़ा रहगया। मन्दिर के आधार भाग

में स्थित चबूतरे पर चारों और परिक्रमा स्थल बनेहोने का प्रमाण मिलता है। इसे प्रायः पूर्व और दक्षिण दिशाओं में देखा जा सकता है, जबकि शेष हिस्सा क्षति ग्रस्त कर दियागया है। दरअसल लम्बे समय से स्थानीय लोग इस किले से ईंटें उखाड़ कर लेजातेरहे हैं।[6] यही कारण है कि किले की मजबूत प्राचीरें, निर्मितियाँ एवं अन्य कई भवन अब से कुछ समय पहले लगभग पूरी तरह उखाड़लिएगये और इस प्रकार प्राप्त ईंटों से स्थानीय लोगों ने अपने मकान आदि बनालिये।[7]

इस मन्दिर में इस समय शिवलिंग अथवा कोई मूर्ति विद्यमान नहीं है। कहते हैं कि महादजी सिंधिया ने भारी मात्रा में इसके गर्भ–गृह में सोना, चाँदी गड़वाया था।[8] कालान्तर में जब 30 दिसम्बर, 1803 को स्वर्गीय महादजी सिंधिया के दत्तक पुत्र दौलतराव सिंधिया और ईस्ट इण्डिया कम्पनी के बीच **सुरजीअन्जन गाँव की सन्धि** हुई तो यह इलाका अंग्रेजों के अधिकार में चलागया। अतः यहाँ से मराठों का सम्बन्ध न रहा। कहते हैं कि यहाँ गड़ेहुए गुप्त धन की जानकारी रखनेवाले मराठा अधिकारी युद्ध में मारेगये और यह कथित धन यहीं गड़ा रह गया। किन्तु जिन राजमिस्त्रियों ने इसे बनाया था उनसे पीढ़ी–दर–पीढ़ी यह बात कुछ दूसरे लोगों को ज्ञात रही और विगत में किसी समय किन्हीं अज्ञात लोगों ने

---

6. साक्षात्कार 19–5–2004, श्री सन्तोष कौशिक, मुख्य पुजारी, गंगा मन्दिर गढ़मुक्तेश्वर।
7. साक्षात्कार 19–5–2004, चौधरी श्योराज सिंह 'प्रधान जी' , आयु 76 वर्ष, मूल निवासी खिलवाई, हाल निवासी मण्डी गढ़मुक्तेश्वर, जिला गाजियाबाद एवं श्री अनिल कुमार त्यागी, निवासी मण्डी गढ़मुक्तेश्वर, जिला गाजियाबाद ।
8. साक्षात्कार, श्री सन्तोष कौशिक, पूर्वोक्त ।

गुप्त धन को पाने का प्रयास किया।[9] कहते हैं कि यह उस समय सुनसान और वीरान पड़ा था और किले के खण्डहरों में प्रेतात्माओं का निवास मानाजाता था।[10] अतः, कभी कोई विरला ही यहाँ घुसने की हिम्मत करपाता था। लोगों की पहुँच से दूर होना उक्त अज्ञात धन लोलुपों के लिए अनुकूल बात रहीहोगी। कभी बरसात के दिनों में, जब इस इलाके में चप्पे–चप्पे पर घनघोर वनस्पति उग आती है, उन्होंने शिवलिंग खोदकर उखाड़दिया तथा शिवलिंग के नीचे गहरी खुदाई की। कहते हैं इस प्रकार यहाँ का संचित धन निकाललियागया।[11] इस किले में अन्य स्थानों पर भी धन गड़ाहोने और उसे खोदकर निकालने के प्रयास में कुछ लोगों की मृत्यु सम्बन्धी किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। तार्किक रूप से इनकी पूर्णतया सत्यता और असत्यता दोनों ही सन्देहातीत नहीं हैं। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की राजनीतिक उथल–पुथल के युग में जो दशाएँ विद्यमान थीं उनमें उपर्युक्त मान्यताओं को निश्चय ही सुरक्षित स्थानप्राप्त है।

मराठा किले का गंगा मन्दिर

शिवाजी के समय से ही हिन्दुओं का साम्राज्य स्थापित करना मराठों का मूल उद्देश्य मानलियागया था। हिन्दवी राज्य की परिकल्पना पर्याप्त रूप से स्पष्ट होकर सामने आचुकी थी और परवर्ती काल में प्रारम्भिक पेशवाओं ने बड़ी

---

9. **साक्षात्कार** 19–5–2004, श्री चन्द्र प्रकाश त्यागी एवं श्री सन्तोष कौशिक, पूर्वोक्त ।
10. वही ।
11. वही ।

तेजी के साथ इसे क्रियान्वितकरने का प्रयासकिया। शिवाजी के वंशज छत्रपति शाहू के समक्ष पेशवा बाजीराव द्वारा 1720 में की गई घोषणा इस उद्‌देश्य के प्रति मराठों की प्रतिबद्धता को इंगितकरती है। मराठों ने अपने नियन्त्रण–क्षेत्रों में धार्मिक स्थलों का जीर्णोद्धार कराना अपना कर्त्तव्य समझा। वस्तुतः मध्यकाल में विभिन्न सुल्तानों और मुगलकाल में विशेष रूप से औरंगजेब ने हिन्दुओं तथा उनके धार्मिक स्थलों को अत्यधिक क्षति पहुँचायी थी[12] और उनमें स्थापित देव–प्रतिमाओं को नष्ट–भ्रष्ट करवाया था।[13] अतः जब मराठे शक्तिशाली हो उठे तो उन्होंने नष्ट–भ्रष्ट कियेगये मन्दिरों और धार्मिक स्थलों को यथा–आवश्यक रूप से पुनः निर्मितकराया। ऐसा करके वे हिन्दुओं के धार्मिक स्थलों की पवित्रता को पुनः स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने न केवल पुराने खण्डित तीर्थस्थलों आदि का जीर्णोद्धार कराया, वरन् नये मठ मन्दिरों को अनुदान भी दिये और इनका नव–निर्माण भी कराया। उन्होंने अपने किलों में अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप देवालयों का निर्माण कराया। इसी कड़ी में गढ़मुक्तेश्वर में जब उन्होंने किले का निर्माण कराया तब उसमें भी **शिव मन्दिर** और **गंगा मन्दिर** बनवायेगये।[14] उपर्युक्त शिव मन्दिर किले के निचले भाग में बना है। किले में सबसे भीतर जाने पर, सर्वोच्च स्थान पर गंगा–मन्दिर विद्यमान है। इस मन्दिर के फर्श से उस काल में गंगाजी

---

12. S.R. Sharma : **The Religious Policy of Mughal Emperors**, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd ., New Delhi , Third Edition 1988, pp. 107--177 .
13. Ibid.
14. साक्षात्कार , श्री चन्द्र प्रकाश त्यागी , पूर्वोक्त।

का दर्शन अनायास ही होजाता था। उस समय गंगा जी गढ़मुक्तेश्वर से सट कर ही बहती थी। मन्दिर का प्रवेश–द्वार पूर्वाभिमुख है। यह किले के पूर्वी–दक्षिणी भाग में स्थित है। बाहरी ओर किन्तु निकट ही उस समय का कुआ आज भी विद्यमान है। मन्दिर के अन्दर जाने के लिए पर्याप्त ऊँचाईवाला मेहराबदार दरवाजा भी अभी विद्यमान है।(**चित्र 7**) यद्यपि इसकी पार्श्व दीवारें टूटी–फूटी अवस्था में हैं तथा प्रवेश द्वार के बिल्कुल सामने मेहराबदार **तिदरा** अभी भी खड़ा है, जिसका अगला भाग पत्थर के कलात्मक स्तम्भों पर टिका है।(**चित्र 8**) इसके दोनों ओर क्रमशः कोठरियाँ हैं जो अभी भी भग्न रूप में खड़ी हैं। इस **तिदरे** के बिल्कुल मध्य में किन्तु उससे पीछे एक देवकक्ष है जिसमें एक सिंहासन पीठिका के अवशेष दिखायीदेते हैं जिस पर गंगा जी की मूर्ति स्थापित थी। यह सिंहासन जालीदार बतायाजाता है जिसका निर्माण लकड़ी या पत्थर से हुआ था। यद्यपि अब न तो मूर्ति है और न ही सिंहासन है, किन्तु सिंहासन–पीठिका का आधार आज भी स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। मूर्ति खड़ी मुद्रा में थी। आज भी इस स्थान पर कलात्मक चित्रकारी युक्त रंगीन किनारी सहज ही देखी जा सकती है, जिससे कोई भी आसानी से अनुमान लगा सकता है कि यहाँ पर गंगा की मूर्ति खड़ी अवस्था में प्रतिष्ठित रहीहोगी। गर्भगृह में मुख्य मूर्ति के अतिरिक्त अन्य देव प्रतिमाएँ भी रही होंगी। किन्तु यह ज्ञात नहीं हो सका कि इस मन्दिर में अन्य किन–किन देवी–देवताओं के विग्रह पूजेजाते थे।



चित्र ४
मराठा किला स्थित गंगा मन्दिर (आन्तरिक दृश्य) गढ़मुक्तेश्वर

परिक्रमा

गर्भगृह के शेष तीनों ओर गंगा जी के विग्रह की परिक्रमा भी बनी है। इसकी चौड़ाई अधिक नहीं है। यह इतनी संकीर्ण है कि एक बार में एक ही व्यक्ति इसमें से होकर निकल सकता है।

पार्श्व कोठरियाँ

गर्भगृह और मन्दिर की पिछली दीवार के बीच परिक्रमा आज भी विद्यमान है और गर्भगृह के अगल–बगल दोनों ओर कई–कई आलिंदोंवाली आयताकार कोठरियाँ बनीहुई हैं। इन्हीं कोठरियों में से होकर प्रवेश करके पुनः एक–एक वर्गाकार कोठरियाँ सटकर बनीहुई हैं। क्रमशः बादवाली कोठरियों से सट कर पिछले दोनों कोनों पर बुर्ज बने हैं। ये बुर्ज भी अष्टकोणीय हैं।

गर्भगृह के सम्मुख प्रस्तर स्तम्भों से जो तीन द्वारोंवाली तिदरी भवनाकृति है, वास्तव में वह मन्दिर का **जगमोहन** है। जगमोहन के दोनों ओर एक–एक कक्ष बने हैं तथा दक्षिणी चारदिवारी के साथ ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हैं।

सम्भवतः सीढ़ियोंवाला कक्ष मन्दिर की प्रायोगिक वस्तुओं का संग्रह–कक्ष रहाहोगा। दूसरी ओरवाला कक्ष पूजा आदि के पात्रों और प्रसाद सामग्री आदि रखने के काम आताहोगा। ऐसा लगता है कि धार्मिक महत्व के ग्रन्थ गर्भगृह के निकट स्थित पार्श्ववाले कक्षों में रखेजातेहोंगे।

कुआ

मन्दिर की पूजा के लिए और विग्रह स्थान के लिए कुए के जल का प्रयोग नहीं कियाजाता था बल्कि इस कार्य के लिए नित्य प्रति गंगाजल का प्रयोग कियाजाता था।[15] कुए का जल मन्दिर के प्रांगण धोने आदि के काम में लियाजाताहोगा।[16] यह कुआ गंगामन्दिर के अन्दरवाला था। एक अन्य कुआ गंगा मन्दिर के प्रवेशद्वार के सामने दाहिनी ओर लगभग 6 मीटर की दूरी पर था। यह आज भी अच्छी हालत में दिखायीपड़ता है। इसका जल भण्डारे आदि के अवसरों पर काम में आता था। साथ ही मन्दिर की पुष्पवाटिका में इसी का जल इस्तेमाल होता था। देवालय में प्रवेश करने से पूर्व हाथ–मुँह धोने के लिए भी इसी कुए का जल काम में लायाजाताहोगा।

बुर्जियाँ

मराठा किले के परकोटे पर क्रमशः 8 बुर्जियाँ विद्यमान थीं। वस्तुतः ये सुरक्षा चौकियाँ थीं। आक्रमण आदि के समय यहाँ से शत्रु पर निगाह रखी जा सकती थी और उसे कारगर क्षति पहुँचाई जा सकती थी। ये पर्याप्त ऊँचाईवाली थीं और इन पर आठों पहर प्रहरी सावधान होकर पहरा देते थे।

प्राचीन गंगामन्दिर

पौराणिक काल से ही गढ़मुक्तेश्वर का धार्मिक महत्व सर्वविदित

---

15. **साक्षात्कार** , श्री सन्तोष कौशिक , पूर्वोक्त ।
16. वही ।

है। यहाँ के विषय में हिन्दुओं की मान्यताएँ धार्मिक रूप से बड़ी प्रबल हैं। स्कन्द पुराण में गढ़मुक्तेश्वर के महत्व को बड़ी महिमा के साथ उजागर कियागया है। इसकी महिमा के सम्बन्ध में यह विख्यात है कि इस क्षेत्र के दर्शन मात्र से ही मनुष्य मुक्ति का अधिकारी हो जाता है।[17] इसी पुराण में एक श्लोक में यहाँ गंगा की देव मूर्ति स्थित होने का उल्लेख भी है। हिन्दु समाज प्राचीन काल से ही इस तीर्थ के धार्मिक महत्व को बड़ी श्रद्धा से मानता आरहा है। इसी श्रद्धा स्वरूप गढ़मुक्तेश्वर में प्रतिवर्ष कार्तिक मास की पूर्णिमा के दिन गंगास्नान का मेला लगता है। इसमें विगत हजारों वर्षों से भारी संख्या में तीर्थ यात्री सपरिवार आते रहे हैं। वस्तुतः पुरातन काल से यह कस्बा पुराने टीले पर बसा है और इसी टीले पर गंगा की ओर अभिमुख प्राचीन गंगामन्दिर स्थित है।(**चित्र 9**) मराठों ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था और उसे पर्याप्त अनुदान दिया था। इसका वर्तमान ढांचा मराठा काल में ही बनवायागया था।

मुक्तेश्वर महादेव

यहाँ **मुक्तेश्वर महादेव** नामक अति प्राचीन शिवलिंग है जिसके नाम पर ही इस कस्बे का नाम **गढ़मुक्तेश्वर** पड़ा।[18](**चित्र 10**)।

स्कन्द पुराण में भीष्म–युधिष्ठिर संवाद के अध्यायों में गढ़मुक्तेश्वर

---

17. **स्कन्दपुराण** , भीम–युधिष्ठिर संवाद , अध्याय 3, श्लोक सं0 6 ।
18. Edwin T. Atkinson : op. cit., p. 374 .

का महिमा–मण्डित वर्णन मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि गणों की मुक्ति देने वाले शिवलिंग के नाम पर इसका नाम **गणमुक्तीश्वर** प्रसिद्ध हुआ जिसका अपभ्रंश होकर **गढ़मुक्तेश्वर** नाम आजकल लोकप्रिय है। उपर्युक्त संवाद के अनुसार पाण्डु के पुत्र युधिष्ठिर ने पितामह भीष्म से प्रश्न किया था कि हे बुद्धिसागर पितामह गणमुक्तीश अर्थात् गणमुक्तेश्वर नाम से भागीरथी गंगा के तट पर जो परम पावन तीर्थ है, उसके महात्म्य को परम कृपा करके वर्णन करिये, मेरी सुनने की इच्छा है।[19] क्या इस तीर्थ का फल ह ? क्या स्नान–ध्यान की विधि है और किस–किस वस्तु को ग्रहण करें तथा कौन–कौन से कार्यों का त्याग करें ?[20] भीष्म पितामह बोले कि[21] हे कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर एक समय गंगाजी के निकट एकान्त स्थान पर स्थित होकर देव ऋषि नारद ने पाप के नाश करनेवाले इस तीर्थ का महात्म्य मुझे सुनाया था, इसी को मैं तुमसे वर्णन करता हूँ , उसे सावधान होकर सुनो[22]....

एक बार महादेव से पार्वती बोलीं कि हे परमेश्वर जो अत्यन्त दुष्प्राप्य आपका स्वरूप है इसको ये गण किस प्रकार प्राप्त हुए ? मेरे इस सन्देह को आप कृपा कर दूर कीजिए।[23] इसका उत्तर देते हुए शिवजी ने कहा :

कैलाश पर्वत के समीप स्थित होकर आसन बाँधे एवं जटाओं के

---

19. **स्कन्दपुराण** , भीष्म–युधिष्ठिर संवाद , अध्याय 1, श्लोक सं0 1 ।
20. वही , 1–2 ।
21. वही , 1–3 ।
22. वही , 1–4 ।
23. वही , 1–24 ।

भार से मुँह ढके हुए दुर्वासा ऋषि को उन गणों ने देखा[24] **तो यह वही रीछ है**[25] ---- कोई गण ऐसा कहने लगा। कोई उन्हें **बूढ़ा बन्दर**[26] बतानेलगा। किसी गण ने उन्हें **उल्लू**[27] कहा। जैसे हाथी आकर सोते हुए सिंह का तिरस्कार कर जाते हैं उसी प्रकार से गण उसके नाक, कान आदि अंगों पर जूठन फेंकने लगे।[28] गणों के उपद्रव पर दुर्वासा मुनि की समाधि भंग होगयी और उन्होंने नेत्र खोलकर देखा तो अपने अंग पर जूठनलगी देखी।[29] वे क्रोध में भरकर उठ खड़े हुए[30] और उन्हें श्राप देते हुए बोले कि हे नीच गणों ! "तुम पिशाचता को शीघ्र प्राप्त होगे।" [31]श्राप को सुनकर गणों के शरीर काँपने लगे[32] और वे बोले हे भगवन! हम से अनजाने में आपके प्रति अपराध हुआ है। हम पर कृपा कीजिये और ये बतायें कि इस श्राप का अन्त कब तक होगा।[33]

मुनियों में श्रेष्ठ दयालु महात्मा दुर्वासा गणों के वचन सुनकर विचार कर कहनेलगे कि[34] हे गणों, तुम पिशाच योनि का आश्रय करतेहुए फिर उस योनि में घूमते--घूमते पीछे से पूर्व और दक्षिण प्रान्त के मध्य भाग में जाओगे।[35] उत्तर के

---

24. वही , 1--32 ।
25. वही , 1--33 ।
26. वही ।
27. वही ।
28. वही, , 1--34 ।
29. वही , 1--35 ।
30. वही , 1--36 ।
31. वही ।
32. वही , 1--37 ।
33. वही . 1 --38 ।
34. वही , 1--39 ।
35. वही, , 1--40 ।

मुखवाले आर्यावर्त देश में हस्तिनापुर के पूर्व में शिवजी का शिववल्लभ नामवाला स्थान है[36] जो गव्यूति मात्र अर्थात् कोस के घेरे में देव, ऋषि और पितरों को सन्तोष देनेवाला काशी से भी अधिक महिमावान तथा क्षेत्रों में उत्तम है वही पूर्व कथित (शिववल्लभ) क्षेत्र है।[37] जब तुम उसमें प्रवेश करोगे तभी तुम्हारे श्राप का अन्त होगा।[38]

इस प्रकार, इन गणों को वरदान देकर वह मुनि पवित्र चित्त से[39] चुपचाप एकान्त में फिर समाधि लगाकर स्थितहुए। पुनः यह गण बहुत तीर्थ क्षेत्रों में भ्रमण करते–करते इस क्षेत्र में आये।[40] यहाँ आकर शिव मन्दिर के शिखर के दर्शन करते ही शाप से मुक्त होगये । हे परमेश्वरी पार्वती! बाद में इन गणों ने गंगा में स्नान किया और मुक्तीश्वर का पूजन किया।[41]

फिर इन गणों ने मुक्ति क्षेत्र (गणमुक्तीश्वर) में निवासकिया तथा इन्द्रियों को वशीभूत कर दृढ़ चित्त से तपस्या करने लगे।[42]..... मन्दिर में गंगा के तट पर जो परमा देवी स्थित है और चैतन्य मूर्ति शक्ति है उसी ने इन गणों को मेरे समान रूप दिया है। इस प्रकार से गण पिशाच योनि को भोग कर फिर देव

---

36. वही , 1–41 ।
37. वही , 1–42 ।
38. वही , 1–43।
39. वही , 1–43।
40. वही , 1–44।
41. वही , 1–45।
42. वही , 1–46।

भाव को प्राप्त हुए।[43] शरद ऋतु के कार्तिक मास की नवमी के दिन सबने वहाँ परिक्रमा की। पुनः मुक्ति की दाता मेरी मूर्ति को प्रणाम कर अब इस समय मेरे पास आये हैं।[44] गणमुक्तेश्वर नाम संसार रूपी समुद्र पारकरने में मल्लाह के समान है[45] तथा कृपा करनेवाला है।[46] मेरी यह मूर्ति..........कल्प के आदि से है,[47] कलाओं से अतीत है,[48] कलाओं में स्थित है[49] और कलाधार है।[50] अमृत रूपी गंगा–जल में जो स्नान करके इस देवेश को नमस्कार करते है[51] और इसकी पूजा आदि विधि को जानते और करते हैं,[52] वे मेरे समान हो जाते हैं।[53] गढ़मुक्तेश्वर में मेरे लिंग (शिवलिंग) के सामने बहताहुआ गंगा जल सभी प्रकार के पापों का नाश करनेवाला है, गंगा की धारा गढ़मुक्तेश्वर में **शिव–गंगा** कहलाती है।[54]......काशी में तो मरने पर मुक्ति मिलती है[55] तथा प्रयाग में माघ के महीने में स्नान करने से मुक्ति मिलती है[56] किन्तु गढ़मुक्तेश्वर में तो गंगादर्शन से ही मुक्ति मिलजाती है[57] क्योंकि इस क्षेत्र में सदैव मुक्ति स्थित है।[58] अतः, मेरी तपस्या के प्रसाद से यह

---

43. वही , 1–51।
44. वही , 1–52।
45. वही , 1–53।
46. वही , 1–54।
47. वही , 1–55।
48. वही।
49. वही।
50. वही।
51. वही।
52. वही , 1–55।
53. वही।
54. वही , 1–60।
55. वही , 1–61।
56. वही , 1–62।
57. वही , 1–61।
58. वही , 1–62।

गढ़मुक्तेश्वर क्षेत्र सबसे उत्तम है।[59]

मुगल सम्राट औरंगजेब ने अपने शासनकाल में हिन्दुओं के प्रति दमनकारी नीति अपनायी।[60] उसके अधीनस्थ अधिकारियों ने उससे प्रेरित होकर बलपूर्वक हिन्दुओं को मुसलमान बनाना जारीरखा।[61] इतना हीं नही, बल्कि धार्मिक रूप से हिंदू जनता को अपमानित और प्रताड़ित कियाजातारहा था।[62] यह औरंगजेब की सनक ही कही जायेगी कि उसने हिन्दुओं के अनेक मन्दिरों व धर्मस्थलों को तुड़वाया।[63] मुक्तेश्वर महादेव का मन्दिर भी उसके अत्याचारों का साक्षी रहा है। 1679 ई0 में कार्तिक महीने में गंगास्नान का मेला लगाहुआ था। भारी संख्या में हिन्दू जनता सपरिवार वहाँ डेरा डालेहुए थी कि अचानक मुगलों के फौजी दस्तों ने हमला करदिया। कहते हैं कि अनेक व्यक्तियों को मारडालागया और भारी संख्या में जबरदस्ती मुसलमान बनायागया। तत्पश्चात् मुक्तेश्वर महादेव

---

59. वही , 1–62।
60. S. R. Sharma : op. cit .
61. Ibid .
62. S.R. Sharma: **The Crescent in India**, p.463 (The Benares Firman of Aurangzeb, addressed to Abdul Hasan, dated 28 February 1659 reads: "It has been decided according to our Canon Law that long-standing temples should not be demolished, but no new temple allowed to be built …….)
63. S. R. Sharma : op. cit. See the general order issued in April 1669; " On the 17th Zil kada 1079,it reached the ear of His Majesty, the Protector of the Faith, that in the provinces of Thatta, Multan and Benares, but especially in the latter, foolish Brahmans were in the habit of expounding frivolous books in their schools, and that students and learners, Musulmans as well as Hindus went there, even from long distances, led by a desire to become acquainted with the wicked sciences they taught. The Directors of the Faith consequently issued orders to all the governors of provinces to destroy with a willing hand the schools and temples of the infidels, and they were strictly enjoined to put an entire stop to the teaching and practising of idolatrous forms of worship." Order issued on all faujdars of thanahs, civil officers (Mutsaddis), agents of jagirdars, kroris and amils : " Every idolhouse built during the last 10 or 12 years, whether with brick or clay, should be demolished without delay. Also, do not allow the cursed Hindus and despicable infidels to repair their old temples. Report of the destruction of temples should be sent to the court under the seal of the Quazis and attested by pious Sheikhs."

मंदिर को मुगल फौज ने तोड़कर गिरादिया। मन्दिर की रक्षा करते हुए अनेक श्रद्धालु शहीद होगए। औरंगजेब के सेनाधिकारियों ने ध्वंस मन्दिर के मलबे से मुक्तेश्वर महादेव के स्थान पर ही एक मकबरा बनादिया। इस प्रकार भगवान मुक्तेश्वर का पवित्र देवालय एक मकबरे में परिवर्तित करदियागया। इतने से भी उन्हें सन्तोष न हुआ और उन्होंने हिन्दुओं की धार्मिक खिल्लीउड़ाने के लिएठीक मुक्तेश्वर महादेव के पिण्डी के स्थान पर एक नकली कब्र बनवा दी और इसे **खुनखुनशाह का मकबरा** नामदिया। वास्तव में खुनखुनशाह नाम का कोई प्राणी वहाँ नहीं था। यह तो धार्मिक उपहास के उददेश्य से नकारात्मक त्वरित बुद्धि द्वारा कियागया झूठा नामकरण था।

यह ढांचा अगले सौ वर्ष तक यथावत् खड़ा रहा। प्रतिवर्ष आनेवाले तीर्थयात्री मनमसोस कर रहजाते थे और इस अपमान के चिह्न को देखकर अपनी हताश स्थिति में आत्मग्लानि से भरजाते थे।

इस घटना के लगभग 100 वर्ष बाद गढ़मुक्तेश्वर मराठों के अधिकार क्षेत्र में आया। यह काल महादजी सिंधिया का काल था। जब मराठों ने गढ़मुक्तेश्वर में शासन सूत्र संभाला था तो स्थानीय जनता ने उनसे मुक्तेश्वर महादेव मंदिर को औरंगजेब द्वारा भ्रष्ट किएजाने की बात कहसुनायी। मेले में जब दूर–दूर के प्रमुख इज्जतदार लोग इकट्ठे हुए तो उन्होंने आपस में विचारविमर्श किया और एक प्रतिनिधि मण्डल के रूप में मराठा किलेदार से मुक्तेश्वर महादेव

का पुनर्निमाण करने की प्रार्थनाकरने गये।[64] मराठा अधिकारियों ने मुक्तेश्वर महादेव की पुनः प्रतिष्ठा करायी।[65] शिवलिंग पूर्व स्थान पर प्रतिष्ठित कराया, किन्तु ऊपर का भवन ज्यों का त्यों रहनेदिया। आज भी यह निर्मिति मुगलों की भवन निर्माण कला का स्मरण कराती है और मुक्तेश्वर महादेव को औरंगज़ेब काल में भ्रष्ट करायेजाने का साक्ष्य प्रस्तुत करती हैं।

नक्का कुआ

मुक्तेश्वर महादेव शिव मंदिर के परिसर में दो ऐतिहासिक व धार्मिक महत्व के स्मारक हैं जिनमें **नक्का कुआ** और **झारखण्डेश्वर**, मराठा इतिहास से सम्बन्ध रखते हैं। नक्का कुआ निश्चय ही एक पौराणिक स्थल है। हिन्दुओं में इसके सम्बन्ध में दो धार्मिक विश्वास प्रचलित हैं। पहली मान्यता के अनुसार इसका नाम नहुषकूप था। स्थानीय भाषा में **नहुष का कुआ** प्रचलित होगया जिसका रूप भ्रंश हुआ और कालान्तर में 'ष' का लोप होगया और यह **नहु का कुआ** कहलाया, जिसका रूप पुनः बिगड़ा और यह **नहुक्का कुआ** तथा अन्त में **नक्का कुआ** होगया।

महाभारत से इसके सम्बन्ध में एक आख्यान जोड़ाजाता है। वस्तुतः महाभारत के **वनपर्व** के अर्न्तगत **अजगरपर्व** में यह वृतान्त आता है कि एक बार

---

64. साक्षात्कार : चौ0 विक्रम सिंह पुत्र चौ0 सोनाथ सिंह, पोत्र चौ0 कदम सिंह, आयु 88 वर्ष, निवासी ग्राम–तिगरी, जिला–मुरादाबाद , उ0 प्र0।
65. वही।

वन में विचरण करते समय भीमसेन के वापस आने में विलम्ब होगया तो ऋषि धौम्य को साथ लेकर युधिष्ठिर ने उन्हें ढूंढने का प्रयास किया।[66] शीघ्र ही उन्हें भीम के पैरों के निशान दिखायीपड़े।[67] इन्हें देखते–देखते वे भीम के पास जा पहुँचे जहाँ विशालकाय अजगर ने उन्हें दबोचरखा था।[68] भीमसेन सर्प के शरीर से इस प्रकार जकड़गए थे कि हिल–डुल नहीं सकते थे।[69] युधिष्ठिर ने उनके पास जाकर पूछा[70] कि–"कुन्तीनन्दन! तुम कैसे इस विपत्ति में फंस गये और यह पर्वत के समान लम्बा–चौड़ा श्रेष्ठ नाग कौन हैं" ?[71] अपने बड़े भ्राता धर्मराज युधिष्ठिर को वहाँ उपस्थित देख भाई भीमसेन ने अपने पकड़ेजाने आदि की सारी घटनाएँ कह सुनायीं।[72]

भीम बोले–आर्य! ये वायुभक्षी सर्प के रूप में बैठेहुए महान् शक्तिशाली साक्षात् राजर्षि नहुष हैं, इन्होंने मुझे अपना आहार बनाने के लिए पकड़रखा है।[73]

तब युधिष्ठिर ने सर्प से कहा "आयुष्मन् ! आप मेरे इस अनन्त पराक्रमी भाई को छोड़ दें। हम लोग आपकी भूख मिटाने के लिए दूसरा भोजन

---

66. **महाभारत** , वनपर्व , 179–47 , 48 , 49।
67. वही , 179–50 ।
68. वही , 179–53 ।
69. वही , 179–53 ।
70. वही , 180–1 ।
71. वही , 180–2 ।
72. वही , 180–3 ।
73. वही , 180–4 ।

देंगे।[74]

सर्प बोला–"राजन् ! यह राजकुमार मेरे मुख के पास स्वयं आकर मुझे आहार रूप में प्राप्तहुआ है। तुम जाओ, यहाँ ठहरना उचित नहीं है, अन्यथा कल तक तुम भी मेरे आहार बनजाओगे।" [75]

मेरा यह नियम है कि मेरी अधिकृत भूमि के भीतर जो भी आ जाएगा वह मेरा भक्ष्य बनजाएगा। इस समय तुम भी मेरे अधिकार की सीमा में आ गए हो।[76] दीर्घकाल तक उपवास करने के बाद आज यह तुम्हारा छोटा भाई मुझे भोजन रूप में प्राप्तहुआ है, अतः न तो मैं इसे छोडूँगा और न ही बदले में दूसरा आहार लेना चाहूँगा।[77]

युधिष्ठिर ने कहा–"सर्प! तुम कोई देवता हो या दैत्य अथवा वास्तव में सर्प ही हो ? सच बताओ तुमसे युधिष्ठिर प्रश्न कर रहा है। किसलिए तुमने भीम को ही अपना ग्रास बनाया है ?[78] बोलो, तुम्हारे लिए क्या ला कर दिया जाये या तुम्हें किस बात का ज्ञान करायाजाये ? जिससे तुम प्रसन्न हो सको। मैं कौन–सा आहार दे दूँ अथवा किस उपाय का अवलम्बन करुँ.[79] जिससे तुम इन्हें छोड़ दो ?"

---

74. वही , 180–5 ।
75. वही , 180–6 ।
76. वही , 180–7 ।
77. वही , 180–8 ।
78. वही , 180–9 ।
79. वही , 180–10 ।

युधिष्ठिर का परिचय जानकर सर्प बोला–''मैं पूर्व जन्म में तुम्हारा विख्यात पूर्वज नहुष नाम का राजा था।[80] चन्द्रमा की पाँचवीं पीढ़ी में जो आयु नामक राजा हुए थे उन्हीं का मैं पुत्र हूँ।'' [81]

मैंने अनेक यज्ञ किये,[82] तपस्या की,[83] स्वाध्याय किया[84] तथा अपने मन तथा इन्द्रियों के संयमरूप योगाभ्यास किया।[85] इनसे मुझे तीनों लोकों का निष्कंटक साम्राज्य प्राप्तहुआ था।[86] ऐश्वर्य को पाकर मेरा अहंकार बढ़गया था।[87] मैंने हजारों ब्राह्मणों से अपनी पालकी ढुलवायी और विद्वानों का अपमान किया।[88] इस पर महर्षि अगस्त्य ने मुझे श्राप देदिया।[89] श्राप के अनुसार दिन के छठे भाग में तुम्हारा ये छोटा भाई मुझे भोजन के रूप में प्राप्त हुआ है।[90] अतः, मैं न तो इसे छोडूँगा और न इसके बदले दूसरा आहार लेना चाहूँगा।[91] परन्तु एक बात है यदि तुम मेरे कुछ प्रश्नों का उत्तर अभी दे दोगे तो उसके बाद मैं तुम्हारे भाई को अभी छोड़दूँगा।'' [92]

---

80. वही , 180–11।
81. वही , 180–11।
82. वही , 180–12।
83. वही , 180–12।
84. वही , 180–12।
85. वही , 180–12।
86. वही , 180–12।
87. वही , 180–13।
88. वही , 180–13।
89. वही , 180–14।
90. वही , 180–16।
91. वही , 180–16।
92. वही , 180–17।

युधिष्ठिर ने कहा कि आप इच्छानुसार प्रश्न करें।[93] तत्पश्चात् सर्प ने अनेक प्रश्न किये[94] और युधिष्ठिर ने सभी का उत्तर दिया।[95] इस पर, अजगर ने भीम को छोडदिया।[96] इतना ही नहीं श्राप के कारण सर्प रूपधारी नहुष ने युधिष्ठिर के साथ वार्तालापकिया जिसमें दान, सत्य, अहिंसा आदि की मीमांसा की गयी। इसके फलस्वरूप नहुष की सर्प योनि से मुक्ति होगयी। कहते हैं कि यह घटना इसी स्थल पर हुई थी। इसी के कारण यह स्थल **नक्का कुआ** के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

दूसरी मान्यता के अनुसार पौराणिक राजा नृग को ऋषियों के श्राप के कारण अत्यन्त दारुण कष्ट प्राप्तहुआ। इस कुए के जल से स्नान करने और मुक्तेश्वर महादेव की आराधना से उन्हें कष्टों से मुक्ति मिली। अतः, उन्हीं राजा नृग के नाम पर यह कुआ **नृग का कुआ** कहलाया, जो कालान्तर में बिगड़कर **नृक्का कुआ** और फिर **नक्का कुआ** कहलानेलगा।

झारखण्डेश्वर

मुक्तेश्वर महादेव के प्रांगण में तीसरा महत्व का स्थल है **झारखण्डेश्वर**। वस्तुतः यह एक शिवलिंग है जो झाड़ियों में स्वयं प्रकट हुआ माना जाता है। सम्भवतः मराठा काल में इसको मौसम की सीधी मार से बचाने के लिए

---

93. वही , 180–18।
94. वही , 180–20 , 23 , 24 , 30।
95. वही , 180–21,22,25,26,27,28,29,31,32,33,34,35,36,37।
96. **महाभारत**, वनपर्व, अजगरपर्व, 180–38, 181–44,45,46,47,48,49।

प्रायः 1–1 गज ऊँचे तीन लघु स्तम्भों से इसका आवरण बनायागया ताकि इसका स्वयंभू होना प्रकट रहे और धूप तथा वर्षा आदि से इसकी रक्षा भी होजाये । इन स्तम्भों पर एक आटा गूंथनेवाली परात के आकारवाली छत बना दी गयी। ये स्तम्भ लखौरी ईंट व चूने से निर्मित हैं।

सती

इस परिसर में 80 सती स्मारक थे जिनमें से कुछ आज भी देखे जा सकते हैं।

कल्याणेश्वर महादेव

गढ़मुक्तेश्वर कस्बे से प्रायः 4–5 कि0मी0 दूर वन्य स्थान पर शिव का एक मन्दिर विद्यमान है। यह एक ऊँचे टीले पर अवस्थित है तथा यह कल्याणपुर गाँव से प्रायः एक–डेढ़ कि0मी0 की दूरी पर है। इसके आस–पास जो गाँव आबाद हैं वे सभी अपेक्षाकृत नये हैं। तथ्य यह है कि गढ़मुक्तेश्वर और झड़ीना गाँव के बीच पहले कोई अन्य गाँव आबाद नहीं था। बल्कि यह सारा स्थान उस गहन वन का भाग था जो यहाँ से लेकर हस्तिनापुर तक विस्तृत था।

इस मन्दिर के बारे में स्थानीय जनता यह विश्वास करती है कि इसे भूतों ने बनाया था। ऐतिहासिक रूप से इसका अर्थ है कि वर्तमान मन्दिर को बनतेहुए किसी मनुष्य ने नहीं देखा था। अपनी खोज के बल पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यह राजपूत काल या उससे भी पहले एक महत्वपूर्ण देवस्थान रहा

होगा। हस्तिनापुर शोध संस्थान, मेरठ के अन्वेषक दल ने यहाँ से राजपूत काल से सम्बन्धित महत्वपूर्ण पुरा–साक्ष्यों की पुष्टि की है।

ऐसा लगता है कि जब गढ़मुक्तेश्वर मराठों के प्रभाव में रहा, तो उनके किसी घुड़सवार आदि ने यह स्थान देखा–होगा अथवा उन्हें किन्हीं अन्य स्रोत से इस प्राचीन देवालय के खण्डहरों की जानकारी मिलीहोगी और उन्होंने इसका पुनरुद्धार कराने का निर्णय लियाहोगा। अन्य साक्ष्य भी इसे मराठों से सम्बद्ध करते दिखायीपड़ते हैं। कल्याणपुर गाँव के समीप के जंगल में स्थित होने के कारण वर्तमान में इसका नाम कल्याणेश्वर महादेव कर दियागया है। पूर्वकाल में इसका क्या नाम रहाहोगा ? यह अभी तक पता नहीं लगपाया है।

गढ़मुक्तेश्वर के निकटवर्ती कुछ मराठा स्मारक

गढ़मुक्तेश्वर के मराठा किले के अतिरिक्त निकटवर्ती क्षेत्र में भी मराठों ने महत्वपूर्ण संरचनाओं का निर्माण कराया। साथ ही, ऐतिहासिक इमारतों के ध्वंस में भी उनकी भूमिका को अनदेखा कियाजाना उचित न होगा। किन्तु यहाँ पहले उनके निर्माण का उल्लेख कियाजाना अपेक्षित है।

सूरजकुण्ड परिसर, मेरठ शहर

पुराने मेरठ शहर से प्रायः 1 कि0मी0 दूर यह धार्मिक स्थल स्थित है। कहते हैं कि महादानी कर्ण महाभारत युद्ध से पहले इस स्थान पर आकर भगवान सूर्य की पूजा कियाकरते थे। इसी कारण इसका नाम

सूर्यकुण्ड पड़ा जो कालान्तर में **सूरजकुण्ड** नाम से प्रसिद्ध हुआ। वास्तव में इसका नाम यहाँ पर प्राकृतिक रूप से बने जलकुण्ड के कारण पड़ा।

एक अनुश्रूति यह भी है कि वैदिक काल में उर्वशी का राजा पुरुरवा से इसी कुण्ड पर पुनर्मिलन हुआ था। इस कुण्ड की मान्यता की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि यहाँ जीर्णोद्धार के लिए पचास के दशक में खुदाई करते समय राजपूत युग के प्रस्तर स्तम्भ मिले।[97] इन स्तम्भों पर विभिन्न देवी--देवताओं की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। ऐतिहासिक रूप से यह निष्कर्ष निकलता है कि कम--से--कम एक हजार वर्ष पूर्व सूरजकुण्ड़ का प्रबल धार्मिक महत्व था। उपर्युक्त मूर्ति स्तम्भ पुरातात्विक रूप से इसी तथ्य की पुष्टि करते हैं।

कहते हैं कि सम्पूर्ण मध्य काल में स्थानीय जनता विभिन्न पर्वों पर यहाँ स्नान करती थी। इस स्थल का 1857 की क्रान्ति से भी निकट का सम्बन्ध है।

वर्तमान काल में नगर निगम, मेरठ द्वारा इस कुण्ड का सौन्दर्यकरण करायागया है **(चित्र 11)** तथा शोभाकर पौधे लगायेगये हैं। किन्तु 80 के दशक में इसमें पानी भरारहता था जिसमें नगर महापालिका, मेरठ की ओर से नौकायन की सुन्दर व्यवस्था थी।

---

97. इनमें से 2 प्रस्तर स्तम्भ तत्कालीन Institute of Advanced studies, Meerut University Campus के इतिहास विभाग में तत्कालीन विभागाध्यक्ष प्रो0 के0 के0 शर्मा जी द्वारा संरक्षित कियेगये, जो आज भी वहाँ सुरक्षित हैं तथा दो अन्य प्रस्तर स्तम्भ आज भी सूरजकुण्ड परिसर स्थित बाबा मनोहरनाथ मंदिर की पिछली दीवार में चिने हुए हैं।

कुण्ड विशाल एवं आयताकार है। इसके अन्दर की चारों दीवारें लखौरी ईंटों से बनी हैं। कहते है कि लावड़ के एक सेठ को कुष्ठरोग होगया था जिससे उनका जीवन मानों नारकीय बनगया था। उन्हें किसी महात्मा ने बताया कि यदि वह 40 दिन मेरठ जाकर सूरजकुण्ड में प्रतिदिन नियमित रूप से दो बार स्नान करें तो उसका रोग दूर होजाएगा। कहते हैं कि सेठ ने ऐसा ही किया और वह निरोगी होगया। इस सेठ का नाम महाजन जवाहरमल था। जवाहरमल ने कृतज्ञ भाव से सूरजकुण्ड का जीर्णोद्धार कराया और कुण्ड के अन्दर की चारों दीवारें उसी ने बनवाईं।[98] इनके निर्माण में लखौरी ईंट एवं सुर्खी–चूने का प्रयोग हुआ है। सूरजकुण्ड़ के चारों और धार्मिक महत्व के भवन बने हैं जिनमें बाबा मनोहर नाथ मन्दिर, हिन्दी की नागरी लिपि के प्रचारक पं0 गौरी दत्त की समाधि व बृहस्पति देव मन्दिर हैं। यहाँ सती भी बनी हुई हैं और पितरों के थान बने हैं। परिसर से दक्षिण दिशा में सटी हुई चौड़ी सड़क बनी है। परिसर की पश्चिमी दिशा में भी सड़क है। परिसर के उत्तरी भाग में भी एक सड़क है जिस पर विभिन्न मठ, मन्दिर, धर्मशाला बनीं हैं। इनमें उदासीन पंथ का स्थल ऐतिहासिक रूप से बहुत महत्त्वपूर्ण है। यहीं पर निकटवर्ती खेत की जुताई के समय निकली विशाल बौद्ध प्रतिमा भी स्थापित है।

सूरजकुण्ड परिसर का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थल कुण्ड का उत्तरी

---

98. कृष्ण दत्त शर्मा (सं0): **मयराष्ट्र मानस**, कृष्णा देवी शीतल प्रसाद जैन ट्रस्ट मेरठ, 1973, पृ0 76।



चित्र 15

महाकाली,महालक्ष्मी,महासरस्वती मन्दिर, सूरजकुण्ड, मेरठ शहर

भाग है। इसी भाग में प्राचीन श्मशान है। **ज्ञानोसती** का मन्दिर है।(**चित्र 12–14**) रावण की पत्नी मन्दोदरी से सम्बद्ध कियाजानेवाला **मनसा देवी मन्दिर** है तथा कई साधु–सन्यासियों की समाधियाँ बनीहुई हैं जिनमें से कुछ तो साधारण निर्मितियाँ हैं। किन्तु कतिपय समाधियाँ वास्तुशास्त्रीय मानकों का प्रयोग करके बनायीगयी हैं। इनमें से कुछ अष्ट कोणीय प्लेटफार्म पर आधारित हैं जिनके ऊपरी हिस्से में सुन्दर गुम्बद बनायेगये हैं। इनमें से कई सुन्दर समाधियाँ अतिक्रमण का शिकार हो गई हैं। इसके पश्चिमी भाग में **मनसा देवी मन्दिर** व **हनुमान मन्दिरवाले** उपपरिसर में एक विशाल और सुन्दर मन्दिर विद्यमान है। यह **महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती मन्दिर** के नाम से जानाजाता है। इसे **मराठा मन्दिर** भी कहते हैं।[99] (**चित्र 15**) यह डेढ़ मीटर ऊँचे चबूतरे पर बनवायागया है जिस पर चढ़ने के लिए सीढ़ियाँ बनवायीगयी हैं। यह मन्दिर पूर्वाभिमुख है। इस मन्दिर पर पहले एक शिलालेख लगा था।[100] यह प्रस्तर अभिलेख अण्डाकार था।[101] इस पर इसके निर्माण का विक्रमी संवत् तथा महादजी सिंधिया का नाम खुदाहुआ था।[102]

मन्दिर की दीवार से सटे लगभग एक मीटर ऊँचे प्लेटफार्म पर तीन

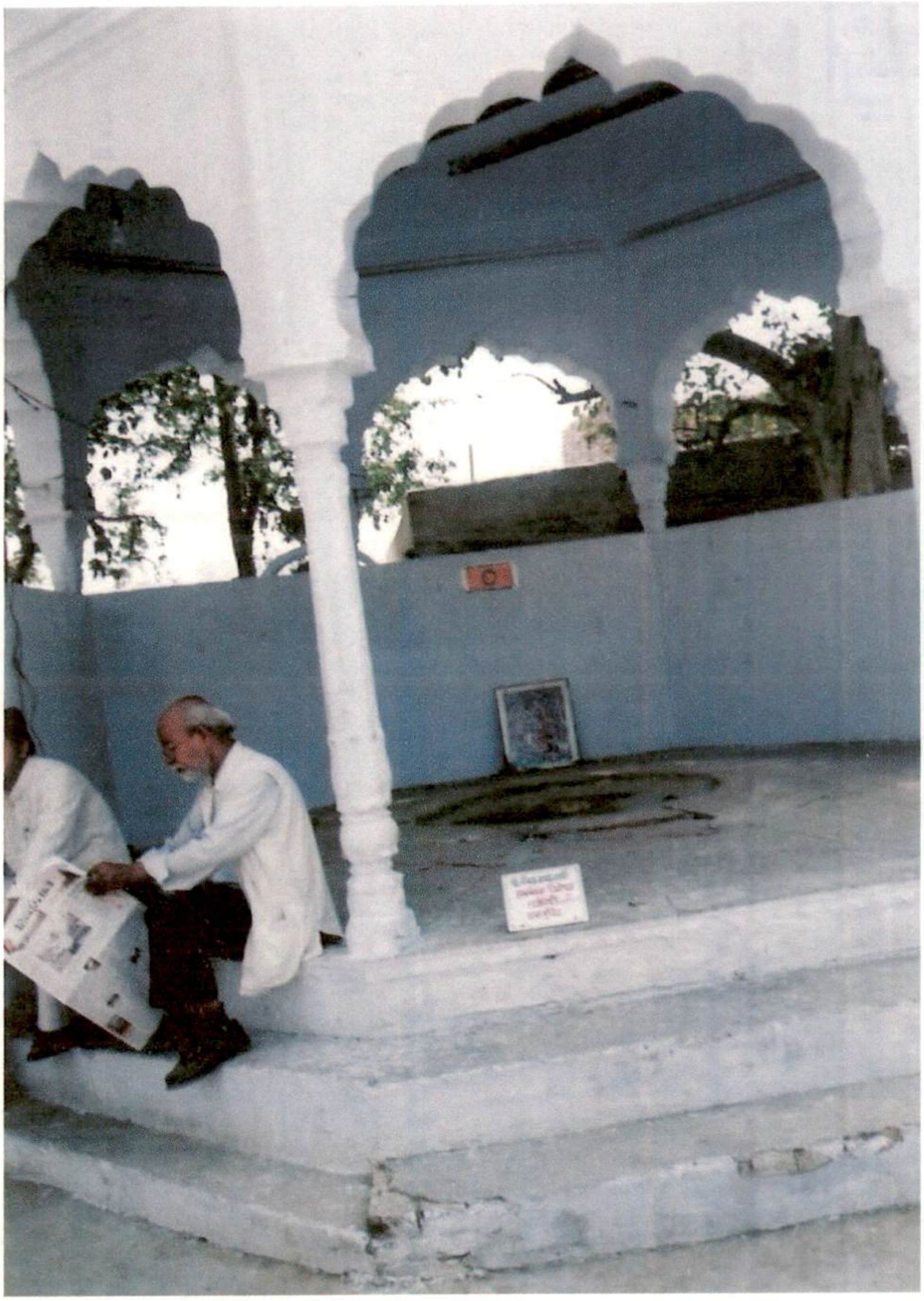
---

99. साक्षात्कार,दिनाँक 22–6–2004, पंडित विष्णु दत्त ऋषि, मुख्य पुजारी, मराठा मन्दिर, सूरजकुण्ड, मेरठ।
100. वही ।
101. वही ।
102. वही । इस सम्बंध में पंडित विष्णु दत्त ऋषि, ने यह भी बताया कि उन्होंने अण्डाकार प्रस्तर अभिलेख के टूटे हिस्से को जोड़कर उसके लिखित विवरण का पाठ सुरक्षित लिखवालिया था जिसे बाद में रोडवेज़ बस स्टैण्ड के समीप रहनेवाले कोई जैन महोदय, जो दिल्ली में किसी अंग्रजी समाचार पत्र में लिखते थे, उनसे लेगये। इसका विवरण भी प्रकाशित हुआ, किन्तु जैन महोदय की असामयिक मृत्यु होगयी तथा वह अभिलखीय विवरण उन्हीं पर रहगया। श्री जैन महोदय की पुत्री भी संभवतः पत्रकारिता से जुड़ी हैं।



चित्र 16

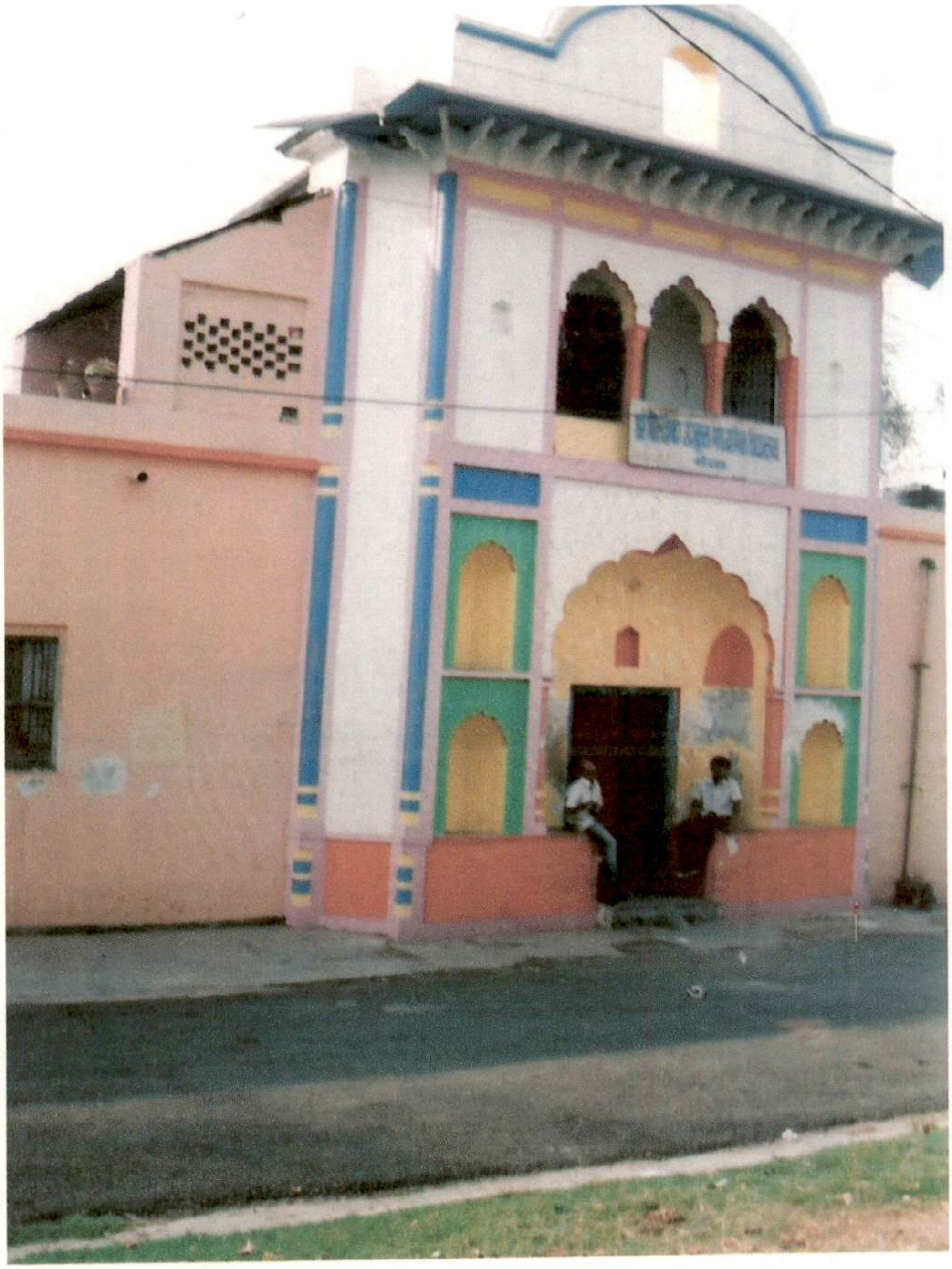
महाकाली,महालक्ष्मी,महासरस्वती मन्दिर,(आन्तरिक दृष्य) सूरजकुण्ड, मेरठ शहर



चित्र 17
महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती मन्दिर परिसर स्थित कुआ
सूरजकुण्ड, मेरठ शहर

देवियों के विग्रह विराजमान हैं। ये देवियाँ क्रमशः **महाकाली**, **महालक्ष्मी**, **महासरस्वती** की हैं।(**चित्र 16**) बीच का विग्रह महालक्ष्मी का है। उनके बायें ओर महासरस्वती का विग्रह है। उनके बायें हाथ में वीणा तथा दाएँ हाथ में श्वेत कमल की गुम्फी है। महालक्ष्मी के दाहिनी ओर महाकाली है जिनके दाहिने हाथ में परशु तथा बाएँ हाथ में किसी राक्षस का नरमुण्ड है जिससे मानों खून की ताजा बूँदें टपककर गिरनेवाली हैं। महाकाली के दाहिनी ओर गणेश जी की लघु मूर्ति है। इसी प्रकार सरस्वती की बाईं ओर लघु आकारवाली त्रिमुखी देवप्रतिमा है। तीनों देवियों को प्रमुखता प्राप्त है उनके चरणों के नीचे सिंह (महाकाली), हाथ जोड़े हुए देवता (महालक्ष्मी) तथा मोर (महासरस्वती) विद्यमान हैं। मन्दिर के द्वार पर एक मण्डप बना है। यह मन्दिर सुर्खी–चूने और लखौरी ईंटों से निर्मित है। मन्दिर की एक दीवार पर बाहरी ओर एक प्रस्तर अभिलेख लगा है। इसी परिसर के सामने लखौरी ईटों से बना कुआ है जो अब बन्द कर दिया गया है। (चित्र 17)

यह मन्दिर 18वीं शताब्दी में मराठों की मन्दिर निर्माण कला का नमूना है। हमारा विचार है कि यह मन्दिर महादजी के आदेश पर उनके किसीअधिकारी की उपस्थिति में बनवायागयाहोगा। ऐसा वर्णन नहीं मिलता जिससे पता चलता हो कि महादजी सिंधिया स्वयं यहाँ आया हो। उसकी मृत्यु सन् 1796 में हुई। तत्पश्चात् उसका दत्तक पुत्र दौलतराव सिंधिया उत्तराधिकारी बना। अतः इस मन्दिर का निर्माण निश्चित रूप से 1796 से पहले पूर्ण होचुकाहोगा अथवा प्रारम्भ होचुकाहोगा।



चित्र 18

विल्वेश्वर महादेव मन्दिर (मुख्य द्वार), मेरठ कैण्ट



चित्र 19

चौरासी घन्टा मन्दिर (मुख्य द्वार), शहर आनाज मण्डी, मेरठ

विल्वेश्वर महादेव मन्दिर, मेरठ कैण्ट

मेरठ का कदाचित् सबसे पुराना ऐसा देवालय जो अभी तक पूजा–अर्चना हेतु प्रयुक्त हो रहाहो, सदर स्थित **विल्वेश्वर महादेव मन्दिर** है।(चित्र **18**)। दन्त कथाओं में इसे रामायण काल से जोड़ाजाता है। कहते हैं कि इसकी स्थापना रावण ने की थी जब वह मन्दोदरी को लेने अपने श्वसुर मय दानव के पास मेरठ आया था। रावण की शिव भक्ति जगत् प्रसिद्ध है। पीढ़ी–दर–पीढ़ी यह बात प्रचलित है कि मराठा काल में इस मन्दिर का जीर्णोद्धार हुआ था। महादजी सिंधिया को इसका श्रेय दियाजाता है।[103] सिंधिया के आदेश पर शिवलिंग के चारों ओर का वर्तमान ढांचा बनवायागया था। इसकी चौड़ी विशिष्ट दीवारें तथा मेहराब युक्त दरवाजे सहज ही मराठा काल का स्मरण कराते हैं।

चौरासी घण्टा मन्दिर, मेरठ शहर

वर्तमान में नष्ट होचुके दिल्ली दरवाजे के समीप शहर आनाज मण्डी में स्थित चौरासी घण्टा मन्दिर मेरठ का एक अन्य मराठा स्मारक है।(चित्र **19**)। ऐसा लगता है कि इसका निर्माण महादजी के बाद हुआ था क्योंकि कोई भी किंवदंती इसे महादजी से नहीं जोड़ती। ऐसा लगता है कि किसी मराठा सरदार

---

103. वही ।
साक्षात्कार, दिनाँक 21–6–2004, प्रो0 के0 के0 शर्मा, पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग, चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय , मेरठ।
साक्षात्कार, दिनाँक 21–6–2004, डा0 गणेश दत्त शर्मा, पूर्व प्राचार्य, लाजपतराय कॉलेज, साहिबाबाद, गाजियाबाद।

ने दौलतराव के शासन काल में, किन्तु 1804 से सर्वथा पहले, इसका निर्माण करायाहोगा। अनुसन्धान से यह ज्ञात हुआ है कि सुरजीअन्जन गाँव की सन्धि के पश्चात् जब गंगा--यमुना दोआब मराठा नियन्त्रण से निकल कर ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधीन होगया था तो अपनी व्यक्तिगत सम्पत्तियों की देखभाल के लिए मराठों की ओर से मेरठ में पं0 नानक चन्द चौरासिया के पूर्वजों को देखभाल का काम सौंपा गया और पं0 नानक चन्द तक उन्हीं का वंश इस मन्दिर और इसके साथ संलग्न कृषि योग्य भूमि का प्रबन्धन देखतारहा। यदि माधवराव सिंधिया से इसका सम्बन्ध होता तो शेष मन्दिरों की भाँति इस मन्दिर का नाम भी महादजी के साथ जोड़ते। अतः, हमारा विचार है कि यह निश्चित ही दौलतराव सिंधिया के शासन काल में बनवायागया है। मेरठ के सामान्य लोग दौलतराव सिंधिया का नाम इसलिए नहीं जानते क्योंकि अनुश्रुतियों में उसका स्थान नगण्य है। महादजी की अपेक्षा वह वस्तुतः इसलिए भी स्थानीय स्तर पर नगण्य रहा क्योंकि 1803 में यह क्षेत्र सिंधिया के नियन्त्रण से अलग होकर अंग्रेजी नियन्त्रण में आगया था।

मराठा कोठी, सरधना

मेरठ से 25 कि0मी0 दूर स्थित सरधना मराठा काल की स्मृतियों का समृद्ध केन्द्र है। यह बेगम समरु की जागीर का मुख्यालय था। उसके पति वाल्टर रेनहार्ड समरु को यह जागीर 1777 में मिली थी किन्तु उससे पहले यह मराठों का प्रशासनिक केन्द्र रहचुका था। आज भी कुछ लोग बेगम के पुराने महल को **मराठा कोठी** के नाम से जानते चलेआरहे हैं। वस्तुतः यहाँ मराठों ने एक



चित्र 21
सरधना स्थित मराठा कोठी का मुख्य द्वार (सामने की ओर से)



चित्र 20
सरधना स्थित मराठा कोठी का मुख्य द्वार



चित्र 22

मराठा कोठी परिसर, सरधना, अस्पताल भवन (कम्पनी शैली)

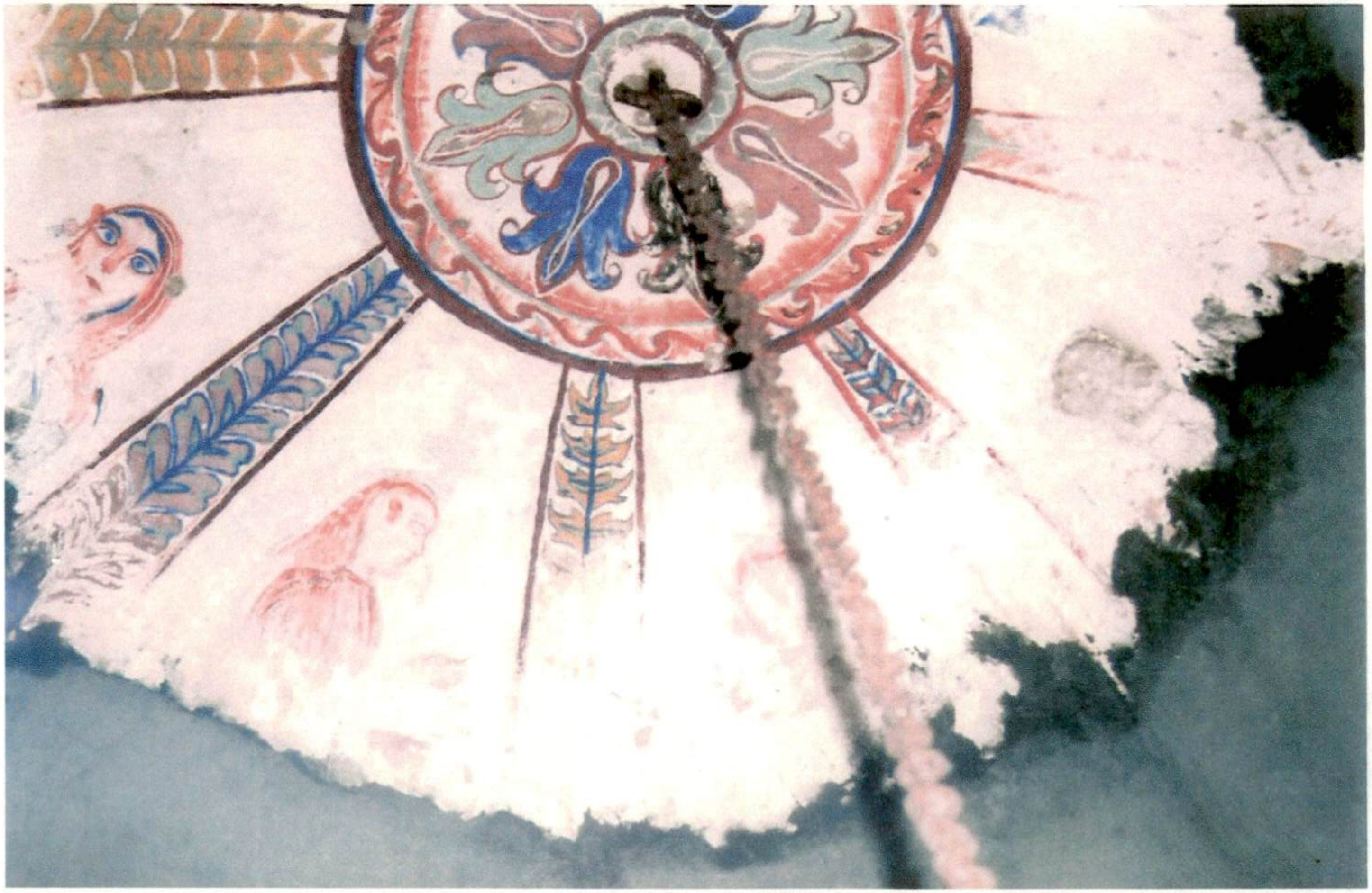


चित्र 24
प्राचीन शिवमन्दिर में भित्तिचित्र, ग्राम–महादो (महादेव), सरधना, मेरठ



चित्र 23

प्राचीन शिवमन्दिर, ग्राम–महादो (महादेव), सरधना, मेरठ



चित्र 25

प्राचीन शिवमन्दिर में भित्तिचित्र,ग्राम–महादो(महादेव),सरधना, मेरठ

मजबूत किलेबन्दी कराई थी। इस किलेबन्दी का मुख्य द्वार अभी भी अपने अस्तित्व में है।(**चित्र २०–22**)वर्तमान में **मराठा कोठी** नाम को लिखित रूप में प्रयोग में नहीं लायाजारहा है।

महादो

यह ग्राम प्रभावी त्यागी ब्राह्मणों का गाँव है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समय आस–पास में 12 गाँव की चौधराहट इसी गाँव में थी। यहाँ गाँव के निकट पश्चिमोत्तर दिशा में एक मन्दिर है जिसका हाल ही में पुनःनिर्माण किया गया है।(**चित्र 23–25**) कहते हैं कि इस मंदिर के आस–पास मराठों की सेनाएं पड़ावडाला करती थीं। कहते हैं कि यह स्थल मराठों का छावनी स्थल था। मन्दिर से सटा हुआ कुआ तथा प्रायः दो सौ मीटर दूर जंगल में स्थित एक अपेक्षाकृत बड़े व्यास का कुआ मराठा सैनिकों और उनके घोड़ों को पेयजल की आपूर्ति के साधन थे।

कहते हैं कि यहाँ पर मराठा सैनिक महीनों–महीनों रुका करते थे। आश्चर्यजनक है कि इस मन्दिर का द्वार पश्चिमाभिमुख है। पुनर्निर्माण के दौरान ग्रामीणों ने जिज्ञासावश इसके लगभग 3 मीटर ऊँचे प्लेटफार्म को दीवारों के समानान्तर नीचे की ओर खोदा जिसमें यह तथ्य सामने आया कि इस मंदिर के निचले हिस्से में भी एक पुरानी पूर्ण वास्तु विद्यमान थी। इस ढांचे का उपरी हिस्सा वर्तमान प्लेटफार्म के तल से लगभग आधा मीटर नीचे था, **फील्ड वर्क** के दौरान शोध निदेशक एवं शोधार्थी दोनों ने ही पर्याप्त समय और धन लगाकर जंगलवाले

पुराने मराठा कालीन कुए की स्थिति खोजनिकाली है। वर्तमान में यह खेत के अन्दर लेलियागया है किन्तु कुछ वर्ष पूर्व तक यह अपने मूल रूप में ही विद्यमान था। सम्भवतः इसे ही पुराना कुआ कहाजाता है।

महादो का इतिहास काफी पुराना है। भाट की पोथी के अनुसार लगभग 11 सौ साल पहले शाण्डिल्य गोत्रीय अयाचक ब्राह्मण अपने परिवार सहित पालम (दिल्ली) से चलकर इस इलाके में आया था। इस पूर्वज के वंशजों से कालान्तर में 12 गाँव आबाद हुए। इन 12 गाँवों को निम्न प्रकार सूचीबद्ध किया जा सकता है। धनवाली, भूनी, जुल्हैड़ा, ईकड़ी, नानू, ककेड़ा, बाड़म, बेगमाबाद, नाला, महादेव, सरधना, झिटकरी।

धनवाली गाँव महामारी में उजड़गया और खेड़ा पलटगया। ब्रिटिश राज्य के समय और विशेषतः 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में इन गाँवों की चौधराहट की कमान चौधरी रघुवीर लम्बरदार के हाथ में चलीगई जो सरधना निवासी थे। इनके पास लगभग 4000 बीघा जमीन थी, लम्बरदार के कोई पुत्र न था। एक पुत्री थी जिसका विवाह चौधरी कृष्ण स्वरूप के साथ हुआ जिनके पुत्र सूर्यदेव त्यागी इलाके के सम्मानीय व्यक्तियों में गिनेजाते हैं।

वास्तव में महादो की जनसंख्यात्मक दृष्टि और भौगोलिक स्थिति मराठा सेना के पड़ाव के लिए आवश्यक सुरक्षा शर्तें पूराकरती थीं। मराठों की सैनिक संख्या सम्बन्धी जासूसी की सम्भावनाओं को आवश्यक क्षीण करनेवाले कारक इस इलाके में विद्यमान थे। दरअसल त्यागियों के उक्त 12 गाँव के अलावा

6 गाँव ओर भी हैं जो महादो के आस–पास स्थित हैं। पुनः, 24 गाँव ठाकुरों के हैं जिनकी श्रृंखला मुजफ्फरनगर के चलसीना गाँव तक जाती है।

अतः, प्रकट रूप में दृष्टिगोचर होता है कि यह गाँव सुरक्षात्मक लिहाज से और गुप्तचरी न होने की दृष्टि से मराठों के लिए विशिष्ट स्थान का रहा होगा।

महादो गाँव का निकाल ईकड़ी से है। कहते हैं कि ईकड़ी का मदन किसी बात पर अलग होकर यहाँ चलाआया और उसके वंशजों से यह गाँव आबाद हुआ और इस गाँव का नाम भी मदन के नाम पर **महदो** और **महादो** पड़ा। इसी का तत्सम रूप **महादेव** इस समय विख्यात है। पहले यहाँ बनी (वन्य) भाग था।

बेलड़ा

यह गाँव जिला मुजफ्फरनगर की जानसठ तहसील के अर्न्तगत आता है। पहले इस स्थान पर नजीबुद्दौला ने एक मजबूत किलेबन्दी का निर्माण कराया था तथा इसकी सुरक्षा की मजबूत व्यवस्था की थी।[104] अनुश्रुतियों से ऐसी

104.**साक्षात्कार** , 26 नवम्बर 2004,सैयद मुमताज अलीपुत्र स्व0 सैयद वाजिद अली, पौत्र स्व0 सैयद जीवन अली , आयु 55 वर्ष, ग्राम बेलड़ा, जिला मुजफ्फर नगर (उ0प्र0)।
श्री विजय पाल सिंह पुत्र स्व0 श्री मुंशी राम, आयु 75 वर्ष, जाति जाट, बेलड़ा।
श्री अजीत सिंह पुत्र स्व0 श्री भंवर सिंह , आयु 53 वर्ष, जाति जाट, बेलड़ा।
सैयद हैदर अब्बास पुत्र स्व0 सैयद जहूर हसन आयु 76 वर्ष , बेलड़ा।
श्री सेवा राम पुत्र स्व0 श्री कबूल सिंह आयु , 55 वर्ष, जाति जाट ,बेलड़ा।
सैयद जब्बार हुसैन पुत्र स्व0 सैयद अहमद हसन , आयु 52 वर्ष , बेलड़ा।
सैयद गुलजार मुहम्मद पुत्र सैयद मुहम्मद , आयु 58 वर्ष, बेलड़ा।
श्रीमती नसीम फातिमा पत्नी सैयद मुमताज अली (ग्राम प्रधान), आयु 48 वर्ष , बेलड़ा।
सैयद नासिर अली ऐडवोकेट पुत्र स्व0 सैयद वाजिद अली, आयु 63 वर्ष, हाल निवासी–नजर कालोनी, अंसारी रोड मुजफ्फर नगर , मूल निवासी–बेलड़ा।

जानकारी मिली है कि इसमें रहनेवाले सिपाही गंगास्नान के लिए शुक्रताल जाने-वाले तीर्थ यात्रियों को कष्ट पहुँचाते थे।[105] कहते हैं कि इससे तीर्थ यात्रियों को कई बार बड़ा अपमान सहना पड़ता था।[106] उन्होंने इससे निपटने का उपाय सोचा और उन्होंने मराठों से सहयोग मांगा।[107] मराठों ने गढ़ी को घेरलिया और इसे ध्वस्त कर दिया।[108] कहते हैं कि इसके बाद मराठों ने उन सम्पर्कित किसानों से यहाँ बसने केलिए कहा। इस प्रकार, यह गाँव मराठों के कहने से यहाँ बस गया।[109] शुरू में नसौली बरवाला नामक गाँव से जाट किसान, ब्राह्मण एवं बढ़ई परिवार मराठों ने यहाँ बसाये थे।[110] जब यह क्षेत्र मराठा आधिपत्य में रहा तो उन्होंने यहाँ एक मन्दिर का निर्माण कराया।[111] इस काल का कुआ तथा यह मन्दिर दोनों आज भी अच्छी स्थिति में विद्यमान हैं।[112]

---

105. साक्षात्कार दिनाँक 23-6-2004

श्री सुरेन्द्र सिंह पुत्र स्व0 श्री धूम सिंह, पौत्र श्री घासी राम ,आयु 71 वर्ष ,जाति-जाट, गौत्र-तोमर, मूल निवासी बेलड़ा, मुजफ्फरनगर, हाल निवासी 2/1 न्यू प्रभात नगर, मेरठ। श्री सुरेन्द्र सिंह तोमर ने साक्षात्कार में बताया कि उनके पड़बाबा के पिता मराठों के साथ लूटमार करते थे जो कि मेरठ और मुजफ्फरनगर जिलों में बहुधा पठानों के खिलाफ हुआ करती थी। उनका यह पूर्वज नसौली बरवाला का मूल निवासी था जिसे मराठों ने जमीन माफी देकर बेलड़ा में बसाया था। तब से उनके पूर्वज बेलड़ा में रहते आरहे है।

श्री शिव ध्यान सिंह पुत्र स्व0 श्री छज्जू सिंह, पौत्र स्व0 श्री नत्थू सिंह, आयु 72 वर्ष ,जाति-जाट, गौत्र-गौथ, मूल निवासी-बहलोलपुर (परीक्षितगढ़) जिला मेरठ, हाल निवासी 41/1 जे, जेल रोड, न्यू आर्यनगर, मेरठ।

106. वही।
107. वही।
108. वही।
109. वही।
110. वही।
111. वही।
112. वही।

थाना भवन

यह कस्बा वर्तमान जिला मुजफ्फरनगर (उत्तर प्रदेश) में स्थित है। इसका नामकरण मराठों द्वारा दो इमारत बनवाए जानेपर हुआ था। इस स्थान पर मराठों ने देवी का एक भवन (मंदिर) बनवाया था और प्रशासनिक रूप से इसी भवन के निकट एक थाना स्थापित किया था। देवी का भवन और निकटस्थ थाने के आसपास धीरे–धीरे एक बस्ती बसगई और इस बस्ती को **थाना** और **भवन** के संयुक्त नाम से जानाजानेलगा। इस प्रकार **थानाभवन** कस्बा अस्तित्व में आया। कहते है कि 1761 ई0 में 14 जनवरी को लड़ेगये पानीपत के तृतीय युद्ध से पूर्व इस मराठा चौकी पर अनेक मराठा महिलाएँ और बच्चे सुरक्षा की दृष्टि से ठहरायेगये थे। यद्यपि दोआब क्षेत्र में नजीब और अब्दाली का प्रभाव बढ़जाने के कारण 1760 ई0 में ही उन्हें वहाँ से बुलवालियागया था। ऐसा अनुमान कियाजाना न्यायोचित होगा कि महिलाओं और बच्चों का उक्त स्थानान्तरण दत्ताजी सिंधिया के शुक्रताल घेरे की समकालीन घटना रहीहोगी।

नसोली बरवाला

वर्तमान में यह गाँव बागपत जिले में सम्मिलित है। मराठा प्रभाव के समय यहाँ के कुछ परिवारों को मराठों का संरक्षण प्राप्त था और उन्हें शुक्रताल के निकट बेलड़ा गाँव में मराठा प्रशासन की ओर से कुछ जमीनें भी दीगयी थीं। सम्बंधित पूर्वजों के वंशज आज भी बेलड़ा गाँव में रहते है। इनमें जाट परिवार

मुख्य रूप से गिनाये जा सकते हैं जिनके साथ कृषि–उपयोगी बढई जाति के लोग भी नसोली बरनावा से आकर यहाँ बसे थे।

अंगतपुर संगतपुर गढ़ी तमेला

बागपत जिले का यह ग्राम समूह 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मराठों के अधीन था। विशेष बात यह है कि यहाँ के स्थानीय निवासियों का मराठा राजस्व अधिकारियों से विवाद होगया था जिसके कारण बहुत से लोगों को जान से हाथ धोनापड़ा था।

हापुड़

हापुड़ में एक मौहल्ला **कोठीगेट** के नाम से प्रसिद्ध है। आजकल यहाँ नगर के प्रमुख व्यवसायी श्री जन्मेजय कृपाल का आवास है। वस्तुतः, जन्मेजय कृपाल ने यह कोठी एक माली से खरीदी थी। कहते है कि यह कोठी 1947 तक एक अंग्रेज के अधिकार में थी जिसके पूर्वज नील की खेती का काम करवाते थे। 1947 में भारत से अंग्रेजीराज की समाप्ति से पहले ही इंग्लैण्ड जाते समय इसका स्वामी अपने भारतीय माली की सेवा से प्रसन्न होकर उसे ही यह कोठी इनाम में देगया था। वास्तव में अंग्रेज के पास यह कोठी मराठों से आयी थी। मराठा शासनकाल में यहाँ एक मराठा अधिकारी रहता था। यह कोठी उसीका आवास थी और तभी से कोठी के नाम से जानी जाती थी। इस कोठी का एक बड़ा दरवाजा था जिसके नाम पर उसके आसपास का नाम **कोठीगेट** पड़ा था।

अजराडा

वर्तमान जिला मेरठ में काली नदी के बायें तट पर स्थित इस प्राचीन एतिहासिक गाँव में 1792 ई0 तक नबाब फतेह अली खान का शासन था। नबाब पर महादजी सिंधिया की सैन्य टुकड़ी ने आक्रमण किया और उसे बन्दी बनाकर सम्राट के पास दिल्ली भिजवादिया। अभियान के दौरान महादजी की पुत्री बालाबाई अजराडा में मराठा शिविर में मौजूद थी जिसे यहीं प्रथम प्रसव हुआ। इस खुशी में बाद में महादजी ने प्राचीन मंदिर के स्थान पर ही राधाकृष्ण का एक छोटासा मंदिर बनवाया। इसकी दो कोठरियाँ और एक जीना 4 वर्ष पूर्व तक सुरक्षित था किन्तु अब एक साधु के मंदिर परिसर में स्थायीरूप से रहने पर उसकी आवासीय सुविधाओं को दृष्टिगत रखतेहुए जो निर्माण कार्य किया गया, यह महत्वपूर्ण एतिहासिक महत्ता रखनेवाला जीना (सीढ़ियाँ) उसी की भेंट चढ़गयीं।

सिकन्दराबाद

जिला बुलन्दशहर का यह एक प्रसिद्ध कस्बा और महत्वपूर्ण तहसील मुख्यालय है। नजीबुद्दौला के राजस्व अधिकारियों को भगाकर मराठों ने यहाँ अपने अधिकारी नियुक्तकिये थे।

सन् 1771–72 में अंग्रजों की पैन्शन से निकल कर, महादजी सिंधिया की सैन्य सहायता से, सम्राट शाहआलम द्वितीय जब इलाहाबाद किले से दिल्ली की यात्रा पर था तो वह भी सिकन्दराबाद रुका था।

मालागढ़

जिला बुलन्दशहर में काली नदी के तट पर स्थित इस स्थान पर मराठों का एक मजबूत किला विद्यमान था। कालान्तर में यह किला अफ़गानों के नियन्त्रण में आगया। 1857 ई0 की क्रान्ति में यहाँ के नबाब वलीदाद खाँ के विरुद्ध कार्यवाही में अंग्रेजों ने तोपें लगाकर इस किले को नष्ट करदिया था।

हाथरस

यह उत्तर प्रदेश राज्य का एक जिला मुख्यालय है। मराठों ने यहाँ अपनी सैन्य और राजस्व चौकियाँ स्थापित कररखी थीं।

अध्याय–8

निष्कर्ष

अध्याय–8

निष्कर्ष

मराठों की उदीयमान शक्ति के लिए उत्तरी भारत की राजनीति में रुचि लेना नितान्त स्वभाविक था। मुगल सम्राट औरंगजेब द्वारा स्वयं शिवाजी और उनके पुत्र शम्भाजी की आगरा में नजरबन्दी कीगयी। इस कैदपूर्ण स्थिति से चतुराईपूर्वक उनके निकल भागने के घटनाक्रम को मराठा साम्राज्य निर्माता द्वारा उत्तरी भारत की प्रथम यात्रा मानाजाता है।

शिवाजी ने मराठों के सामने **हिन्दु पद पादशाही** का घोषित लक्ष्य रखा, जिसे उनके उत्तराधिकारी योग्यतापूर्वक प्राप्त न कर सके। किन्तु कालान्तर में शाहूजी के योग्य सरदार बालाजी विश्वनाथ के प्रयासों से पुनः वह आधारशिला रखीगयी जिस पर शिवाजी का घोषित लक्ष्य प्राप्त होता जानपड़नेलगा था।

ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में स्थित उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले का वृहद अंश **सैयद बारहा** इलाका कहलाता है। मूलतः इसी क्षेत्र के दो सगे भाईयों क्रमशः **सैयद अब्दुल्ला खाँ** तथा **सैयद हुसैन अली खाँ** के सहयोग से सम्राट फरुखसियर के शासनकाल में **पेशवा बालाजी विश्वनाथ** के नेतृत्व में पहली मराठा सैन्य टुकड़ियों ने दिल्ली में प्रवेश किया था। 1719 ई0 में घटित सन्दर्भित प्रकरण में सम्राट फरुखसियर को सैयद बन्धुओं ने बलात् गद्दी से उतारदिया। सैयद बन्धुओं ने एक–एक करके क्रमशः 3 शहजादों को सम्राट

बनाया। क्योंकि सम्राट फरुखसियर को मराठा सेना की सहयोगात्मक उपस्थिति में अपदस्थ कियागया था अतः इस घटना ने उत्तरी भारत की राजनीति में मराठों को प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करने के कार्य को सदैव के लिए रुचिकर बनादिया।

1737 में आगरा के निकट मराठा टुकड़ी से सआदत खाँ बुरहानुल्मुल्क की झड़प के सन्दर्भ में कियेगये मिथ्या प्रचार ने पेशवा बाजीराव को इतना उत्तेजित किया कि वह एक अपर्याप्त सैन्य टुकड़ी लेकर स्वयं दिल्ली आ पहुँचा था। वह दिल्ली के निकट एक सराय में ठहरारहा किन्तु तत्कालीन विश्व का सबसे बड़ा तोपखाना होते हुए भी मुगल सेना उसका सामना करने का साहस न कर सकी। यह किसी बड़े मराठा सरदार द्वारा मुगल साम्राज्य के राजधानी नगर की दूसरी यात्रा थी। उसके दिल्ली अभियान ने मुगलों की क्षीण आत्मबल वाली सैन्य व्यवस्था की पंगुता को जगजाहिर करदिया।

1739 में नादिरशाह के दिल्ली अभियान ने मुगलों की सैन्य अक्षमता का भेद और भी तेजी से खोलदिया। दिल्ली में उसके कत्लेआम ने साम्राज्य की नींव हिलादी। अगले दशकों में अहमदशाह अब्दाली (दुर्रानी) के भारत आक्रमणों और उनमें किये जानेवाले हिन्दुओं के नरसंहारों ने उत्तरी भारत की ओर मराठा अभियानों की पृष्ठभूमि तैयार की।

वस्तुतः यह मुगल साम्राज्य की सामरिक शून्यता थी जिसने उत्तरी भारत में मराठा अभियानों को निमन्त्रित किया था। यदि पेशवा बाजीराव का 40 वर्ष की अल्पायु में देहावसान न हुआहोता तो सम्भवतः उत्तरी भारत में 1740 के

दशक में मराठे अपने सैन्य अभियानों का संचालन करते–ऐसा सोचना तथ्य संगत लगता है।

18वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध उत्तरी भारत में पेशवाओं के अधीन मराठा साम्राज्य के, उत्थान, पतन और आश्चर्यजनक पुनरुत्थान की घटनाओं से भराहुआ है। यद्यपि **पेशवा बाजीराव** जैसी राजनीतिक समझ और कूटनीतिक चतुराई तथा सामरिक तेजस्विता उसके वंशजों को प्राप्त न थी किन्तु फिर भी मराठा शक्ति सम्पूर्ण भारत में उच्चावच के साथ बढ़तीचलीगयी।

पानीपत के युद्ध से पूर्व मराठा सरदारों में परस्पर मतभेद के बीज विद्यमान थे। किन्तु युद्धोपरान्त पेशवा के परिवार में आन्तरिक कलह की नई प्रवृति ने अत्यधिक जोरपकड़ा। पारावारिक अन्तर्कलह की जड़ें दिवंगत पेशवा बालाजी बाजीराव के छोटे भाई रघुनाथ राव के मन में थीं। पेशवा माधवराव को सफलता पूर्वक अपने चाचा की अतिशय महत्वाकांक्षाओं को दबाने और मराठा साम्राज्य को विभिन्न चुनौतियों के विरुद्ध सुस्थिर रखने का प्रयास है। किन्तु यह नवयुवक अल्पकाल में ही चलबसा। इसके निधन से **रघुनाथराव** (राघोबा) के मन में विद्यमान अतिशय राजनीतिक महत्वाकांक्षा को पुनश्च बल मिला।

पेशवा माधवराव की असामयिक मृत्यु के पश्चात् पूना के दरबार में उसके छोटे भाई नारायणराव को, जो अल्पव्यस्क था, गद्दी पर बैठायागया। उस अल्पव्यस्क बालक और उसकी समव्यस्क पत्नी ने गद्दी पर बैठते समय अपनी अक्षमता को बड़े विनीत भाव से प्रकटकिया था। इससे सैन्य संचालन की श्रेष्ठतर

समझ रखनेवाला और उत्तरी भारत के व्यावहारिक ज्ञान में निपुण रघुनाथराव बहुत निराश हुआ। वह स्वयं को पेशवाई गद्दी के लिए उपयुक्त समझता था। ऐसा सोचना भी अनुपयुक्त न था।

शोध अध्ययन से रघुनाथराव के पक्ष में निष्कर्ष निकलता है कि यदि रघुनाथराव को पेशवा बनादियाजाता तो यही युक्तियुक्त लगता है कि उसके नेतृत्व में मराठा साम्राज्य की जड़ें एवं उसका विस्तार व प्रभाव और भी सशक्त होजाते। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। अतः उसका निराश होना और तदुपरान्त नारायणराव के विरुद्ध षड्यंत्र में लिप्तहोने की घटना को अधिक व्यावहारिक रूप से समझा जा सकता है। ऐसा जानपड़ता है कि पूना दरबार के ऐसे दरबारी जो केवल दरबारगत मामलों और लिखा–पढ़ी के तो महारथी थे किन्तु सैनिक अभियानों से जिनका वास्ता न था, रघुनाथराव के विरुद्ध थे।

अन्ततः, पारिवारिक कलह ने मराठा साम्राज्य को विनाश के कगार पर लाखड़ाकिया। पूना में षड्यंत्र रचे ज़ानेलगे और एक षड्यंत्र के द्वारा नारायण– राव का वध कर दियागया। इस षड्यंत्र में रघुनाथराव (राघोबा) की पूर्ण सहमति मानते हुए उसके विरुद्ध पूना दरबार के वे महारथी जिन्हें सामरिक अभियानों का ज्ञान शून्य ही था, किन्तु लिखा–पढ़ी के महारथी थे, रघुनाथराव के खुलकर विरोधी होगये। उन्होंने अपना गठजोड़ बनालिया जिसके कारण रघुनाथ राव को पूना छोड़कर भाग जानापड़ा। परिस्थितियों ने जनता को इस गठजोड़ के पक्ष में करदिया। वस्तुतः **बारभाई परिषद** का गठन इसी गठजोड़ का परिणाम

माना जा सकता है। बारभाई परिषद को पूना दरबार में सर्वसम्मति से भावी पेशवा का (नारायण के होनेवाले बच्चे का), जो अभी पैदा भी नहीं हुआ था और यह भी मालूम नहीं था कि वह लड़का होगा अथवा लड़की, संरक्षक बनादिया गया। यद्यपि मराठा साम्राज्य के भाग्यवश कालान्तर में नारायणराव की विधवा रानी ने एक पुत्र को जन्मदिया और बारभाई परिषद बालक पेशवा के संरक्षक के रूप में प्रशासनिक कार्य करनेलगी। वस्तुतः यह बारह मराठा सरदारों का गठजोड़ था। यद्यपि इस परिषद में नाना फड़नवीस एवं महादजी सिंधिया ने योग्यता एवं कूटनीति का परिचय देते हुए काफी हद तक मराठा साम्राज्य को अक्षुण्ण बनायेरखा। यही नहीं महादजी सिंधिया के नेतृत्व में मराठा उत्तरी भारत की मुख्य राजनीतिक शक्ति बनेरहे।

उत्तरी भारत में मराठों की महत्ता पेशवा बालाजी विश्वनाथ के 1719 में दिल्ली अभियान के समय से ही परिलक्षित होनेलगी थी। औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् उसके उत्तराधिकारी मुगल शासकों की अयोग्यता एवं निर्बलता के कारण मुगल दरबार न केवल षड्यंत्रों की गिरफ्त में था जिसके कारण मुगल साम्राज्य भीतर ही भीतर खोखला होताजारहा था बल्कि 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में नादिरशाह एवं उसके पश्चात् अहमदशाह अब्दाली के बारम्बार होनेवाले अभियानों ने मुगल साम्राज्य की इतिश्री ही कर दी। मराठे इस समय तक न केवल दक्षिण की प्रमुख शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित होचुके थे बल्कि इस समय तक उत्तरी भारत में भी उन्होंने सामरिक महत्ता प्राप्त करली थी।

अगस्त, 1757 ई0 में रघुनाथराव एवं मल्हारराव होल्कर के कुशल नेतृत्व में मराठा सेना ने अब्दाली के ऐजेन्ट नजीबुद्दौला को दिल्ली छोड़ने के लिये मजबूर करदिया। 1758 ई0 में रघुनाथराव के नेतृत्व में मराठे लाहोर जा पहुँचे, परिणाम स्वरूप अहमदशाह अब्दाली का पुत्र तैमूर जो पंजाब का गर्वनर था, जान–बचाकर भागगया तथा अटक तक का क्षेत्र मराठों के अधिकार में आगया। इस समय मराठों की शक्ति अपने सर्वोच्च शिखर पर थी। मराठों ने देश में अपनी विरोधी राजनीतिक शक्तियों रुहेलों आदि को शक्तिहीन करदिया था बल्कि स्वयं मुगल सम्राट को भी इन्होंने अपना संरक्षण प्रदान कररखा था। इस प्रकार रघुनाथ राव ने उत्तर भारत में मराठा अभियान का सफल नेतृत्वकिया। इस समय ऊपरी गंगा–यमुना दोआब से दत्ताजी सिंधिया ने नजीबुद्दौला के प्रभाव को समाप्त प्रायः ही करदिया।

1760 ई0 में दत्ताजी एवं साबाजी सिंधिया की मृत्यु होगयी। सदाशिवराव भाऊ की दम्भी एवं अहंकारी प्रवृति (यद्यपि उसमें साहसिक एवं सेनानायक के गुण विद्यमान थे) के कारण 1761 ई0 के पानीपत के तीसरे युद्ध में जाट राजा सूरजमल एवं मराठा योद्धा मल्हारराव होल्कर ने सक्रिय भाग नहीं लिया। इस महत्वपूर्ण युद्ध में मराठों की निर्णायक हार हुई। इस युद्ध ने उत्तरी गंगा–यमुना दोआब से मराठों का प्रभाव समाप्त करदिया।

हमारा यहाँ मत है कि यदि रघुनाथराव (राघोबा) को अब्दाली के विरुद्ध भाऊ के स्थान पर मराठा सेना का नेतृत्व दियागयाहोता तो सम्भवतया

पानीपत के तीसरे युद्ध का परिणाम मराठों के पक्ष में हो सकता था। ऐसा इस लिये माना जा सकता है कि रघुनाथराव इस क्षेत्र से पूर्ण परिचित था और उसने कुछ समय पूर्व उत्तर भारत में मराठा अभियान का सफल संचालनकिया था। दूसरी ओर भाऊ इस क्षेत्र से परिचित नहीं था तथा वह यहाँ कि क्षेत्रीय राजनीतिक शक्तियों विशेषतः सूरजमल का अफ़गान आक्रान्ता के विरुद्ध कूटनीतिकता के अभाव में सहयोग लेने में असमर्थरहा था। भाऊ ऊपरी गंगा–यमुना दोआब से परिचित होल्कर का भी सहयोग लेने में कामयाब न हो सका। मल्हारराव होल्कर को भी सर्वथा दोषमुक्त नहीं किया जा सकता है क्योंकि वह प्रमुख मराठा सरदार था। मराठा सेना की एक शक्तिशाली सैन्य टुकड़ी उसके नेतृत्व में थी तथा वह इस क्षेत्र से पूर्णतः परीचित भी था। पानीपत के तीसरे युद्ध में जिस समय उससे प्रत्यक्ष सहयोग की उपेक्षा की जानी थी वह न केवल तटस्थ ही रहा बल्कि युद्ध शुरू होने के कुछ समय पश्चात् ही सेना सहित राजपूताना की ओर भागनिकला। इसका प्रमुख कारण मल्हारराव की महत्वाकांक्षा या फिर उसकी कायरता को मानाजाना चाहिये।

मराठों की पानीपत के तीसरे युद्ध में पराज्य का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण मराठा सरदार दत्ताजी सिंधिया को रुहेलों के विरुद्ध पर्याप्त सफलता नहीं मिलपाना भी रहा। 15 सितम्बर, 1759 ई0 में ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में राजनीतिक उथल–पुथल के चलते दत्ताजी के नेतृत्व में मराठों का रुहेलों के साथ महत्वपूर्ण **शुक्रताल सैन्य संघर्ष** हुआ। इस संघर्ष में नजीबुद्दौला ने बड़ी

चालाकी एवं सूझ–बूझ का परिचयदिया। परिणामतः दत्ताजी सिंधिया का 5 महीनों का शुक्रताल–घेरा पूरी तरह व्यर्थ ही रहा। इसमें कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ बल्कि मराठों को उल्टे जन और धन की हानि ही हुई थी। दत्ताजी को असफल होकर घेरा उठानापड़ा था। इस प्रकार, ऊपरी गंगा–यमुना दोआब में नजीबुद्दौला की शक्ति एवं प्रभाव पूर्ववत् बनारहा और पानीपत के तीसरे युद्ध के समय अब्दाली की सेना के लिए रुहेलों ने निर्विघ्न रूप से खाद्य आपूर्ति की व्यवस्था बनायेरखी। साथ ही दत्ताजी सिंधिया एवं साबाजी सिंधिया की शीघ्र मृत्यु भी मराठों के लिए हानिकारक रही। ये दोनों मराठा नेता इस क्षेत्र से पूर्णतः परीचित थे।

कारण चाहे कुछ भी रहे हों, परन्तु वास्तविकता यह है कि पानीपत के युद्ध के पश्चात् ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र से मराठों का प्रभाव समाप्त प्रायः होगया तथा रुहेले यहाँ की प्रमुख राजनीतिक शक्ति के रूप में पुनः स्थापित होगये। अपने प्राणों के भय से आतंकित होकर मुगल बादशाह शाहआलम द्वितीय दिल्ली में आने का साहस ही नहीं कर सका तथा अगले 10 वर्ष उन्हें निर्वासित जीवन के रूप में व्यतीतकरनेपड़े। 1771 ई0 में मराठों का प्रभाव पेशवा माधवराव के कुशल नेतृत्व में एक बार पुनः उत्तरी भारत में स्थापित हुआ। इस समय तक रुहेला सरदार नजीबुद्दौला की भी मृत्यु होचुकी थी। यद्यपि इस समय में भी उसका पुत्र जाब्ता खाँ दिल्ली के किले में सर्वशक्तिशाली था।

1771 ई0 में मुगल सम्राट शाहआलम द्वितीय मराठों के संरक्षण में दिल्ली पुनः वापिस आये। इसमें महादजी सिंधिया ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका

निभायी थी। मुगल बादशाह ने कृतज्ञतावश उन्हें ऊपरी गंगा–यमुना दोआब में जागीर प्रदान की। इस क्षेत्र में पहले से ही रुहेलों का प्रभाव बनाहुआ था। परिणामतः एक बार पुनः यह क्षेत्र मराठों एवं रुहेलों के मध्य संघर्ष–प्रतिसंघर्ष का केन्द्र बिन्दु बनगया। मराठों ने रुहेलों के विरुद्ध सैन्य कार्यवाही की। रुहेला सरदार जाब्ता खाँ अपने पिता नजीब की भाँति कूटनीतिज्ञ न था। परिणामतः वह मराठों के समक्ष असफल रहा। मराठों से रुहेले इतने अधिक आतंकित होगये थे कि वे अपने घरों एवं सम्पति को छोड़कर जान बचाने के लिए तराई के जंगलों की ओर भागनिकले थे। 1772 में रुहेलों का मजबूत गढ़ **पत्थरगढ़ का किला** मराठों के अधिकार में आगया। मराठा शक्ति इस समय ऊपरी गंगा–यमुना दोआब में सर्वोच्च थी। मराठों ने इस क्षेत्र में अपने प्रमुख प्रतिद्वन्दी रुहेलों को निर्णायक रूप से पराजित करदिया था बल्कि मुगल सम्राट को भी अपना संरक्षण प्रदानकिया। 1784 में मुगल बादशाह ने भी महादजी की उपयोगिता को देखते हुए उन्हें **वकील–ए–मुतलक** जैसे महत्वपूर्ण पद पर आसीनकिया। **वकील–ए–मुतलक** पद पर आसीन होना महादजी सिंधिया की सैन्य प्रतिष्ठा की सर्वोच्च स्थिति का द्योतक था।

इस प्रकार ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र महादजी के प्रभाव में पूर्णतः आगया। महादजी की मृत्यु के पश्चात् यह क्षेत्र उसके दत्तक पुत्र दौलत राव सिंधिया के नियंत्रण में रहा। 1803 ई० की **सुरजी अन्जन गाँव की सन्धि** के

पश्चात् इस क्षेत्र की उपयोगिता को देखते हुए ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इसे हस्तगत करलिया।

इस प्रकार, निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र 18वीं शताब्दी में मराठों एवं क्षेत्रीय राजनीतिक शक्तियों के मध्य प्रतिद्वन्दिता का मुख्य आधार बनारहा। प्रत्येक शक्ति इस क्षेत्र की सामरिक उपयोगिता को देखतेहुए अपने प्रत्यक्ष नियंत्रण में रखने के लिए लालयित रही थी क्योंकि अत्यधिक उपजाऊ होने के कारण यह क्षेत्र धनाढ्य था तो दूसरी ओर दिल्ली के निकट होने के कारण यहाँ से केन्द्रीय राजनीति को प्रभावित किया जा सकता था।

यहाँ इस तथ्य का भी उल्लेख करना समीचीन रहेगा कि महादजी सिंधिया ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में अन्य मराठा सरदारों से अधिक प्रभाव छोड़ने में सफल रहे। **फ़ील्ड वर्क** के समय शोधकर्ता के समक्ष यह तथ्य आया कि मौखिक इतिहास में महादजी सिंधिया आज भी जीवित है। उनसे सम्बन्धित अनेक किंवदन्तियाँ वर्तमान में भी चलीआरही हैं। सम्भवतः इसका कारण यह है कि एक दीर्घकाल तक उनका प्रभाव इस क्षेत्र पर बनारहा, दूसरे यहाँ पर मराठों द्वारा निर्मित स्मारकों में से अनेक स्मारक ऐसे हैं जो वर्तमान में भी विद्यमान हैं यद्यपि इनमें से अनेक स्मारक उपेक्षा के चलते जीर्ण–शीर्ण अवस्था में हैं।

वस्तुतः, पुरातत्व का ऐतिहासिक स्रोतों में महत्वपूर्ण स्थान है। ऊपरी गंगा–यमुना दोआब क्षेत्र में मराठों द्वारा यहाँ विभिन्न स्थानों पर निर्मित स्मारक भी इस क्षेत्र में मराठा प्रभाव को स्पष्ट रूप से परिलक्षित करते हैं।

सन्दर्भ सूची

सन्दर्भ सूची

Anonymous: *Delhi Chronicle*, Described by Jadunath Sarkar in Proceedings of the Indian Historical Records Commission, Vol. II. 1921. A Diary of events written in Delhi from 1738 to 1798.

Anonymous: *Tarikh-i-Alamgir Shahi*, British Museum Persian Manuscript Of 1749. Sir Henry M. Elliot's Manuscript (Elliot & Dowson, VIII, 140).

Ansari Muhammad Ali Khan : *Tarikh-i-Muzaffari*. Elliot 316; Patna O.P.L. Manuscript. It was written in 1800.

Apte, D.V. (ed.): *Chandrachur Daftar*. Vol. 1, 1920.

Atkinson Edward: *Statistical, Descriptive and Historical Account of the North-Western Provinces of India*. 14 Vols. Allahabad, 1875-94.

Bilgrami, Mir Ghulam Ali Azad: *Khazina-i-Amina*. Litho, Lucknow. 1763.

Dongre, K.B. (ed.): *Chandrachur Daftar*. Volume Two, 1934.

Foster, George : *A Journey from Bengal to England, through the Northern Part of India, Kashmere, Afghanistan and Persia and into Russia by the Caspian Sea.* London, 1798.

Ghulam Ali : *Muqaddamah-i-Shah Alam Namah,* Volume One: upto 1761; Bibliotheca Indica, Calcutta; Volume Two & Three from India Office Library Manuscript . (Elliot & Dowson, 393).

Gulistani, Ibn Muhammad Amin Abdul Hasan: *Mujmil-ut-tawarikh bad adiriya.* Ed. Dr. Oskar Mann, Leyden. 1896.

Gupta, Hari Ram : *Studies in the Later Mughal History of the Panjab.* Lahore. 1944.

Al Husaini, Sayyid Imam-u-ddin : *Tarikh-i-Husain Shahi.* Patna O.P.L. Manuscript. It was written in 1797-98. IRVINE, WILLIAM *Indian Antiquary.* 1907. KALE, G.R. *Akhbarat.* Newsletters from G.R. Kale, The Peshwa's agent at the Nizam's Court, from 1782 onwards.

Kale & Sardesai (ed.) : *Aitihasik Patren Yadi Wagaire.* 2nd edn. 1930.

Kashiraj Shivrao Pandit: *An account of the Battle of Panipat and preceding events, in Persian* written in 1870. The manuscript used was copied in 1875, probably for Col.

Browne, This author's version appeared in *Indian Historical Quarterly*, 1934-35.

Khair-u-ddin Muhammad, Fakir : *Ibratnamah,* Elliot & Dowson. 237,O.P.L.Manuscript. Asiatic Society of Bengal Manuscript. 1806.

Khan, Ali Muhammad : *Mirat-i-Ahma.* 4L 3 Vols. Gaekwad Oriental Series, Baroda, 1927-39. It ends in 1761.

Khan, Mustajab : *Gulistai-i-Rahmat*. Elliot 301; the English translation by C. Elliot, 1831. It was written in 1792.

Khan Sayyid Nur-u-ddin Husain : *Life of Najilr-u-ddaulah*. British Museum Persian Manuscript 24410, Translated by this author in *Indian Historical Quarterly and Islamic Culture*, 1933.

Khare, V.V. & Y.V. Khare (ed.) : *Aitihasik Lekh Sangraha*. 15 vols. This covers the period 1739-1810.

Miskin, Tahmasp Khan : (Titles : Muhakam-u-ddaulah, ltiqad Jang: penname: Miskin). *Memories*. Elliot 100; Br. Mus. Pers. 8807 from folio 62b, before that Nawab Sadar Yar Jang's fragmentary manuscript cited. 1780.

Munalal : *Tarikh-i-Shah Alam.* Elliot & Dowson 394. Litho. Lucknow. 1807.

Naqavi, Sayyid Ghulam Ali : *Imoo-us-Sadat*. Elliot & Dowson, 394. Litho. Lucknow. 1807.

Parasnis, D.B. : *Aitihasik Tipne*. Published in his magazine, *'Itihas Sangraha'*.

Parasnis, D.B. (ed.): *Dilli-yethil Marathyanchin Roj-Karanen*. 2 vols. & supplement, 1913-14. Dispatches of Bapurao Mahadev Hingane and other Maratha envoys at Delhi. This was completed by *Hingane Daftar* in two volumes.

Phalke, A.B. : *Shinde-shahi Itihasanchi Sadhanen.* 4 vols. 1929-37. Three of the volumes are from the *Gulgule Daftar*.

QANUNGO, K.R. : *History of the Jats.*

Rajwade, V.K. & Others (ed.): *Marathanthya Itihasanchi Sadhanen.* 21 vols.

Sardesai, G.S.(ed.): *Selections from the Peshwa Daftar*, 45 Vols. Bombay Government Press.

Shamlu, Muhammad Jafar : *Manazil-ul-jatuh*. British Museum Persian Manuscript Of 1895. Elliot & Dowson, 144.

Sudan : *Sujan Charitra* or *the life of Suraj Mal Jat*. 2nd edn. Nagari Prach. Sabha, Benares. This covers seven episodes for the year, 1745-53.

Thakur, B.B. (ed.): *Holkar Shahichya Itihasanchi Sadhanen*. 2 vols. 1944-45.

Poona Residency Correspondence (PRC) Edited by Jadunath Sarkar, Vol. I 1930, Vol. VIII . 1945, Vol. XIV 1949, All volumes printed at Bombay.

Alam, Muzaffar : *The Crisis of Empire in Mughal India*. Delhi. 1986.

Barnett, Richard B. : *North India between Empires*. Berkeley. 1980.

CHANDRA, SATISH : *The Eighteenth Century in India: Its Economy and the Role of the Marathas, the Jats, the Sikhs and the Afghans*. Calcutta. 1986.

Parties and Politics of the Mughal Court. 1107- 40. Aligarh. 1959. 3rd Edn. Delhi. 1982.

Habib Irfan : *The Agrarian System of Mughal India. 1556 - 1707.* Bombay. 1963.

Atlas of the Mughal Empire. Delhi 1982.

Hasan, S. Nurul : *Thoughts on Agrarian Relations in Mughal India.* Delhi. 1973. Reprint, 1984.

Malik, Zahiruddin : *The Reign of Muhammad Shah. 1719 - 1748.* Bombay. 1977.

Keene, H.G : *The Fall of the Moghul Empire*. Reprint, Delhi. 1971.

NIJJAR, B.S : *Punjab under the Later Mughals*. Jalandhar. 1973.

PRASAD, ISHWARI : *India in the Eighteenth Century*. Allahabad. 1973.

The Mughal Empire. Allahabad. 1974.

SARDESAI, G.S. : *New History of the Marathas*. 3 vols. Bombay.1957.

Spear, T.G.P. : *Twilight of the Moghuls.* Cambridge. 1951.

JADUNATH SARKAR : *History of Aurangzeb.* Vols. I & II: July 1912; Vol.III: 1916; Vol. November 1919; Vol. V. 1924. All volumes printed at Calcutta.

Studies in Mughal India. Calcutta. October 1919.

Mughal Administration. First Series: Calcutta. 1920; Second Series : Calcutta. 1925;

Combined Volume : Calcutta. 1975.

Later Mughals, 1707-1739. Vols. I & II, 1922. Written by W. Irvine, and edited and continued by Jadunath Sarkar.

India Through the Ages. Calcutta. 1928.

Fall of the Mughal Empire. Vol. I : 1932;

Vol. II: 1934; Vol. III: 1938; Vol. IV: May 1950.

All volumes printed at Calcutta.

Studies in Aurangzeb's Reign. Calcutta. 1933.

House of Shivaji. Calcutta. May 1940.

Maasir-i-Alamgiri. Calcutta. October, 1947. Written by Saqi Mustaid Khan, translated into English by Jadunath Sarkar.

Cambridge History of India. Vol. IV. 1947. Four chapters edited by Jadunath Sarkar.

Persian records of Maratha History. Vol. I & VII, Bombay. 1953; Vol. II: Bombay. 1954. Translated into English by Jadunath Sarkar

Military History of India. Calcutta. 1960.

Elliot & Dowson: *The History of India as told by its own Historians.*

Ishwari Prashad : *History of Medieval India.*

Abul Fazal : *The Akbarnama.*

Keen.H.G. : *Sindhia otherwise Madhoji Patel*

A.L.Shrivastava : *Suzzaudaolla.*

H.N.Sinha : *Rise of the Peshwas.*

Indian Historical Quarterly, 1934-35.

Historical Papers relating to Mahadji Sindhia, Vol. I

S.R.Sharma : *The Religious policy of Mughal Emperors.*

The Crescent in India.

B.B. Lal : *Excavations at Hastinapur & Upper Exploration in the Upper Ganga & Satluj Basin, 1950 -1952. Ancient India.*

सैयद नज़्मुल रज़ा रिज़वी : ''अठारहवीं सदी के जमींदार'', प्युपिल्स पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, 1988 ।

ए0 फूहरर : ''दि मोन्युमेन्टल ऐन्टीक्वीटीज़ ऐण्ड इन्सक्रिप्शन्स इन दि नॉर्थ वेस्टर्न प्रोविंसिज़ ऑफ़ आगरा ऐण्ड अवध''. इलाहाबाद. 1891 ।

कृष्णदत्त शर्मा (सं0): ''मयराष्ट्र मानस'', सरस्वती प्रेस, मेरठ, 1972 ।

डॉ0 विघ्नेश कुमार : ''मेरठ के पाँच हजार वर्ष'', हस्तिनापुर शोध संस्थान, मेरठ, 1996।

''गाजियाबाद के चार हजार वर्ष'', हस्तिनापुर शोध संस्थान, मेरठ, 2006 ।

डी0 सी0 सरकार : ''इन्सक्रिप्शन्स ऑफ़ अशोक'', दिल्ली, 1957 ।

राय चौधरी : ''पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया'' ।

जगदीश चन्द जैन : ''भारत के प्राचीन तीर्थ'' ।

"दि हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ़ द इण्डियन प्युपिल", जिल्द II .

"ए कम्प्रिहैन्सिव हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया", जिल्द II .

"ए कम्पलीट हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया", जिल्द II .

शम्से सिराज़ अफ़ीफ़ : "*तारीख़–ए–फ़िरोज़शाही*" ।

याहिया बिन अहमद सरहिन्दी : "*तारीख़–ए–मुबारकशाही*", अनुवाद रिज़वी ।

बदायूनी : "मुन्तखाब–उत्–तवारीख़" ।

"तुजुक–ए– जहाँगीरी" ।

"स्कन्दपुराण" : भीम–युधिष्ठिर संवाद।

"महाभारत" : वन पर्व , अजगर पर्व।

प्रयागस्तम्भ ।

इन्दौरताम्रपत्र ।

बाण भट्ट : "हर्ष चरित" ।

ई0 बी0 जोशी : उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, मेरठ खण्ड, सातवाँ संस्करण, लखनऊ, 1965 ।

ऐच0 आर0 नेविल : डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर ऑफ़ द यूनाईटिड प्रोविन्सिज़ ऑफ़ आगरा ऐण्ड अवध ।

मेरठ डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर ऑफ इण्डिया।

18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उत्तर भारत में मराठा प्रभाव

(ऊपरी गंगा – यमुना दोआब के विशेष सन्दर्भ में)

चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

की

पी–एच0 डी0 उपाधि हेतु

प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

निर्देशक :

डॉ0 विघ्नेश कुमार

M.A., M.Phil. (Gold Medalist)
Ph.D. RES (Ex)

रीडर, इतिहास विभाग

मेरठ कॉलिज, मेरठ

शोधार्थी :

राजेन्द्र कुमार गुप्ता

M.A. (History), LL.B.

सन्दर्भ सूची

सन्दर्भ सूची

Anonymous: *Delhi Chronicle*, Described by Jadunath Sarkar in Proceedings of the Indian Historical Records Commission, Vol. II. 1921. A Diary of events written in Delhi from 1738 to 1798.

Anonymous: *Tarikh-i-Alamgir Shahi*, British Museum Persian Manuscript Of 1749. Sir Henry M. Elliot's Manuscript (Elliot & Dowson, VIII, 140).

Ansari Muhammad Ali Khan : *Tarikh-i-Muzaffari*. Elliot 316; Patna O.P.L. Manuscript. It was written in 1800.

Apte, D.V. (ed.): *Chandrachur Daftar*. Vol. 1, 1920.

Atkinson Edward: *Statistical, Descriptive and Historical Account of the North-Western Provinces of India*. 14 Vols. Allahabad, 1875-94.

Bilgrami, Mir Ghulam Ali Azad: *Khazina-i-Amina*. Litho, Lucknow. 1763.

Dongre, K.B. (ed.): *Chandrachur Daftar*. Volume Two, 1934.

Foster, George : *A Journey from Bengal to England, through the Northern Part of India, Kashmere, Afghanistan and Persia and into Russia by the Caspian Sea.* London, 1798.

Ghulam Ali : *Muqaddamah-i-Shah Alam Namah*, Volume One: upto 1761; Bibliotheca Indica, Calcutta; Volume Two & Three from India Office Library Manuscript . (Elliot & Dowson, 393).

Gulistani, Ibn Muhammad Amin Abdul Hasan: *Mujmil-ut-tawarikh bad adiriya.* Ed. Dr. Oskar Mann, Leyden. 1896.

Gupta, Hari Ram : *Studies in the Later Mughal History of the Panjab.* Lahore. 1944.

Al Husaini, Sayyid Imam-u-ddin : *Tarikh-i-Husain Shahi.* Patna O.P.L. Manuscript. It was written in 1797-98. IRVINE, WILLIAM *Indian Antiquary.* 1907. KALE, G.R. *Akhbarat.* Newsletters from G.R. Kale, The Peshwa's agent at the Nizam's Court, from 1782 onwards.

Kale & Sardesai (ed.) : *Aitihasik Patren Yadi Wagaire*. 2nd edn. 1930.

Kashiraj Shivrao Pandit: *An account of the Battle of Panipat and preceding events, in Persian* written in 1870. The manuscript used was copied in 1875, probably for Col.

Browne, This author's version appeared in *Indian Historical Quarterly*, 1934-35.

Khair-u-ddin Muhammad, Fakir : *Ibratnamah,* Elliot & Dowson. 237,O.P.L.Manuscript. Asiatic Society of Bengal Manuscript. 1806.

Khan, Ali Muhammad : *Mirat-i-Ahma.* 4L 3 Vols. Gaekwad Oriental Series, Baroda, 1927-39. It ends in 1761.

Khan, Mustajab : *Gulistai-i-Rahmat*. Elliot 301; the English translation by C. Elliot, 1831. It was written in 1792.

Khan Sayyid Nur-u-ddin Husain : *Life of Najilr-u-ddaulah*. British Museum Persian Manuscript 24410, Translated by this author in *Indian Historical Quarterly and Islamic Culture*, 1933.

Khare, V.V. & Y.V. Khare (ed.) : *Aitihasik Lekh Sangraha*. 15 vols. This covers the period 1739-1810.

Miskin, Tahmasp Khan : (Titles : Muhakam-u-ddaulah, ltiqad Jang: penname: Miskin). *Memories*. Elliot 100; Br. Mus. Pers. 8807 from folio 62b, before that Nawab Sadar Yar Jang's fragmentary manuscript cited. 1780.

Munalal : *Tarikh-i-Shah Alam.* Elliot & Dowson 394. Litho. Lucknow. 1807.

Naqavi, Sayyid Ghulam Ali : *Imoo-us-Sadat*. Elliot & Dowson, 394. Litho. Lucknow. 1807.

Parasnis, D.B. : *Aitihasik Tipne*. Published in his magazine, *'Itihas Sangraha'*.

Parasnis, D.B. (ed.): *Dilli-yethil Marathyanchin Roj-Karanen*. 2 vols. & supplement, 1913-14. Dispatches of Bapurao Mahadev Hingane and other Maratha envoys at Delhi. This was completed by *Hingane Daftar* in two volumes.

Phalke, A.B. : *Shinde-shahi Itihasanchi Sadhanen.* 4 vols. 1929-37. Three of the volumes are from the *Gulgule Daftar*.

QANUNGO, K.R. : *History of the Jats.*

Rajwade, V.K. & Others (ed.): *Marathanthya Itihasanchi Sadhanen.* 21 vols.

Sardesai, G.S.(ed.): *Selections from the Peshwa Daftar*, 45 Vols. Bombay Government Press.

Shamlu, Muhammad Jafar : *Manazil-ul-jatuh*. British Museum Persian Manuscript Of 1895. Elliot & Dowson, 144.

Sudan : *Sujan Charitra* or *the life of Suraj Mal Jat*. 2nd edn. Nagari Prach. Sabha, Benares. This covers seven episodes for the year, 1745-53.

Thakur, B.B. (ed.): *Holkar Shahichya Itihasanchi Sadhanen*. 2 vols. 1944-45.

Poona Residency Correspondence (PRC) Edited by Jadunath Sarkar, Vol. I 1930, Vol. VIII . 1945, Vol. XIV 1949, All volumes printed at Bombay.

Alam, Muzaffar : *The Crisis of Empire in Mughal India*. Delhi. 1986.

Barnett, Richard B. : *North India between Empires*. Berkeley. 1980.

CHANDRA, SATISH : *The Eighteenth Century in India: Its Economy and the Role of the Marathas, the Jats, the Sikhs and the Afghans*. Calcutta. 1986.

Parties and Politics of the Mughal Court. 1107- 40. Aligarh. 1959. 3rd Edn. Delhi. 1982.

Habib Irfan : *The Agrarian System of Mughal India. 1556 - 1707.* Bombay. 1963.

Atlas of the Mughal Empire. Delhi 1982.

Hasan, S. Nurul : *Thoughts on Agrarian Relations in Mughal India.* Delhi. 1973. Reprint, 1984.

Malik, Zahiruddin : *The Reign of Muhammad Shah. 1719 - 1748.* Bombay. 1977.

Keene, H.G : *The Fall of the Moghul Empire*. Reprint, Delhi. 1971.

NIJJAR, B.S : *Punjab under the Later Mughals*. Jalandhar. 1973.

PRASAD, ISHWARI : *India in the Eighteenth Century*. Allahabad. 1973.

The Mughal Empire. Allahabad. 1974.

SARDESAI, G.S. : *New History of the Marathas*. 3 vols. Bombay.1957.

Spear, T.G.P. : *Twilight of the Moghuls.* Cambridge. 1951.

JADUNATH SARKAR : *History of Aurangzeb.* Vols. I & II: July 1912; Vol.III: 1916; Vol. November 1919; Vol. V. 1924. All volumes printed at Calcutta.

Studies in Mughal India. Calcutta. October 1919.

Mughal Administration. First Series: Calcutta. 1920; Second Series : Calcutta. 1925;

Combined Volume : Calcutta. 1975.

Later Mughals, 1707-1739. Vols. I & II, 1922. Written by W. Irvine, and edited and continued by Jadunath Sarkar.

India Through the Ages. Calcutta. 1928.

Fall of the Mughal Empire. Vol. I : 1932;

Vol. II: 1934; Vol. III: 1938; Vol. IV: May 1950.

All volumes printed at Calcutta.

Studies in Aurangzeb's Reign. Calcutta. 1933.

House of Shivaji. Calcutta. May 1940.

Maasir-i-Alamgiri. Calcutta. October, 1947. Written by Saqi Mustaid Khan, translated into English by Jadunath Sarkar.

Cambridge History of India. Vol. IV. 1947. Four chapters edited by Jadunath Sarkar.

Persian records of Maratha History. Vol. I & VII, Bombay. 1953; Vol. II: Bombay. 1954. Translated into English by Jadunath Sarkar

Military History of India. Calcutta. 1960.

Elliot & Dowson: *The History of India as told by its own Historians.*

Ishwari Prashad : *History of Medieval India.*

Abul Fazal : *The Akbarnama.*

Keen.H.G. : *Sindhia otherwise Madhoji Patel*

A.L.Shrivastava : *Suzzaudaolla.*

H.N.Sinha : *Rise of the Peshwas.*

Indian Historical Quarterly, 1934-35.

Historical Papers relating to Mahadji Sindhia, Vol. I

S.R.Sharma : *The Religious policy of Mughal Emperors.*

The Crescent in India.

B.B. Lal : *Excavations at Hastinapur & Upper Exploration in the Upper Ganga & Satluj Basin, 1950 -1952. Ancient India.*

सैयद नज़्मुल रज़ा रिज़वी : "अठारहवीं सदी के जमींदार", प्युपिल्स पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, 1988 ।

ए0 फूहरर : "दि मोन्युमेन्टल ऐन्टीक्वीटीज़ ऐण्ड इन्सक्रिप्शन्स इन दि नॉर्थ वेस्टर्न प्रोविंसिज़ ऑफ़ आगरा ऐण्ड अवध". इलाहाबाद. 1891 ।

कृष्णदत्त शर्मा (सं0): "मयराष्ट्र मानस", सरस्वती प्रेस, मेरठ, 1972 ।

डॉ0 विघ्नेश कुमार : "मेरठ के पाँच हजार वर्ष", हस्तिनापुर शोध संस्थान, मेरठ, 1996।

"गाजियाबाद के चार हजार वर्ष", हस्तिनापुर शोध संस्थान, मेरठ, 2006 ।

डी0 सी0 सरकार : "इन्सक्रिप्शन्स ऑफ़ अशोक", दिल्ली, 1957 ।

राय चौधरी : "पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया" ।

जगदीश चन्द जैन : "भारत के प्राचीन तीर्थ" ।

''दि हिस्ट्री ऐण्ड कल्चर ऑफ़ द इण्डियन प्युपिल'', जिल्द II .

''ए कम्प्रिहैन्सिव हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया'', जिल्द II .

''ए कम्पलीट हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया'', जिल्द II .

शम्से सिराज़ अफ़ीफ़ : ''*तारीख़–ए–फ़िरोज़शाही*'' ।

याहिया बिन अहमद सरहिन्दी : ''*तारीख़–ए–मुबारकशाही*'', अनुवाद रिज़वी ।

बदायूनी : ''मुन्तखाब–उत्–तवारीख़'' ।

''तुजुक–ए– जहाँगीरी'' ।

''स्कन्दपुराण'' : भीम–युधिष्ठिर संवाद।

''महाभारत'' : वन पर्व , अजगर पर्व।

प्रयागस्तम्भ ।

इन्दौरताम्रपत्र ।

बाण भट्ट : ''हर्ष चरित'' ।

ई0 बी0 जोशी : उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, मेरठ खण्ड, सातवाँ संस्करण, लखनऊ, 1965 ।

ऐच0 आर0 नेविल : डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर ऑफ़ द यूनाईटिड प्रोविन्सिज़ ऑफ़ आगरा ऐण्ड अवध ।

मेरठ डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर ऑफ इण्डिया।